॥२१७॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-महाबीर

राजगीर (बिहार)

महाबीर बिनवउँ हनुमाना। राम जासु जस आप बखाना।।
महाबीर बिक्रम बजरंगी। कुमति निवार सुमति के संगी।।

|| रामकथा ||
मानस-महाबीर

मोरारिबापू
राजगीर (बिहार)
दिनांक : १९-०३-२०१६ से २७-०३-२०१६
कथा-क्रमांक : ७९१

प्रकाशन :
अगस्त, २०१७

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

भगवान महावीर स्वामी की साधना-स्थली 'राजगीर' (बिहार) में 'वीरायतन' के पावन परिसर में दिनांक १९-३-२०१६ से २७-३-२०१६ दरमियान मोरारिबापू की रामकथा सम्पन्न हुई। जहां भगवान महावीरस्वामी ने चौदह चातुर्मास किये है ऐसी तपोभूमि पर गायी गई इस रामकथा 'मानस-महाबीर' विषय पर केन्द्रित हुई। तुलसीदर्शन में हनुमानजी के संदर्भ में प्रयुक्त 'महाबीर' शब्द के परिप्रेक्ष्य में बापू ने इस कथा अन्तर्गत श्री हनुमानजी और महावीर प्रभु दोनों की महावीरता को साधार रेखांकित की।

बापू ने धर्मवीर, बलवीर, दानवीर और क्षमावीर जैसे चार प्रकार के वीरों का परिचय दिया और ऐसा सूत्रपात भी किया कि भगवान महावीर में धर्मवीरता, बलवीरता, क्षमावीरता और दानवीरता है।

'मेरा हनुमंत स्वयं अरिहंत है।' ऐसे सूत्रात्मक निवेदन के साथ बापू ने कहा कि अरिहंत उसको कहते हैं जो भीतर के शत्रुओं को मार दे। और हनुमानजी ने भीतर के शत्रु को मारे कि नहीं? आप लीलाक्षेत्र देखेंगे तो युद्ध में हनुमानजी राक्षसों को मारते हैं। हनुमान ने लंका जलाई वो तो हिंसा का दृश्य दिखाई देता है, लेकिन लंका स्थूल रूप में एक ऐतिहासिक नगरी को छोड़ दो; ये आध्यात्मिक नगरी है। अत्यंत प्रवृत्ति का नाम लंका है और जो अत्यंत प्रवृत्ति को जलाकर निवृत्ति में चला जाय वो अरिहंत नहीं तो कौन?

मोरारिबापू ने महावीर स्वामी के 'उत्तराध्ययनसूत्र' एवम् श्रीमद् राजचंद्र के 'आत्मस्थिति' जैसे ग्रंथों में प्रकट उन महापुरुषों के वचनों का भी यथावकाश स्मरण किया। महावीर स्वामी ने बताये हुए ज्ञान, दर्शन, चारित्र्य और तप जैसे सुगति के चार मार्ग का बापू ने विशद विश्लेषण किया। तदुपरांत श्रीमद् राजचंद्र द्वारा निर्दिष्ट दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग और वैराग्य जैसे मुमुक्षु के सात तत्त्वों का 'रामचरित मानस' में जो जिक्र किया गया है उसको भी उद्घाटित किया।

कथा के आखिरी दिन बापू ने कहा कि थोड़े दिनों में महावीर प्रभु का जन्मदिन आता है। मैं तो 'वीरायतन' में बर्थ डे गिफ्ट देने आया हूं। एडवान्स में नव दिन की कथा ये बर्थ डे गिफ्ट है। और महावीर जयंती के उपलक्ष्य में बापू ने 'वीरायतन' में गायी गई इस रामकथारूपी प्रेमयज्ञ का पुण्य-सुफल महावीर स्वामी के चरणों में समर्पित किया।

भगवान महावीर स्वामी के साधना-तीर्थ में 'मानस-महाबीर' के माध्यम से बापू की व्यासपीठ से यूं महावीर-दर्शन और तुलसी-दर्शन की समान्तर धारा बहती रही।

– नीतिन वडगामा

भगवान महावीर में धर्मवीरता, बलवीरता, क्षमावीरता और दानवीरता है

महाबीर बिनवउँ हनुमाना। राम जासु जस आप बखाना।।
महाबीर विक्रम बजरंगी। कुमति निवार सुमति के संगी।।

बाप! बिहार की कई प्रकार से इस पावन धरती पर राजगीर धाम में 'वीरायतन' के आशीर्वादक आंगन में नव दिन के लिए कथा का आरंभ हो रहा है तब भगवान महावीर प्रभु की इस परम चेतना को प्रणाम करते हुए और यहां कितनी-कितनी चेतनाएं प्रगट-अप्रगट है, इन सभी चेतनाओं को प्रणाम करते हुए; जिसने एक मातृहृदय के वात्सल्य से इस कथा 'वीरायतन' के आंगन में हो इसके लिए बहुत प्रसन्नता के साथ आशीर्वाद प्रदान किये हैं ऐसी इस 'वीरायतन' की अधिष्ठात्री परम पूजनीया आचार्या, मुझे नाम लेने में संकोच हो रहा है; मातुश्री के चरण में मेरे प्रणाम। साथ-साथ भगवान महावीर का संदेश लेकर जीवन में उतारकर निजी साधना करते हुए, सभी पूजनीया साध्वीगण, संतगण; सनातन धर्म के कई वरिष्ठ और पूजनीय संतगण यहां विराजमान है; सभी संतों को मेरा प्रणाम। और मुझे बड़ी प्रसन्नता तो ये है कि राजगीर, जहां कभी कुछ समय के लिए षष्ठम् पीठाधीश्वर परमपूज्य विष्णुदेवानंदगिरिजी महाराज भी यहां कैलास-तीर्थ में आया करते थे क्योंकि ऋषिकेश की ये शाखा है। और विद्यानंदगिरिजी की तो ये जन्मभूमि भी और तपस्या की भूमि भी है। तो उसकी चेतना को भी मैं प्रणाम करूं। बिहार प्रांत के मुख्यमंत्री माननीय नीतिशकुमारजी पधारे। राजपीठ ने व्यासपीठ को आदर दिया। ये आपका कर्तव्य भी है और आपका बड़प्पन भी है। और आपने ये दायित्व भलीभांति निभाया। आपने कहा कि आपको बेहद खुशी है कि रामकथा के प्रथम दिन मैं यहां आ सका और मैं कहूं कि हमें अनहद खुशी है कि भगवान महावीर स्वामी की इस भूमि पर और तथागत बुद्ध और किन-किन चेतनाओं का मैं नाम लूं? ऐसी भूमि में हम आये हैं। और मूल में तो मेरी माँ जानकी की भूमि है।

जनक सुता जग जननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।

तो, माँ जानकी की भूमि में आने की हमें बेहद प्रसन्नता है। उन्होंने जो कुछ बातें कही कि मैं पूजा का आदमी नहीं, मैं तो कर्म को पूजा मानता हूं। और लोगों ने जो प्यार दिखाया और मैं राज्य की सेवा में लगा हूं और आपने कहा कि पूरी तन्मयता से पूरे दिल से मैं लोगों की सेवा कर सकूं। हम तो ओर क्या करें मुख्यमंत्रीश्री, आप और आपकी सरकार को मेरा हनुमान बहुत बल प्रदान करे कि ये बल का फल बिहार की आखिरी व्यक्ति तक पहुंचे। और आपकी सेवा का फल बिहार को, राष्ट्र को प्राप्त हो, ऐसी हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करता हूं।

माँ! आपका नाम लेना मेरे लिए मुश्किल है! और क्या कहूं? मैं राजु को पूछ रहा था, कैसे संबोधन करूं? मैं जब कल आया, पहले प्रणाम करने गया, राजु ने मुझे बताया कि आचार्यों ने इतना सहयोग किया है कि बापू, 'वीरायतन' में ही कथा करें। और मैं मेरे दिल की बात कहूं कि मैं कहां कथा करूंगा, वो खबर नहीं, लेकिन भगवान महावीर प्रभु की किसी भी विशेष भूमि पर मुझे एक रामकथा गानी थी। ये मेरा शिवसंकल्प था। वो पावापुरी में हो; निर्वाण, जन्मस्थान सब यहां है। लेकिन मुझे लगता है, घूम-घूम कर बात ये 'वीरायतन' में आयी। चौदह चातुर्मास भगवान ने यहां और पहाड़ में किये। ये महावीर स्वामी की बड़ी साधना-स्थली है। ये पूरा पहाड़; मुझे बहुत अच्छा आपने निवास दिया, जिससे मैं देखता हूं तो मुझे लगता है कि मैं अरुणाचल में हूं कि गिरनार में हूं कि यहां हूं? और ये भी परमात्मा की ही इच्छा है कि मैं सीधा गिरनार से राजगीर में आ रहा हूं! और अभी-अभी हमारे आदरणीय

मुख्यमंत्रीश्री कह रहे थे कि विशेषज्ञों से हमने जानकारी प्राप्त कि तीन हजार करोड या तो इससे भी ज्यादा करोड की बातें हो सकती है! इतना प्राचीन ये पर्वत है! ये पर्वत को क्या कहूं? ये साक्षात् महावीर प्रभु विराजमान है। इसको पर्वत क्यों कहे? इसकी अचलता तो महावीर स्वामी की है। ये स्थैर्य तो भगवान का है।

तो अस्तित्व ने ये स्थान चुना। मेरा मनोरथ था कि एक बार महावीर स्वामी के स्थान में कथा गानी है। जैसे मैंने बुद्ध के स्थान में कथा गाई। कभी जिसस के स्थान में कथा गाई। कभी कहीं, कभी कहीं। हरेक बुद्धपुरुष के पास मेरी व्यासपीठ जाये और गाये; ये मेरा अनुष्ठान, ये मनोरथ। और माताजी, आपने प्रज्ञानंदजी महाराज का स्मरण किया; मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। और आपकी परंपरा में 'रामायण' हैं और आप इतनी सेवा में लगी हो! मैंने पावापुरी में कोलेज, स्कूल ये सब देखा। सब जगह स्वच्छता, सात्त्विकता ज्यादा लग रही है। स्वच्छता तो कोई भी झाड़ू लेकर फोटो खींचवा लेता है! पर सात्त्विकता ज्यादा नज़र आयी। हम पहली बार आये और मैं तो सच कहूं तो चाय पीनी थी, पर मुझे लगा कि जैन समाज में चाय कैसे मांगे? लेकिन आपने कहा, चाय पीये बिना आप जाओगे ही नहीं। और चाय क्या, भजिया भी आया! हमको लगा कि यहां हमारी जम सकती है, क्योंकि माँ के दरबार में आये हैं। आप सब कुछ छोड़कर साधना और तप करने के लिए संसार छोड़कर उतरी थी, लेकिन तपस्या की संपदा प्राप्त करके आखिरी व्यक्ति की सेवा में आप लगी है। आपके इस मंगल भाव, संकल्प और कार्य को मैं नमन करता हूं। मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

कथा के आरंभ में साध्वीजी ने सुंदर कंठ से, सुंदर भाव से नवकार मंत्र का पठन किया, जो सिद्ध और शुद्ध दोनों है। मेरी समझ में नवकार मंत्र सिद्ध भी है और शुद्ध भी। कोई मंत्र सिद्ध होते हैं, शुद्ध नहीं होते, याद रखना। मैं अध्यात्मक्षेत्र का यात्री हूं। इन चेतनाओं की कृपा से घूमता रहता हूं। कई मंत्र उपासक देखे हैं। कोई साधना पद्धति का नाम लेना नहीं चाहता, लेकिन उनके मंत्र सिद्ध तो होते हैं, शुद्ध नहीं होते! मंत्र का शुद्ध होना और सिद्ध होना ये दोनों इस नवकार मंत्र में समाहित है। सुंदर श्रद्धा और भाव से उसका गायन हुआ। वेद और उपनिषद के मंत्रों का भी गायन हुआ और सुंदर स्वर में राम का पद भी आपने सुना दिया। बड़ी प्रसन्नता हुई। मुझे गाता हुआ धर्म अच्छा लगता है। जो केवल चीड़-चीड़ करे वो धर्म से अल्लाह बचाये! जो गाये, जो मुस्कुरायें। तो ये गाता हुआ धर्म, मुस्कुराता हुआ धर्म और कितनी क्रांति करके निकले बाहर! ये आपको क्या-क्या झेलना पड़ा होगा वो तो आप ही जाने! मैं स्वागत करता हूं। आप अपनी निजी साधना को बरकरार रखते हुए समाज की सेवा करते हैं; देश-विदेश में कई शाखा है। मैं बहुत-बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। और रही बात ये कथा का यजमान राजु और उसका परिवार। राजु को भगवान महावीर करवा रहे हैं। उनके माता-पिता के आशीर्वाद और पूरी परंपरा में वो है उस भगवान के आशीर्वाद से एक ऐतिहासिक और आध्यात्मिक भूमि पर कथा के आयोजन के निमित्त बन रहे हैं, भाग्यशाली है। बस, उसके पूरे परिवार के लिए भी यहां से आशीर्वाद प्राप्त हुआ है। मैं भी मेरी प्रभु-प्रार्थना जोड़ रहा हूं। और आप सभी मेरे भाई-बहन, विध-विध क्षेत्र के आदरणीय महानुभाव और आप सबको मेरा प्रणाम।

'मानस-महाबीर', मैं इस कथा का सब्जेक्ट पसंद कर रहा हूं। 'रामचरित मानस' में तीन-चार बार 'महाबीर' शब्द का प्रयोग है। पूरे तुलसीदर्शन में 'महाबीर' शब्द का अठारह-उन्नीस बार प्रयोग है। लेकिन हनुमानजी के बारे में जो बातें है उसमें 'महाबीर' शब्द है और दूसरी पंक्ति मैंने 'हनुमानचालीसा' से उठायी है। पहले हनुमानजी को केन्द्र में रखते हुए 'मानस-महाबीर' कथा कही हुई भी है। लेकिन यहां 'मानस-महाबीर' केन्द्रबिन्दु होगा। सात्त्विक-तात्त्विक संवादी सूर में चर्चा करने का मेरा मतलब है, हनुमानजी के साथ-साथ भगवान महावीर प्रभु की महावीरता को भी मैं मेरी वाणी को पवित्र करने के लिए आपके साथ संवाद करूंगा। मेरे केन्द्र महावीर है; ये भी महावीर, वो भी महावीर। आपने भी कहा कि राम और महावीर एक ही है। सत्य तो एक ही है। 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति।'

तो कथा का मूल सब्जेक्ट रहेगा 'मानस-महाबीर।' हम अपने आंतरिक विश्राम और विकास के लिए नौ दिन मानो साधना कर रहे हैं। केवल कथा सुन रहे हैं, गा रहे हैं, ऐसा नहीं; यहां साधना के लिए नौ दिन आये हैं। और पूजनीया आचार्या ने कह भी दिया है कि भजन और भोजन दोनों है। और बहुत-सी छूट दे रखी है। मैं प्रणाम करता हूं। और साधु साहस न करे तो ओर क्या खाक् साहस करेगा? परमार्थी लोग ही सच्चा साहस कर सकते हैं। और मैंने राजु को कहा कि जैन धर्म के कोई भी नियम टूटे ऐसा कोई भी निर्णय मत करना। और आपने भी उतनी ही उदारता बर्ती है। मुझे खुशी है कि विशालता से आयोजन हुआ है और मेरे बिहार प्रांत के भाई-बहनों तक मेरी बात पहुंचे इसलिए मैं गाने आया हूं। एक साल पहले भरौल में बिहार में कथा हुई। भरौल में धूप के महिनों में बिपिन का आयोजन था। वहां भी बहुत आनंद किया। और प्रतिवर्ष इच्छा होती है कि बिहार चलें। क्योंकि भगवान राम को बिहारी होने के लिए यहां आना पड़ा था। व्यंग्य में हमारे बिहारी संत अथवा तो मैथिली के संत कहते हैं कि तुम्हारा राम भी तो बिहारी है!

द्रवउं सो दसरथ अजिर बिहारी।

मैं पूरे बिहार के भाई-बहनों को पहले दिन याद करके हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करता हूं कि आप खूब प्रसन्न रहे, आपकी खूब प्रगति हो। आपकी प्रपन्नता भी बढ़े, आपकी प्रसन्नता भी बढ़े, आपकी सम्पन्नता भी बढ़े। प्रस्थानत्रयी आपके जीवन में बहे ऐसी हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करके मैं कथा की भूमिका बना रहा हूं। एक पंक्ति 'बालकांड' की, दूसरी 'हनुमानचालीसा' की है। 'हनुमानचालीसा' भी रामकथा ही तो है। मेरा व्यक्तिगत मानना तो यही है कि पूरे 'रामचरित मानस' का भाष्य 'सुन्दरकांड' है। 'सुन्दरकांड' का संक्षिप्त रूप 'हनुमानचालीसा' है। तुलसीजी ने करीब-करीब सभी प्रसंगों को 'हनुमानचालीसा' में डाल दिया है। वो भी एक रामकथा ही है। तो ये 'मानस' की ही दोनों पंक्तियां है, ऐसा समझ लीजिए। तो ये दोनों पंक्तियों के आधार पर गुरु की कृपा से, सबके आशीर्वाद से, आपकी शुभकामना से नौ दिन तक इस प्रेमयज्ञ में हम गायन-श्रवण की आहुति प्रदान करेंगे।

तो बाप! 'मानस-महाबीर'; प्रत्येक बिलग-बिलग साधना-पद्धति में 'वीर' की व्याख्या बिलग-बिलग आई है, लेकिन जहां तक गुरुकृपा से मेरी समझ बनी है, वहां तक ये चार 'वीर' है, उसमें करीब-करीब सब सहमत है। और ये चार प्रकार की वीरता जिसमें हो उसको ही महावीर कहते हैं, चाहे वो चौबीसवां तीर्थंकर भगवान महावीर प्रभु हो कि 'रामचरित मानस' के श्री हनुमानजी हो। बहुत से वीरों की गणना हम कर सकते हैं। इन चार में करीब-करीब सब सहमत है ऐसी मेरी समझ है।

एक होता है धर्मवीर। अधर्म में वीरता दिखाना कोई बड़ी बात नहीं, धर्म में वीरता दिखाना, यही तो वीरपना है। जिसको ग्रंथकारों ने, बिलग-बिलग मनीषियों ने धर्मवीर कहा है। दूसरा, बलवीर; बलवान जो है। तीसरा, दानवीर। परमात्मा ने जिसको क्षमता दी है और उस अच्छे कामों में लगाये, दान में दे, उसको हम दानवीर कहते हैं। चौथा, क्षमावीर। सामनेवाले ने कितना ही बिगाड़ा हो, फिर भी जिसको क्षमा करते जाये उसको शास्त्र क्षमावीर कहते हैं। दुनिया में धर्मवीर कहां होते हैं? ज्यादातर धर्मभीरु होते हैं! भय और प्रलोभन से धर्म में लगते हैं! कोई दिलचश्पी नहीं होती। तो इन चारों प्रकार की वीरता जिसमें समा जाती है उसीको कहते हैं भगवान महावीर।

मैं तो सब जगह से भिक्षा लेता हूं, मैं भिख्खु हूं, माँ। मैं सौराष्ट्र का वैष्णव साधु का बालक हूं। हम आटा मांगने घर-घर जानेवाले, रोटी मांगने जानेवाले। भिक्षा की परंपरा है हमारी। तो, मैंने जो कुछ जैन ग्रंथों से पढ़ा हो, जैन मुनियों को, भगवंतों को सुना हो, सत्संग सुना हो या साहित्य में देखा हो, उसके आधार पर मैं अतिशयोक्ति को एक ओर करके कहना चाहूंगा कि चारों प्रकार की वीरता भगवान महावीर में अक्षुण्ण-अखंड है। कौन मना कर सकता है? और श्री हनुमानजी भी है धर्मवीर। 'मानस' के 'लंकाकांड' का जो धर्मरथ का वर्णन है -

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा।
देखि बिभीषन भयउ अधीरा।।

रावण को रथ में और राम को नंगे पैर देखकर रावण का भाई विभीषण अधीर हो जाता है कि आप ऐसे कैसे रावण को जीत पाओगे? तब भगवान राम ने विभीषण के धर्मरथ का वर्णन किया, हे सखा! विजय तो उसकी होती है जिसके पास धर्मरथ होता है और उस धर्मरथ में स्मृतिकार मनु ने धर्म के दस लक्षण बतायें, तुलसी ने 'मानस' में चौदह लक्षण बताये हैं। और मैं पूरी जिम्मेवारी के साथ गुरुकृपा से निवेदन करूं, ये चौदह लक्षण हनुमानजी में है; भरतजी में हैं; भगवान महावीर प्रभु में हैं। इसीलिए मजबूती से कह सकता हूं कि भगवान

महावीर धर्मवीर है। धर्म में वीरता दिखाना वो ही तो मुश्किल काम है।

मैं मेरी कुटिया से देखता रहता हूं कि इतने साल पहले महावीर प्रभु चातुर्मास कैसे रहे होंगे? क्या खाया होगा? क्या किया होगा? धन्य है इस तपस्या को! जहां साधना की है, उस जगह पर बैठना भी साधना का एक अंग बन जाता है। नालंदा देखने गया, अब तो भग्नावशेष में है। राजु मिट्टी ले आया, मैंने माथा पर चढ़ाई कि ज्ञानभूमि है। अभी-अभी मुख्यमंत्री ने कहा कि हम नालंदा का जीर्णोद्धार कर रहे हैं। तो मैं खुश हुआ कि होना ही चाहिए। विश्व के अन्य देश में ऐसी जगह होती तो कब का जीर्णोद्धार हो गया होता साहब! देर हुई तो भी कोई चिंता नहीं, आज की टेकनोलोजी का लाभ लेकर नालंदा फिर से खड़ी होनी चाहिए। क्या ज्ञान का भंडार था इस भूमि में! सालों बीत गये। राज्य सरकार, केन्द्र सरकार मिलकर हो सके तो वो ही जगह पर जीर्णोद्धार हो। लेकिन इर्द-गिर्द कहीं भी हो। मैं स्वागत करता हूं मुख्यमंत्री के निर्णय का। ये होना ही चाहिए। ये भारतीयों का परिचय है। मैं फिर अपने को रोक नहीं पाता हूं कि माँ, आपने कुछ उदारता से निर्णय लिये हैं। वर्ना पीटीपिटाई बातों से निकलना, सदियां लग जाती है! लेकिन ये बहुत साहसी कदम है।

मेरे दो-चार अनुभव है कि मुझ पर अमुक विषय या व्यक्ति पर बोलने की पाबंदी लगाने की कोशिश की गई। मैंने सविनय नहीं माना। पर यहां तो मैं आकाश जैसी विशालता देख रहा हूं। हम नवद्वीप-मायापुरी में कथा करने गये। मेरी इच्छा थी कि मैं वहां भी कथा करूं। तो वहां की चैतन्य परंपरा के लोगों ने कहा कि बापू को कहो कि ठाकुर रामकृष्ण और रवीन्द्रनाथ का जिक्र न करे कथा में। मैंने जबान बेची नहीं है, मैंने जबान वहेंची (बांटी) हैं। ये बानी पवित्र करने का मेरा यज्ञ हैं। ऐसा ही परदेश में एक बार हुआ। एक धर्म के आचार्य आये। उसने कहा, हम आयेंगे जरूर पर बापू को कहना कि कबीर के बारे में कुछ न बोले। और यह मेसेज मेरे तक पहुंचा नहीं और उसी दिन मैं कबीर पर एक घंटा बोला! मेरी हिंसा करने की कोई इच्छा नहीं थी! ये क्या संकीर्णताएं है! बाहर आओ। लेकिन यहां मैं वीरता देख रहा हूं। 'वीरायतन' नाम सार्थक हो रहा है। कभी-कभी तो लगता है कि महावीर के रूप में एक क्षमा ने विग्रह धारण किया था हमारे बीच में। अहिंसा ने विग्रह धारण किया हो। जैसे -

क्षमा रूपेण संस्थिता।

अहिंसा रूपेण संस्थिता।

तो महावीर में धर्मवीरता, क्षमावीरता और बलवीरता मानी आत्मबल है! महामुनि विनोबा ने कभी निवेदन किया था कि एटमबम्ब से भी आतमबम्ब की शक्ति ज्यादा है। अपनी प्रज्ञा, अपना आत्मज्ञान। धर्मरथ होता है तो उसके घोड़े होते हैं। कौन से? तुलसीदासजी ने लिखा, 'लंकाकांड' की पंक्ति -

बल बिबेक दम परहित घोरे।

छमा कृपा समता रजु जोरे।।

वीर जो होता है उसके धर्मरथ का घोड़ा कौन-सा होता है? एक तो बल, दूसरा विवेक, दम और परहित। क्या महावीर प्रभु में ये सब नहीं दिखता? जैन समाज के लोग कथा कर रहे हैं। यद्यपि इसमें समानता है, लेकिन आप भारतीय दर्शन से देखो। क्यों अस्पृश्यता? एक दूसरे की आलोचना क्यों? मुझे मेरा धर्मरथ महावीर प्रभु में ये सब दिखा रहा है। क्या बल नहीं है इस महापुरुष में? विवेक का तो कहना ही क्या? हम उसको अवतार कहते हैं, परमात्मा कहते हैं। महावीर स्वामी की जो तपस्या है! एक योजन दूर खड़ा रहना पड़ेगा, ऐसी तपस्या! भले ऐसे चित्र मिलते नहीं आज, पर मेरी आत्मा कहती है, इतनी तपस्या के बावजूद भी महावीर प्रभु मुस्कुराते होंगे।

मैं तो मुनि ही उसको कहता हूं, जिसमें पांच वस्तु हो। एक, जो मौन रहे वो मुनि। समय पर बोले, बाकी न बोले। दूसरा, नवकार मंत्र को आत्मा से पढ़े वो मुनि। तीसरा, महावीर का मार्ग कभी छोड़े नहीं वो मुनि। चौथा, मानवता का काम करे वो मुनि। पांचवां, हमें देखकर मुस्कुराये वो मुनि। कई लोग मानवता का काम करते हैं, मौन भी रहते हैं; मंत्र उच्चारण करते हुए देखता हूं, लेकिन मुस्कुराहट? टागोर ने कभी कहा था कि गुलाब की सभी पंखुड़ियां पूर्णरूपेण खिल जाय, उसीको मैं मोक्ष कहता हूं। दीन-हीन समाज के सामने तुम पापी हो, तुम अधर्मी हो, ऐसा कोई भाव न बने। ये भाव भी हिंसा है। लेकिन तपस्या के बाद इन सभी के सामने मुस्कुराये। आप कल्पना कर सकते हैं, कान में खीले ठोक दिये गये थे, क्या उसने गुस्सा किया होगा? मुस्कुराये होंगे! उस समय फोटाग्राफी की व्यवस्था नहीं थी। अब

अंत:करण के प्रमाण को ही मानना पड़ता है, ओर कोई प्रमाण नहीं है। अंत:करण की प्रवृत्ति से ही चित्र खींचने पड़ते हैं। तो, मुस्कुराये सो मुनि। मैं धर्मक्षेत्र को कहूं, समाजक्षेत्र को कहूं, शिक्षणक्षेत्र को कहूं, सत्ताक्षेत्र को कहूं, उद्योगपतियों को कहूं कि आप कुछ दे न दे, लेकिन आखिरी व्यक्ति के पास जाकर मुस्कुराओ तो वो कितनी दुआ देगा! मुस्कुराहट बहुत बड़ा दान है।

तो, भगवान महावीर में धर्मवीरता है, बलवीरता है, क्षमावीरता है, दानवीरता तो असीम है। दाता ने क्या नहीं दिया दुनिया को! महावीर और हनुमान दोनों में ये सातों वीरता दिखती है। तो राजगीर की इस पावनी भूमि पर 'वीरायतन' के आशीर्वादक आंगन में हम 'मानस' की चौपाईयों के आधार बनाकर, प्रसंगों को आधार बनाकर दोनों महावीर-महावीर और हनुमानजी-दोनों का दर्शन करने की कोशिश करेंगे ताकि विश्व में सत्य, प्रेम और करुणा का मेसेज जाय। ये है कथा की भूमिका, 'मानस-महाबीर।'

पहले दिन कथा में परंपरा का निर्वहण करना होता है। प्रवाही परंपरा मुझे रास आती है। मैं आपको एक सूत्र के रूप में कहना चाहूंगा, आपका विश्वास भी जड़ नहीं होना चाहिए, दृढ़ होना चाहिए। जड़ और दृढ में अंतर है। हमारा विश्वास कभी-कभी जड़ होता है, दृढ़ नहीं होता। इसीलिए पुष्टिमार्ग में श्रीमहाप्रभुजी के चरणों का आश्रय करके सुरदास ने कभी कहा था -

दृढ इन चरनन केरो भरोसो, दृढ इन चरनन केरो,

श्री वल्लभ नख चन्द्र छटा बिन, सब जग मांहे अंधेरो ...

गंगा का जल कलेजा भी धो देता है, कपड़ा भी धो देता है, सिंचाई भी करता है। लेकिन गंगाजल को जमा कर बर्फ बनी हो, उससे कपड़ा धोओगे तो बिगड़ जायेगा। जड़ परंपरा हंमेशा बिगाड़ देती है। परंपरा प्रवाही होनी चाहिए। परिवर्तनशील परंपरा होनी चाहिए। देश-काल के अनुसार मूल को पकड़कर नए-नए फूल खिलने चाहिए।

पहले दिन ग्रंथ का परिचय कराना चाहिए जिसको माहात्म्य कहते हैं। ग्रंथों के माहात्म्य में प्रलोभन और भय भी दिखाया जाता है कई ग्रंथो में! भय और प्रलोभन की बातें मुझे रास नहीं आती। कौन 'मानस' से अनजान हैं? आदि कवि वाल्मीकि ने सबसे पहले लिखी; नाम 'रामायण' है। उसने खंडों को कांड नाम दिये। तुलसी ने सात सोपान दिये। कांड प्रसिद्ध है इसीलिए हम कांड कहते हैं। उपर जाने की मानो सात सोपान की सीढ़ी है। साधना संपन्न होने के बाद आखिरी व्यक्ति को प्रकाश देने लिए नीचे आने की ये सात सोपान की सीढ़ी है। प्रथम सोपान में सात श्लोकों में मंगलाचरण किया। संस्कृत के प्रकांड विद्वान है तुलसीजी।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।

मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

सात मंत्र; गणेशजी की वंदना, श्रद्धा-विश्वास के घनीभूत रूप शिव और पार्वती की वंदना की। फिर तुलसीजी अपने ग्रंथ रचना का हेतु बताते हुए 'आगम' शब्द का प्रयोग करते हैं -

नानापुराणनिगमागमसम्मतंयद्

रामायणे निगदितं क्वचिऽन्योऽपि।

स्वान्त:सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा

भाषानिबन्धमतिमंजुलमातनोति।

हेतु बताया 'स्वान्त:सुखाय।' मेरे अंत:करण के सुख के लिए मैं इसे भाषाबद्ध करता हूं। पहले संस्कृत में श्लोक लिखे। फिर आखिरी व्यक्ति तक श्लोक पहुंचे इसीलिए लोकबोली में ऊतर आये। भगवान महावीर किस बोली में बोले? बिलकुल देहाती भाषा में बोले। तथागत बुद्ध किस भाषा में बोले? कबीरसाहब किस भाषा में बोले?

एक होता है धर्मवीर। अधर्म में वीरता दिखाना कोई बड़ी बात नहीं, धर्म में वीरता दिखाना यही तो वीरपना है। दूसरा, बलवीर; बलवान जो है। तीसरा, दानवीर। परमात्मा ने जिसको क्षमता दी है और उस अच्छे कामों में लगाये, दान में दे, उसको हम दानवीर कहते हैं। चौथा, क्षमावीर। सामनेवाले ने कितना ही बिगाड़ा हो, फिर भी क्षमा करते जाय उसको शास्त्र क्षमावीर कहते हैं। दुनिया में धर्मवीर कहां होते हैं? ज्यादातर धर्मभीरु होते हैं! भय और प्रलोभन से धर्म में लगते हैं! इन चारों प्रकार की वीरता जिसमें समा जाती है उसीको कहते हैं भगवान महावीर।

तुलसी ने भी संस्कृत के मंत्रों को प्रणाम करते हुए, एकदम देहाती भाषा में, ग्राम्यगिरा में, आंचलों के लोग समझ पाये ऐसी भाषा में 'मानस' की रचना की। मंगलाचरण किया। मंगल उच्चारण की महिमा तो है, लेकिन मंगल आचरण की विशेष महिमा है। फिर देहाती बोली में तुलसी पांच सोरठे लिखते हैं। एक में गणेश, एक में सूर्य, फिर भगवान विष्णु, फिर भगवान शिव और भगवती पार्वती। जो शंकराचार्यजी ने सनातन धर्मावलंबीओं को कहा था कि पांच देवों को आदर्श बनाओ, उनके सत्त्व-तत्त्व को स्वीकारो। तुलसी वैष्णव है फिर भी शांकरमत को महत्त्व देकर सेतुबंध बनाते हैं।

गणेश की स्तुति विवेक के लिए, भवानी की स्तुति व्यक्ति में श्रद्धा जन्मे इसीलिए, शिव की स्तुति मंगलकारी-कल्याणकारी भावना के लिए, सूर्य की स्तुति उजाले में जीने का संकल्प हो और विष्णु की स्तुति विशालता के लिए की। फिर ये पांचों देव एक ही तत्त्व में इकठ्ठे होते हैं वो तत्त्व है गुरु। 'नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्।' एक कोई गुरु मिल जाये तो समझ लेना, उसकी पूजा में गौरीपूजा भी आ जाती है, विष्णुपूजा, गणेशपूजा, शिवअभिषेक और सूर्यनमस्कार भी हो जाता है। गुरुमहिमा का गायन करते हुए तुलसी का पहला प्रकरण, गुरुवंदना; कई लोगों को जरूरत महसूस नहीं होती, सीधा जाने की सोच होती है पर हम जैसे पामरों को तो कोई बुद्धपुरुष, कोई महावीर, कोई गौतम, कोई शंकराचार्य या तो जो हमारे गुरु हो, जहां से हमें प्रकाश मिला हो उनकी आवश्यक्ता है। मैं तो हर वक्त कहता रहता हूं कि मोरारिबापू को तो गुरु चाहिए ही चाहिए। कोई मार्गदर्शक चाहिए। हार जाय तब कंधे पर हाथ रखनेवाला कोई चाहिए। महत्त्वाकांक्षा रखनी चाहिए पर विफल हो तब सांत्वना देनेवाला कोई चाहिए। और सफल हो तो दूसरा हाथ दूसरे कंधे पर रखकर कहे कि बेटा, गर्व मत कर। ऐसा गुरु चाहिए जो ग्लानि और गर्व से हमें मुक्त रखे।

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

गुरुचरणकमल, गुरुचरण की पराग, गुरुचरणनख की ज्योति और गुरुचरण कमल की रज, इन चार की वंदना की। बड़ा आध्यात्मिक विचार समाहित किया है। तुलसी कहते हैं, गुरुचरणनख की ज्योति को आप देख लो, देखना भी नहीं, खाली सिमरन कर लो तो सुमिरन करते ही दिव्यदृष्टि प्राप्त होती है। युवान भाई-बहनों को खास कहूं कि गुरु को भूल जाओ तो कोई चिंता नहीं, गुरुकृपा मत भूलना। क्योंकि यही हमारा रक्षण है, यह ही हमारा कवच है। और गुरु चरणधूल से नेत्र पवित्र हुए ही तो तुलसी को पूरा जगत राममय दिखा। अब कौन राक्षस, कौन देव? सबकी वंदना शुरू की। सबसे पहले पृथ्वी के देवता ब्राह्मणों की वंदना की। और उसके बाद सबकी वंदना करते-करते 'मानस' की प्रसिद्ध पंक्ति -

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

गुरु चरणरज से पवित्र हुई आंखों को फिर कौन निंदनीय लगेगा? जब भी करेगा तो वंदना ही करेगा। फिर दशरथजी, कौशल्या, भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण की वंदना; बीच में हनुमानजी की वंदना करते हैं। वहीं से ये पंक्ति उठाई हैं -

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

'विनयपत्रिका' में हनुमानजी की वंदना का एक पद हैं। इसकी दो पंक्ति -

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।

मेरे भाई-बहन, आप किसी भी संप्रदाय के अनुयायी हो, पकड़े रखना। लेकिन 'हनुमानचालीसा' का आश्रय करने से अपने-अपने धर्म में गति तेज होती है, अपने गुरु में निष्ठा बढ़ती है, अपने शास्त्र में आस्था बढ़ती है। 'हनुमानचालीसा' सांप्रदायिक नहीं है, सार्वभौम है। हनुमंततत्त्व प्राणतत्त्व है, वायुतत्त्व है। साधना में वायुतत्त्व पर तो काम किया जाता है। हनुमंततत्त्व को कैसे भी हमें छूना पड़ता है। माताएं, भाई-बहन, कोई भी 'हनुमानचालीसा' कर सकते हैं, 'सुन्दरकांड' कर सकते हैं, आरती कर सकते हैं। बहनों को भी छूट हैं। लंका में हनुमानजी की पूजा राक्षसियों ने की तो मेरे देश की बहन-बेटियों को क्यों छूट नहीं? तुलसी ने पारिवारिक वंदना के बीच श्री हनुमानजी की वंदना की। हम इस महाबीर का भी आश्रय करें, वो महावीर प्रभु का भी आश्रय करें ताकि हमारी अपने धर्म में गति विशिष्ट हो। प्रथम दिन की कथा को हम हनुमंतवंदना के साथ विराम देते हैं।

बुद्धपुरुष के शब्द सुनो और उनकी सांसें भी सुनो

'मानस-महाबीर' को केन्द्र में रखते हुए हम सब इस कथा में 'मानस' के आधार पर कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। कुछ जिज्ञासा, कुछ प्रश्न मेरे पास है वो यथामति कुछ कहता चलूंगा, जो मेरी समझ में आयेगा।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

तुलसीजी हनुमानजी की वंदना करते हुए कहते हैं, हनुमानजी, विनय कर रहा हूं। और मेरे विनय, मेरे शब्दों, मेरी प्रशंसा से आप राजी होनेवाले नहीं हो, क्योंकि आपके यश की चर्चा स्वयं राम ने की है। फिर भी आप जैसे हैं, वैसे ही रहे। मेरे कुछ शब्दों से मेरी विनम्रता आपके चरणों में रखता हूं और आपको प्रणाम करता हूं। हनुमानजी, आपका विक्रम, आपकी वीरता, समग्र वज्रांगपना क्या करता है? हम जैसों की कुमति को हटाकर सुमति का संग करा देता है; सद्बुद्धि का साथ कराता है। भगवान महावीर जो बातें कर रहे हैं अपने सूत्रों में। ये तो प्रभु की बानी है। मैं 'रामचरित मानस' में खोज करता हूं। ऐसी ही बानी 'मानस' में मिलती है। वहीं से शुरू करूं। प्रसन्नता के साथ सुनिएगा।

'रामचरित मानस' में श्रवण पर बहुत बल दिया हैं; 'सुनो, सुनो।' कुछ लोग क्या कहते हैं, सुनने से कुछ नहीं होता है! प्रचलित वाक्यरचना है कि लोग एक कान से सुनते हैं, दूसरे कान से निकाल देते हैं! ठीक है; बहुत पुरानी बात है पर व्यासपीठ आपसे वार्तालाप करना चाहती है। एक कान से सुनो, दूसरे कान से निकालते ही रहो। कान खाली रखो, खिड़कियां खुली रखो ताकि दूसरा सत्य आ सके। आलोचना के रूप में हमारे वक्ता की बहुत पिटाई हुई है, श्रोताओं की बहुत हुई है! एक पात्र में यदि पानी है और वही वस्तु दूसरे पात्र में डालनी हो तो दूसरे पात्र में खाली करना पड़ेगा। सोचो, वर्ना भगवान ने हमें दो कान क्यों दिये? ये वेन्टिलेटर है। यहां से आया, अगर ये बंद है, जमा हो गया, दूसरा आ नहीं पायेगा। कभी जैन सूत्र सुनो, कभी ब्रह्मसूत्र, सांख्यसूत्र, प्रेमसूत्र, न्यायसूत्र सुनो। ऐसा नहीं कि हमने चौपाई सुन ली; अब सुनना कुछ बाकी नहीं! बंधियार मत बनो। कान खाली करो। वातायन, 'वीरायतन' में वातायन।

कनक कोटि विचित्र मनी सुंदरायतना घना।

'मानस' का शब्द 'सुन्दरायतना'; जूनागढ में 'रूपायतन।' यहां मैं 'वीरायतन' में आया हूं। 'वीरायतन' बड़ी सत्त्वशील भूमि है। नव दिन वातायन खुले रखो। सुनते जाओ, सुनते जाओ। शास्त्र रोज कुछ न कुछ नया देता है। पुरानी बातें निकालते जाओ और नये का सन्मान करो। नये प्रवाह का स्वागत करो। एक सूफी बनजारा, आवारा, एक रूखड कहता है -

राशिद किसे सुनाउं गली में तेरी गज़ल,
उनके मकां का कोई दरीचा खुला न था।

मुझे तो गाना था, लेकिन उसकी गली में कोई दरवाजा-खिड़की खुली ही न थी! नया आने दो। सुनने के बाद करने का भी क्या है? I want answer from you. भगवान महावीर कहते हैं, सुनना पर्याप्त है। मैं नहीं बोलता, ये पर्वत बोल

रहा है। जो मेरे 'रामचरित मानस' में श्रवण पर बल दिया है। सुनने से कल्याण का मार्ग दिखेगा। सुनने से ही पाप क्या है इसका पता लगेगा। और सुनने से ही आप श्रेय का निर्णय कर पाओगे। ऐसा भगवान तीर्थंकर महावीर स्वामी कहते हैं। मैं बहुत दिल से आप-से बातें कर रहा हूं। एक बार सुन लो, बात खतम! सुनना ही पर्याप्त है। तुम सुनो। श्रवण का कोई विशेष फल नहीं है। सुनते समय आपकी आंखें भीग गई, हृदय में प्रसन्नता आ गई, तसल्ली मिल गई। मुझे बोलने का फल चाहिए। आपको सुनने का फल चाहिए। वहां हम मार खा गये! हमको सिखाया गया, सुनने से स्वर्ग मिलेगा। कहां है स्वर्ग? अभी तो 'वीरायतन' में है। तो सुननेवाला फल मत मांगो। यदि फल मिले तो भी त्याग करने की वीरता रखो। एक वस्तु याद रखो, भगवान योगेश्वर कृष्ण ने कहा, देहधारी कभी भी बिना कर्म रह ही नहीं सकता और फल का संपूर्ण त्याग नहीं कर सकता। इसलिए त्याग की व्याख्या ऐसी ही करनी पड़ेगी कि फल का त्याग कर दो। संपूर्ण त्याग की भावना रखनी पड़ेगी। फल का संपूर्ण त्याग कर दो। मैं बोलता हूं तो मुझे कोई फल, तालियां, वाह-वाह, सन्मानपत्रक नहीं चाहिए। और तुम भी सुनते समय कोई फल की आकांक्षा मत रखो कि हमको स्वर्ग मिल जाएगा; मेरी फेक्टरी चलेगी। भ्रम में मत रहना। मैं आगाह करता हूं। भगवद्कथा हम को क्षुद्र नहीं, श्रेष्ठ देती है। महत्त्वाकांक्षा छोड़ दो। अपने कर्मफल का त्याग कर दो। आज एक भाई ने मुझे चिट्ठी में लिखा है, ''हम कथा सुनने आते हैं तब आप शुरू में 'बाप' शब्द उच्चारते हो और हमको लगता है कथा हो गई! बस चले जाये!'' तो बस, इतना तुम्हारा रस ही फल है और क्या यार? बस, कथा सुनो। प्रसन्नता बढ़ेगी। और ये तैयारी हो तो ही व्यासपीठ के साथ चलो। बिलकुल महावीर के पांच व्रतों का पालन करना पड़ेगा। अहिंसा, अपरिग्रह, अप्रभाव, अकाम, अचौर्य - पांच सूत्रों को लगातार घुटना पड़ेगा। एक गज़ल मैं आपके लिए लाया हूं। 'मुदाम' शब्द का अर्थ है लगातार।

मुदाम चलना है मुश्किल तो मेरे साथ न चल।
हाजतें है तुझे महमिल तो मेरे साथ न चल।

तुझे डोली की जरूरत पड़े तो मेरे साथ न चल। तुझे लगातार पैदल चलने की तैयारी हो तो ही तू किसी बुद्धपुरुष के साथ चल। फल के बिना उसके साथ चलना पड़ेगा। बुद्धपुरुष की निकटता यदि मिल जाय तो उसके शब्द सुनो, उनकी सांसें भी सुनो, उनकी निकटता में उनकी धड़कनें भी सुनो। जिसको कृष्णमूर्ति Real listen कहते हैं। तथागत बुद्ध सम्यक् श्रवण कहते हैं। Art of listening - श्रवण विज्ञान मेरी व्यासपीठ कहती है। शब्द तो बहुत कमजोर माध्यम है। कभी ओशो ने कहा था, आदमी बुद्धपुरुषों का मौन समझ नहीं पाया, इसलिए बुद्धों को बोलना पड़ा। काश! उसका मौन समझ लेते!

बहुत अज़ीज़ है मुझे मेरा अधुरापन।
तुझे होना है मुकम्मिल तो मेरे साथ न चल।

अंश सही लेकिन तेरा ही तो हूं। हम जंतु ही तो है। मोरारिबापू खुद जंतु ही तो है। लेकिन तेरे आसमां के जंतु हैं। सूफ़ियों में परमात्मा को प्रेयसी कहते हैं। जीव उसका प्रेम करनेवाला है। तू श्रेष्ठ है, फिर भी जंतु होकर लगातार तेरे साथ चल रहे हैं। जगदीश, मैं तेरा हूं। ब्रह्म तू, मैं जीव। मेरा अधुरापन मुझे पसंद है। हमें भगवान महावीर नहीं बनना है, बस उसके पीछे-पीछे चलना है। मेरे भाई-बहन, लगातार चलना होगा। लगातार सुनना होगा। खाली होना होगा। कई लोग कहते हैं, 'बापू की कथा सुनने से क्या होगा?' हां, विवेक रखो, मर्यादा रखो, शालीनता रखो। बाकी जो तुमको कहे उसको विवेक से कहो कि सुनने से बहुत कुछ होता है।

महावीर प्रभु का दर्शन करते-करते बोलने की इच्छा मेरी ये कथा में है कि मैं ठीक से आत्मसात् करूं। महावीर भगवान ने कहा, 'केवल सुनो।' मुझे बहुत अच्छा लगा। भगवान महावीर के पांच सूत्रों को ध्यान रखना। सुनो तब अहिंसा व्रत लेकर सुनो। आप कहोगे, सुनने में कैसी हिंसा? आपकी जगह दूसरे दिन कोई ओर व्यक्ति बैठ जाय, उसी समय आपकी आंखों में जो नज़ारा बनता है वो हिंसा है! मेरी जगह पर बैठ गया! अहिंसक होकर सुनो। अठारह अक्षौहिणी सेना थी कुरुक्षेत्र में फिर भी केवल अर्जुन ने सुना। गोपी कहती है, हे गोविंद-

तव कथामृतं तप्तजीवनं
कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंङ्गलं श्रीमदाततं
भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः।।

उपनिषद भी वही कहता है। भगवान महावीर कहते हैं, केवल सुनो। कल्याण का मार्ग खुल जाएगा। पाप का परिचय हो जाएगा। क्षीर-नीर का भेद-विवेक जग जाएगा। 'मानस'कार का डीमडीमघोष है, 'सुनत श्रवन पाइये बिश्रामा।' सुनने के बाद करो कान खाली और दूसरे पात्र में भरकर दूसरा सुनो, नया आनेवाला है।

एहिं कलिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।।

निरंतर सुनो, लगातार सुनो। कबीर कहते हैं, 'सुनो भाई, साधो।' बहुत-सी पूर्वधारणा लेकर हम आते हैं! बिलकुल रिक्त होकर सुनो।

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ।
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।

दाता, श्रेष्ठ तू है, हम तो अधूरे हैं। बुद्धपुरुष के पास बैठो तो सांस सुनो, धड़कन सुनो। धमनी में जो लहू बहता है वो भी सुनाई देगा। और दूर से भी सुना जाएगा। शारीरिक-स्थूल निकटता की कोई आवश्यकता नहीं है। महावीर भगवान को पचीस सौ साल हो गये हैं वो तो जगजाहिर है, फिर भी हमारे पास रीअल कान है तो उनकी बातें सुन पाते हैं। कोई-कोई ही उसे सुन लेता है। भगवान के रहने के स्थान जब वाल्मीकि ने राम को बताये इसमें सबसे पहला स्थान बताया, जो तुम्हारी कथा-भगवद्चर्चा सुनते हैं उसके हृदय में आप निवास करो। मेरी दृष्टि में मेरे श्रोताओं का बहुत मूल्य है। 'श्रीमद् भागवत' में पहली भक्ति का नाम श्रवण ही है।

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यं आत्मनिवेदनम्।।

●

जिन्हके श्रवन समुद्र समाना।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।

तो बाप! श्रवण की बहुत महिमा है। हम भी सुनते रहते हैं। हम को भी मानसिकता में रहे कि कोई सद्गुरु बुलवा रहा है। शब्द बहुत कमज़ोर माध्यम है, जिसे बोलना पड़ता है। भगवान महावीर और बुद्ध की मूर्तियां हम देखते हैं। ये दोनों के कान देखो, बहुत लंबे कान हैं। मुझे लगता है जिस शिल्पी ने ये कान बनाये उसने जरूर धड़कनें सुनी होगी या विशेषज्ञ हुआ होगा। मुझे ये मेसेज़ देना है कि तेरे कान बड़े रख। श्रवण को लंबा रख, संकीर्ण न हो। गुरु की धड़कन सुनी जाय। गुरु को सुनना एक कला है, विज्ञान है। लेकिन पांच व्रत है।

अहिंसा भाव से सुनो। सुनते समय द्वेष पैदा न हो कि बापू ने उसका नाम लिया, प्रशंसा की! तो सुनते हो पर हिंसापूर्वक! महावीर ने अहिंसा की कितनी सूक्ष्मतम बात की है! ब्रह्मपना के अज्ञान जैसी कोई हिंसा नहीं है। ब्रह्मज्ञान जैसी कोई अहिंसा नहीं है। कभी-कभी संसार में स्थूल हिंसा में बहुत गुप्तरूप सूक्ष्म अहिंसा छिपी हुई है। अपने महावीर स्वामी और हनुमानजी दोनों की तुलना अहिंसा के रूप में करूं तो आपके गले में कैसे उतरेगी? आप कहेंगे, हनुमानजी तो गदा रखते हैं, असुरों को मारते-पिटते हैं, युद्ध करते हैं! लेकिन बुद्धपुरुषों की स्थूल हिंसा के पीछे शाश्वत अहिंसा छिपी होती है, जो सूक्ष्म है। परंतु तथाकथित लोगों की उपर-उपर की अहिंसा अंदर से खतरनाक हिंसा होती है! भगवान राम ने युद्ध किया। महावीर के साथ मेल नहीं बैठेगा, क्योंकि राम धनुर्धारी है। तो कुछ करना पड़ेगा। तलगाजरडा ने किया। मैंने राम को कहा, हथियार छोड़ दो। छुड़वा दिया। विरोध भी हुआ पर मैंने कहा, शस्त्रोंवाला राम दुनिया के लिए उपयोगी नहीं। इसलिए बिना शस्त्रों का राम खड़ा है। ये जितने तीर्थंकर भगवान हुए सब क्षत्रियकुल में हुए। राम क्षत्रिय है; बुद्ध, तीर्थंकर क्षत्रिय है और सबने विश्व में दिखा दिया, अहिंसा के बिना शांति संभव नहीं है। उपर से तो हिंसा होती है। डोक्टर हाथ में हथियार, शस्त्र लेकर ओपरेशन करते हैं, वो स्थूल हिंसा

लगती है। पर वो सूक्ष्म अहिंसा है। क्योंकि उसको दर्दी को नीरोगी करना है।

माँ ने कल महावीर स्वामी और राम की एकता को स्थापित किया। उपर से देखोगे तो नहीं पता लगेगा। जैन धर्म का मूल सूत्र नहीं देखा होगा तो कई लोग आलोचना भी बहुत करेंगे! हमें भी बहुत गालियां सुननी पड़ती है! लेकिन उसकी सूक्ष्म अहिंसा देखो। वो मारते हैं, तारते भी हैं। उसके प्रहार में सूक्ष्म अहिंसा देखो। प्रहार में भी प्रसाद है। जो लोग अहिंसा की बड़ी बातें करते हैं वो लोग कितने के लहू चूसते हैं! दुकान पर बैठकर लुटते हैं! मूढ़ता हिंसा है, आत्मज्ञान अहिंसा है। अहिंसक होकर सुनो।

अचौर्य; सुनो तो अचौर्य बनकर सुनो। सुनकर, पढ़कर, धारणा लेकर आये हो और आपकी धारणा को बापू समर्थन करेंगे, ऐसे चौर्य भाव से सुनोगे तो सुनना ठीक नहीं। ओशो की कई बातें मुझे अच्छी लगती है, पर बाकी सब बातें मैं न भी कबूल करूं। ये मेरी निजता है। कृष्णमूर्ति की कोई बात मुझे अच्छी लगे तो मैं कुबूल करूं बाकी सब बातें मुझे समझ में न आये तो कुबूल करना जरूरी नहीं। कई लोग मेरे पास इसलिए आते हैं, अगर मैं उसे बल मिले ऐसा जवाब दूं, तो वो खुश होते हैं और न दूं तो उसको बुखार चढ़ जाता है! अचौर्य बनकर सुनो।

तीसरी बात, अकाम होकर सुनो। बस, प्रसन्नता आ गई। रस लुट लिया वही फल ओर क्या फल? अकाम और उसके बाद अपरिग्रह; ठीक है, आप नोट कर लो, सूत्र मोबाईल में रखो, अच्छी बात है। वस्तु का संग्रह न हो; वसु का संग्रह न हो; विषयों का भी संग्रह न हो। सबसे छूटकर अपरिग्रह भाव से सुनो। चित्त को खाली करो और नये को आने दो। अप्रमाद; जागृति के साथ सुनो, तमोगुण के साथ नहीं। कथा में आप पांच मिनट या जितना समय बैठो पर सावधानी से सुनो। मुझे अच्छा लगता है। अप्रमादी होकर सुनो। सुनने का महत्व हमने कम समझा है। भगवान महावीर के सूत्रों में यही बात आती है। सच्चा, सुनो। सुनने से तुम कल्याण का मार्ग जान पाओगे। पांच व्रतों का ध्यान में रखकर सुनो।

जैन परंपरा के दो-चार लोगों का पत्र मुझे मिला है। विद्वान है। मैं फोन करनेवाला हूं। वो व्यस्त है, आयेगा नहीं! ये कथा जब निश्चित हुई तो सोचा, बापू जैन समाज के बीच भगवान महावीर और जैनधर्म के लिए 'रामायण' लेकर क्या बोलेंगे? अरे! तू आ तो सही! सुनो तो पता लगेगा, पाप क्या है, पुण्य क्या है? माँ के दूध की तरह प्रभु के बोल सीधे उतर जाते हैं। और तुम्हारा श्रेय क्या, प्रेय क्या पता लग जाएगा। मेरे श्रोताओं को मैं बिलकुल निर्भार करना चाहता हूं। सुन-सुनकर चुन लो। चुन लो, बराबर है पर इकठ्ठा करके अपने नाम से चढ़ा देते हैं! जिससे सुना हो उसका नाम लेकर वापस दो। अपरिग्रह करो। परिग्रह पाप है, अपरिग्रह धर्म है। पांच, सिद्धांत भाव से सुनना। श्रवण ही हमारा प्रथम साधन, प्रधान साधन है; कल्याण का मार्ग है।

कुछ प्रश्न अभी ले लूं। 'श्रीमद् भागवतजी' में अखंड आनंद के तीन स्वरूप बताये गये हैं - ब्रह्म, परमात्मा और भगवान। 'रामचरित मानस' में भी भगवान राम के तीन स्वरूप है?' बिलकुल है। राम का ब्रह्म स्वरूप है।

राम ब्रह्म परमारथ रूपा।
अबिगत अलख अनादि अनूपा।।

राम परमात्मा है, शंकर ने कहा-

राम सो परमातमा भवानी।

राम भगवान है, जानकी ने कहा-

तौ भगवानु सकल उर बासी।
करिहि मोहि रघुबर कै दासी।

धनुष्यभंग के समय जानकी ने प्रार्थना की थी। शिव के लिए भगवान, जानकी के लिए भी भगवान। भगवान महावीर, भगवान बुद्ध; कई लोग बुद्ध को भगवान नहीं कहते। रवीन्द्रनाथ टागोर बुद्ध को बुद्धदेव कहते थे। कई लोग बुद्ध को महात्मा कहते थे। ठीक है। राम भगवान है।

'बापू, १९९६ से कथा सुन रहा हूं, पर राम से प्रेम नहीं है!' ये जिसने पूछा उसको मैं पूछूं कि शादी हुई है? तो मैं कहता हूं, अगर शादी हो गई है तो पत्नी से प्रेम करो। राम से प्रेम करना छोड़ो। यदि पत्नी से, बच्चों से, पडौसी से प्रेम नहीं करते, वो क्या खाक् राम को प्रेम करेंगे! भगवान रामानुजाचार्य के पास एक युवक गया। उसने कहा, 'भगवान में मेरी प्रीत नहीं लगती है। मुझे परमात्मा का दर्शन नहीं होता। परमात्मा चारों ओर है तो दर्शन क्यों नहीं होता?'तो बोले, इसमें मेरा क्या कुसूर? तेरी आंख नहीं खूली!

हरि ब्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।

अगर तूने निश्चित किया हो कि वो परमात्मा चार हाथवाले, धनुष्यबाण लेकर त्रिशूल लेकर मुरली लेकर आ जाये तो ऐसा नहीं है। तेरी आसपास कोई पीड़ित-भूखा मिल जाये उसमें तुझे भगवान न दिखे, तो तुझे मंदिर-मस्जिद में खाक् भगवान दिखेगा! लोगों को अपनी नज़र से देखना है! नये-नये मंदिर बनना चाहिए, स्वागत है। पर जो जीवंत मंदिर है वो गिरना नहीं चाहिए। कोई रोटी बिना, फीस बिना, औषधि बिना नहीं रहना चाहिए।

मंदिर तारुं विश्वरूपाळुं, सुंदर सर्जनहारा रे.
पळपळ तारां दर्शन थाये, देखे देखनहारा रे.

बिना गदा का हनुमान, बिना धनुष्य का राम मेरे पास मिल सकता है। मेरी एक पीड़ा भी है, दुनिया में इतनी हिंसा की है धर्मों के नाम से तो कुछ साल बिना हिंसा की, बिना शस्त्रों की दुनिया हो। प्रयोग तो कर लो! एक मौका तो दिया जाय। हिंसा से अनगिनत लाशें गिरी है! ये पृथ्वी सबसे बड़ा कब्रस्तान है! उसी अहिंसा के लिए महावीर भगवान का अवतार हुआ है।

रामानुजाचार्य के पास युवक गया। आचार्य ने कहा, 'तूने किसी से प्रेम किया?' सुनकर युवक की श्रद्धा उड़ गई! 'मैं परमात्मा ब्रह्म की जिज्ञासा लेकर आया हूं और आप प्रेम की बात करते हो?' 'संसार में तेरे अगल-बगल में तू किसी को प्रेम न कर पाया तो परमात्मा का प्रेम तेरे लिए असंभव है।' 'अभागा आदमी मेरा ईश्वर है।' ऐसा गांधी ने कहा। लोग कितने अभावग्रस्त-पीड़ित है! धर्म को, सत्ता को, समाज को ऐसे आदमी के पास पहुंचना चाहिए।

ज्योत से ज्योत जगाते चलो,
प्रेम की गंगा बहाते चलो।
राह में आये जो दीन-दुःखी,
सबको गले से लगाते चलो।

१९९६ से कथा सुनकर प्रभु से प्रेम नहीं हुआ है, ये पीड़ा भी एक प्रेम का प्रारंभ ही है।

'कल का सूत्र था, विश्वास जड़ नहीं, दृढ होना चाहिए। बापू, जड़ता और दृढता में क्या अंतर है? कैसे पता चले कि हमारा विश्वास किस प्रकार का है?' विश्वास तो शिव है। जड़ और दृढ़ विश्वास में बहुत अंतर है। कभी जड़ मान्यता पर आधारित हमारा विश्वास होता है। दोरा-धागा-मंत्र से सबकुछ हो जाएगा ये जड़ विश्वास है। मरे हुए को ज़िंदा करने की जरूरत नहीं है। जो ज़िंदा है उसे जीने दो। जीओ और जीने दो। जिसस क्राईस्ट के बारे में लिखा है। जो मर गया था; उसके पास ले गये तो उसको जीवित कर दिया! तब की परंपरा में उसको ये चमत्कार करना पड़ता था। ये उनकी धारा है। स्वागत है। कितने अंधे को आंखें दी, रोगी को अच्छा किया। लेकिन बुद्ध ऐसा कभी नहीं करते थे। एक माँ

भगवान महावीर कहते हैं, सुनना पर्याप्त है। जो मेरे 'रामचरित मानस' में श्रवण पर बल दिया है। सुनने से कल्याण का मार्ग दिखेगा। सुनने से ही पाप क्या है इसका पता लगेगा। और सुनने से ही आप श्रेय का निर्णय कर पाओगे, ऐसा भगवान तीर्थंकर महावीर स्वामी कहते हैं। एक बार सुन लो, बात खतम! श्रवण का कोई विशेष फल नहीं है। सुनते समय आपकी आंखें भीग गई, हृदय में प्रसन्नता आ गई, तसल्ली मिल गई। सुनते समय कोई फल की आकांक्षा मत रखो कि हमको स्वर्ग मिल जाएगा; मेरी फेक्टरी चलेगी। बुद्धपुरुष की निकटता यदि मिल जाय तो उसके शब्द सुनो, उनकी सांसें भी सुनो, उनकी निकटता में उनकी धड़कनें भी सुनो।

जिसका एकलौता बेटा मर गया। बुद्ध के शरण में जाती है पर बुद्ध ने जीवित नहीं किया। माता को बोला, किसी के घर से बीज ले आना, पर उस घर से लाना जिस घर में कोई मरा ही न हो। माँ गई पूरे गांव में। फ़िरी पर ऐसा कोई घर न मिला। तब वो बुद्ध के पास जागृत होकर आई कि मैं भटक गई थी! मृत्यु यहां निश्चित है। जड़ता के भरोसे से अगर काम होता है, ठीक है पर नहीं होता है तो वो जड़ता विकृति का रूप ले लेती है; द्वेष, रोष, दुश्मनी पैदा हो जाती है उसको व्यासपीठ जड़ विश्वास कहती है। दृढ विश्वास एक ही बार और एक ही बार होता है। तुलसी कहते हैं -

एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास।
एक राम घन स्याम हित चातक तुलसीदास।।

आपके गुरु ने जो मंत्र दिया, उस पर दृढ विश्वास करना। एक मंत्र छोड़कर, दूसरा मंत्र पकड़ो वो दृढता नहीं। मेरी कथा में सब धर्म के लोग आते हैं। किसी को मैं नहीं कभी कहता, आप अपने धर्म या मंत्र छोड़ दो। जैन भाईयों को कभी नवकारमंत्र छोड़ना नहीं कहता। यदि 'रामायण' की बात सुनकर नवकारमंत्र में दृढता आती है तो जरूर सुनना, बाकी मूल मंत्र कभी मत त्यागो। इस्लाम धर्मवालों को भी वही बात कहता हूं। व्यासपीठ बहुत विशाल होती है, इसलिए व्यासपीठ है। दृढ भरोसा, हेतुहीन आस्था, परिणामलक्षी आस्था नहीं, वोही दृढ भरोसा।

'मानस-महाबीर' के वचनामृत को केन्द्र में रखकर 'रामचरित मानस' में उसकी कहां-कहां संलग्नता है, उसकी बातचीत हम कर रहे थे। कल तक हमने श्रीहनुमानजी की वंदना की। हनुमंततत्त्व प्राणतत्त्व है और साधना में प्राण की जरूरत है। भगवान के सखागण, सुग्रीव, जामवंत सबकी वंदना की। जनक की बेटी और करुणानिधान राम की प्रिय सीताजी माँ की वंदना तुलसी ने की। गायत्री को भी हम माँ कहते हैं। बुद्धि सब में है पर सवाल निर्मलता का है।

जहां सुमति तहँ संपति नाना।
जहां कुमति तहँ बिपति निधाना।।

मलयुक्त बुद्धि को माँ जानकी की कृपा से शुद्ध की जाती है। तुलसी कहते हैं, माँ, मुझे राम के पास पहुंचना है पर पहले मेरी बुद्धि को निर्मल कर दो। मेरी बुद्धि को शुद्ध करके मन-वचन-कर्म से भगवान राम की मैं वंदना करता हूं। राम और सीता एक ही ब्रह्म के दो नाम है। लीला के लिए वो ही तत्त्व ने नारी का और नर का अलग-अलग रूप लिया। तत्त्वत: अभिन्न है पानी और उनकी तरंग की तरह। शिव और पार्वती भी तत्त्वत: एक ही है। उसके बाद तुलसी नव दोहे में पूर्णांक में रामनाम की वंदना, महिमा का गायन करते हैं। कलियुग में नाम प्रभाव बहुत रहेगा। सतयुग में लोग ध्यान करते हैं। त्रेतायुग में बड़े-बड़े यज्ञ करते हैं, द्वापरयुग में घंटों तक पूजा-अर्चन प्रधान साधन था। पर कलियुग में पूर्ण नाम आधार आ गया। आज भी ध्यान और योग सबकी चर्चा चलती है। लोग करते भी हैं पर हरिनाम सहज-सरल है।

रघुवर के कई नाम है। विष्णु के सहस्र नाम भी है। रामनाम महामंत्र है और नाम भी है। शिवजी रामनाम का जप महामंत्र की मानसिकता से करते थे। गणपति 'राम राम' लिखते थे। वाल्मीकि ने उलटा नाम जपा तो भी शुद्ध हो गए। शिवजी विष पीते समय 'राम' बोले तो 'विश्राम' हो गया। नाम की महिमा है। चाहे राम का, माता का, महावीर स्वामी का, अल्लाह का, कृष्ण का, बुद्ध का लो। जिसमें रुचि हो वो नाम लो। कोई नियम नहीं। पूरा दिन काम करते समय भी कोई भी नाम लेते रहो। साधना कठिन है। नाम में कोई नियम नहीं। भाव-कुभाव से लो। लेकिन मौसम है, नाम लो। राजेन्द्र शुक्ल कहते हैं -

पुकारो गमे ते स्वरे हुं मळीश ज।
समयना कोई पण स्तरे हुं मळीश ज।

कोई भी लो नाम। जिस परंपरा में हो उसे छोड़ना नहीं। महावीर का है तो उसकी समता छोड़ना नहीं। संस्कार परिवर्तन करो पर धर्मपरिवर्तन नहीं। मांसाहारी है उसे शाकाहारी करो। अपना भी नाम ले सकते हो। मैं कथा में सभी धर्मों को सन्मान देता हूं, समन्वय करता हूं। तत्त्वत: सब एक ही है। स्वयं राम भी अपने नाम की महिमा का वर्णन नहीं कर पाते, ऐसा नाम का प्रभाव है।

मेरा हनुमंत स्वयं अरिहंत है

'मानस-महाबीर' की गुरुकृपा से, संतों की कृपा से साथ में मिलकर कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं संवाद के रूप में। जो पंक्तियों का आश्रय किया गया है इस कथा के मूल में, ये दोनों पंक्तियों हनुमंत के अरिहंतपने को सिद्ध करती है। ये महावीर (हनुमंत) आदि-अनादि अरिहंत है। जिस महावीर प्रभु की भूमि में बैठकर हम गायन कर रहे हैं और रोज हमारी प्रार्थना पर पूजनीया साध्वीजी नवकारमंत्र का गायन सुस्वर करती है उसमें 'नमो अरिहंताणं नमो सिद्धाणं', ये कोई केवल एक अरिहंत का नमस्कार नहीं हैं; ये विश्व में जितने भी अरिहंत हुए हैं, इन सभी अरिहंतों को मेरा नमस्कार, ऐसा कहा गया है। वर्ना तो भगवान महावीर प्रभु लिखते कि जैनों में जो परंपरा चली उसमें जो अरिहंत हुए, उसीको ही नमस्कार करता हूं। पर नहीं, भगवान महावीर महावीर है, कायर नहीं; कृपण नहीं, कृपालु है, उदार है।

आज मेरे श्रोता ने प्रश्न पूछा, कल भी था पर आज फिर पूछा है कि 'बापू, आपको महावीर प्रभु पर इतनी प्रीति क्यों?' आपको न हो तो आपका दुर्भाग्य! मुझे प्रीति है वो मेरा सद्भाग्य। भला! महावीर भगवान की कौन उपेक्षा कर सकता है? ये किसी को खुश करने के लिए मेरा वक्तव्य नहीं है। आपने पूछा है तो आज मुझे वहीं से शुरू करना है कि हनुमान आदि-अनादि अरिहंत है। बहुत जिम्मेवारी के साथ बात करूंगा क्योंकि भगवान महावीर की भूमि में वो प्रेरणा देते हैं, वो हमें आशीर्वाद दे रहे हैं। ग्रंथिमुक्त चित्त इसका इन्कार नहीं कर सकता। और ग्रंथियुक्त चित्त और शिकायती चित्त हो उसको अध्यात्म में प्रवेश करने का अधिकार नहीं है। तो भगवान महावीर के प्रति किसको प्रीत न हो? लोगों की धारणा बन गई कि बापू रामकथा कहते हैं; सनातन धर्मावलंबी है। ये तो सब रास्ते हैं बिलग-बिलग। पहुंचना तो एक मुकाम पर है। इसलिए कईयों को ये प्रश्न उठता है। मैं यहां आया उसके पूर्व जूनागढ़ में भी चर्चा हो रही थी कि बापू वहीं जाएंगे राजगीर और महावीर प्रभु पर बोलेंगे! कुछ आदर के साथ; कुछ व्यंगात्मक भी चर्चा हुई! लेकिन नासमझों को कौन समझायें?

भगवान बुद्ध के पास अपना एक निजी भिख्खु गया, 'तथागत, मेरे से सहा नहीं जा रहा!' 'क्या बात है भन्ते?' 'कुछ लोग बौद्ध धर्म की बहुत आलोचना करते हैं। मैं आपका भिख्खु हूं, पढ़ा-लिखा हूं; बहुत सूत्र पढ़े हैं, शास्त्र मेरे कंठस्थ हैं। आप कहो तो मैं शास्त्रार्थ करके उससे विजय करूं?' तथागत बुद्ध ने मुस्कुराते हुए कहा कि 'बेटा, तू भिख्खु है कि म्लेच्छ है?' ये बुद्ध का शब्द है। कोई कुछ कहे, हमें क्या लेना-देना?

अरिहंते शरणं प्रवज्जामि।
साहू शरणं प्रवज्जामि।

शरणागति के कितने सूत्र महावीर स्वामी लाये! और हमारी कथा शरणागति से ही शुरू होती है, 'श्री रामचंद्रं शरणं प्रपद्ये। श्री रामदूतं शरणं प्रपद्ये।' तो 'रामायण' गायक को महावीर से प्रेम होना ही चाहिए। न हो तो घाटे का सौदा है। एक ऐसी शरणागति कि बस, अब कहीं गिरना है; अपने आपको समर्पित करना है। आज 'विश्व कविता' का दिन है। जलन मातरी का शे'र है -

श्रद्धानो हो विषय तो पुरावानी शी जरूर?
कुरआनमां तो क्यांय पयंबरनी सही नथी।

भगवान शंकर को प्रेम मत कर, ऐसा समझाने के लिए 'रामचरित मानस' में सप्तर्षि गये पार्वती के पास। कहा, शंकर में इतने अवगुण, विष्णु में इतने सद्‌गुण है। पर्वत की बेटी, जिद्द छोड़; शंकर से शादी करने से क्या फायदा? तब पार्वती ने कहा, शरणागति गुण देखकर नहीं होती। बुद्ध ने कहा, भिख्खु! हम मलेच्छ नहीं है, शास्त्रार्थ करने में समय व्यर्थ न गंवाओ! हमें समय की महत्ता का ज्ञान नहीं इसीलिए हम समय कितना बरबाद किये जा रहे हैं! हमें समय की किंमत कहां यार! गंवाये जा रहे हैं, इर्ष्या में, निंदा में, कुथली में, राग में, द्वेष में! भगवान महावीर कहते हैं, पूरे नहीं तो कुछ तो अरिहंते होओ! तुम्हारे अंदर के जो अरि है ये द्वेष, ये काम, ये क्रोध, ये अहंकार, ये मद, ये सब दुरित! धर्म की, अपनी-अपनी परंपरा की जड़ता में इतनी नफ़रत इन्सान के लिए अच्छी नहीं। इनमें भी किसी बुद्धपुरुषों से नफ़रत! महावीर से प्रीति करना क्या गुनाह है?

गत सायंकाल बैठे थे कुछ भाई-बहन, मैंने कहा कि हिन्दु के इतने अवतार; मीन, वराह, आदि प्रधान रूप में दशावतार और उनमें आखिरी बुद्ध, कल्कि गिनाये हैं, लेकिन उसकी पूर्णता तो पाई गई भगवान कृष्ण में। वैसे इतने तीर्थंकर हुए। मुझे कल पूछा गया कि महावीर प्रभु ही की महिमा क्यों है? महावीर सबका जोड़ हैं! सब उसमें समाहित है। इसीलिए महावीर पूर्ण है। धर्म को गुफा में रख दिया है, बिलकुल भीतर! निर्णय करना मुश्किल है! तो धर्म का निर्णय कैसे करे? 'महाजनो येन गतः स पंथाः।' महान लोग चले वो धर्म। जहां महावीर चले वो धर्म; जहां गौतम चले वो धर्म; जहां कृष्ण चले वो धर्म; जहां राम चले वो धर्म। निर्णय कैसे करेंगे हम? और धर्म की परिभाषा हम सब करते हैं तब हमारी स्वार्थवृत्ति को केन्द्र में रखकर हम धर्म की परिभाषा करते हैं! धर्म को बड़ा अन्याय करते हैं! 'रामायण' में तो रावण भी धर्म की व्याख्या कर रहा है; वाली भी धर्म की व्याख्या कर रहा है। धर्म की व्याख्या कौन कर रहा है उस पर डिपेन्ड करता है। कोई सार्वभौम चेतना कहे तब धर्म की सही व्याख्या उठती है। हम पंथावलंबी लोग, हम संप्रदायवलंबी लोग, हम छोटी-छोटी पगदंडी निकालकर और वो भी दूसरों के खेतों में, धर्म की व्याख्या करते हैं! धर्म की जो आत्मा है। जैन धर्म कहता है कि करुणा; ये तो जैन धर्म का अमृत है। धर्म तो बाप! साहसी लोगों का काम हैं, व्यापारियों का काम नहीं है! भगवान महावीर स्वामी ने साहस किया है साहब! साहस चाहिए। रूपिये गिनकर धर्म नहीं होता! तो बड़ा मुश्किल है धर्म की व्याख्या करना! मेरी व्यक्तिगत धारणा में धर्म की सही व्याख्या वो कर सकता है जिसकी सत्य में निष्ठा हो, प्रेम में निष्ठा हो, जिसकी करुणा में निष्ठा हो।

तो, महावीर से प्रीति करना सौभाग्य है। मैंने कहा ना कि मेरे चित्रकूट के हनुमानजी के विग्रह को देखता हूं तो लगता है कि भगवान महावीर स्वामी बैठे है! कुछ क्षण के लिए चित्रकूट धाम का स्थान देरासर बन जाता है। प्रत्येक व्यक्ति को धर्म को इस रूप में समझना पड़ेगा। स्वार्थमूलक धर्म की व्याख्या इक्कीसवीं सदी के युवान नहीं कुबूल करेंगे। तो बाप! महावीर से प्रीत होना स्वाभाविक है। बुद्ध से किसको प्रीत नहीं होगी? 'वीरायतन' की इस कथा ये तो सौभाग्य है। और यहां कथा सुनने आये वो भी विशेष भाग्यवान है कि भगवान महावीर की इस साधना तीर्थ में रामकथा सुनी जा रही है। ये बड़ा सेतुबंध है। और सही में जिसमें बुद्धत्व उतरता है वो आभिजात्य छोड़े बिना विद्रोही होते हैं। आभिजात्य नहीं छोड़ते। खानदानी, कुलीनता, शालीनता, उसको वो कभी किनारे पे नहीं करेगा, लेकिन वो किसी की परवाह नहीं करता। साधु का एक लक्षण महावीर प्रभु ने कहा, सेई। साहू के लक्षण बताते हुए महावीर स्वामी पशुओं से तुलना करते हैं। मैं पावापुरी गया भगवान के स्थान पर, तो वहां मुझे साध्वीजी बता रही थी, उसके नीचे सब पशुओं के सिर रखते थे। महावीर को पशुओं के साथ बहुत बनती थी। वो पशु की भाषा समझ जाते थे। और साधु की व्याख्या अभी तक मैंने ऐसी नहीं सुनी, जो महावीर स्वामी ने की है।

भगवान महावीर के इस साधनातीर्थ में हम और आप आये वो हमारा विशिष्ट भाग्य है। यहां नव दिन में हमारे आंतरिक जीवन में कुछ घट सकता है। 'वीरायतन' मेरी दृष्टि में एक धर्मशाला नहीं है, एक

प्रयोगशाला है। यहां हम विशेष जागृत हो सकते हैं। ये 'वीरायतन' की होली है। होली (Holy) माने पवित्रता। यहां नव दिन की होली खेलने के लिए हम आये हैं। मूल परंपरा में जाओ तो बहुत नीरसता हैं। लेकिन यहां गाया जाता है; सुर में गाया जाता है। जीवन में रस तो होना चाहिए। बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य, कितने अच्छे लोग हैं! जिसके साथ बैठकर आप बातें कर सकते हैं। आप पूछते हैं कि आपको महावीर से, महावीर के सूत्रों से इतनी प्रीति क्यों? सूत्र 'रामायण' के हनुमान के सब मिलते-झूलते हैं। मैं साधार कहना चाहूंगा। मैं प्लंबरिंग नहीं करूंगा! इसको यहां से लेकर वहां जोड़ दिया, नहीं! ये गंगधारा है। इसलिए मेरा आज का निवेदन है कि मेरा हनुमंत स्वयं अरिहंत है। अप्रमाद से भरपूर मेरा हनुमान अचौर्य है। मेरा हनुमान अकाम है; अपरिग्रही है; आदि-अनादि महावीर है। महावीर की व्याख्या क्या? 'हनुमानचालीसा' में लिखी है -

भूत पिशाच निकट नहिं आवै।
महाबीर जब नाम सुनावै।।

भूत को मैं भूतकाल कहता हूं। पिशाच को मैं भविष्यकाल कहता हूं। भूत और भविष्य जिसको पकड़ न सके उसका नाम महावीर है। वर्तमान में जीया जाय। अतीतानुसंधान छोड़ा जाय और भविष्य की चिंता छोड़ी जाय। जो वर्तमान में निरंतर रत है वो महावीर। मुझे ये इति सिद्धम् नहीं करना है। ये है, खोला नहीं गया। संप्रदायों की संकीर्णता को लेकर उसको छुआ नहीं गया! इतनी मूल्यवान वस्तु को लोगों ने छुआ तक नहीं!

तो, मैं एक ओर दादाजी के चरणों में बैठकर पढ़ता था। हमारे गांव में चार फेमिली जैनों के रहे। अब कोई नहीं रहे; चले गए मुंबई। एक बड़ौदा में है। एक फेमिली महुवा में हीराचंद मोतीचंद शाह। उसकी एक दुकान अभी भी तलगाजरडा में है। रोज सुबह आते हैं, शाम को जाते हैं। चार फेमिली में एक पोपट फूलचंद, उमीद फूलचंद और उनका छोटा भाई चंदुभाई फूलचंद। हम सब साथ में पढ़ते थे तलगाजरडा की प्रायमरी स्कूल में। तो वहां एक पुराने घर में, भगवान महावीर स्वामी का छोटा-सा मंदिर जैसा था। और दो-तीन आचार्य मुंबई से आये और साध्वी-साधक लोग भी आये। आठ दिन का उत्सव तलगाजरडा में था। वहां उसके प्रवचन चलते थे। तो हम साधु के बच्चें त्रिकमबापू, नरहरिबापू, छगनबापू; वे सब अभी भी है। त्रिकमबापू ने कहा, दादा को पूछ लें पहले कि वहां जा सकते हैं कि नहीं? मैंने कहा था, मेरे दादा कभी मना नहीं करेंगे। और जब पूछा गया तो दादा तुरंत कहे, इसमें मुझे पूछने की जरूरत है? जाओ। जहां शुभ बातें होती है वहां जाना ही चाहिए। घर में आये हैं महावीर। तलगाजरडा में आये हैं तो जाओ, सुनो। मेरी प्रीत का कारण क्या है? ये भी तो एक कारण है। हम रोज वहां जाकर सुनते थे, 'नमो अरिहन्ताणं। नमो सिद्धाणं।' तभी से मेरा सोचना शुरू हो गया था कि मेरा हनुमंत स्वयं अरिहंत है। ये महान परमतत्त्व जो है इसको हम संकीर्ण क्यों बनाये? तो मुझे बड़ी खुशी है कि भगवान के सूत्रों को मैं गा रहा हूं। और कितने सरल सूत्र है साहब!

अरिहंत उसको कहते हैं जो भीतर के शत्रुओं को मार दे। और हनुमानजी ने भीतर के शत्रु को मारे कि नहीं? आप लीला क्षेत्र देखेंगे तो युद्ध में हनुमानजी राक्षसों को मारते हैं। तुलसी ने स्वयं कहा है कि राक्षस दुर्गुण की शृंखला है। हनुमान ने लंका जलाई वो तो हिंसा का दृश्य दिखाई देता है, लेकिन लंका स्थूल रूप में एक ऐतिहासिक नगरी को छोड़ दो; ये आध्यात्मिक नगरी है। अत्यंत प्रवृत्ति का नाम लंका है और जो अत्यंत प्रवृत्ति को जलाकर निवृत्ति में चला जाय वो अरिहंत नहीं तो कौन? और ये पंक्ति का आधार है। दोनों में अरिहंत की व्याख्या है।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

हनुमान महावीर है, क्योंकि वो 'हनुमान' है। 'हनुमान' का शाब्दिक अर्थ होता है, जिसने अंदर के अहंकार, मान, अभिमान को हनु-हनन कर दिया हैं, उसीका नाम हनुमान है। हो गया अरिहंत। और राम-परमतत्त्व उसकी प्रशंसा करे और अभिमान न आये, कितना बड़ा अरिहंत रहा होगा! 'म'कार को समझ ले वो महावीर है। मद को समझ ले कि अभिमान क्या है? ये नष्ट तो ईश्वर की कृपा से होता है। दूसरा, मदन- काम को समझ ले। तीसरा,

मत्सर, इर्ष्या, द्वेष, प्रतिशोध को समझ ले। चौथा, ममता को समझ ले कि ममता क्या हैं और समता क्या है? पांचवां, उसी अवस्था को प्राप्त हो जाने के बाद भी जो आदमी जहां है वहां से कोई भी प्रलोभन उसे नीचे ना ला सके; कोई भी महत्ता, कोई भी प्रतिष्ठा उसको गिरा न सके ऐसी महत्ता के 'म' को भी जो जीत लेता है उसको मेरी व्यासपीठ महावीर कहेगी। और भगवान महावीर को देखो। है मद वहां? मदन का तो प्रश्न ही नहीं उठता। ममता का सवाल ही नहीं। अभी जो पूजनीया साध्वीजी ने कहा, मुंडन करने से बात नहीं होती है, मन का मुंडन करने से बात होती है।

ना केवळ मंदिरना ए तो मनना होय महंत,
भगतिने मारग लइ जइने देखाडे भगवंत।
एनुं नाम ज संत।

- नीतिन वडगामा

कोई स्थान का महंत नहीं, जो अपने मन का महंत हो उसकी महिमा है। तो जिसको ममता नहीं, मद नहीं, मदन नहीं, मत्सर नहीं, सभी रिपु को इस अरिहंत ने जीते थे। कोई महत् पद ने उसको अहंकारी नहीं बनाया था। तो श्रीहनुमानजी को देखता हूं तो भगवान महावीर स्वामी के इन सूत्रों को वहां मैं पाता हूं 'मानस' के आधार पर कि ये अरिहंत है। हनुमानजी सिद्ध है। अरे, सिद्ध क्या, वो तो सिद्धि देनेवाला है।

अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता।
अस बर दीन्ह जानकी माता।।

हनुमानजी आचार्य है -

जै जै जै हनुमान गोसांई।
कृपा करौ गुरुदेव की नांई।।

साधु को नमस्कार हो! मंत्र में 'साहू' शब्दप्रयोग करते हैं। हनुमानजी साधु नहीं है क्या? अरे, साधु तो क्या, साधु की रक्षा करता है।

साधु संत के तुम रखवारे।
असुर निकंदन राम दुलारे।।

अरिहंतपना भी यहां कहा है। विक्रमवान आदमी अरिहंत हो सकता है, महावीर हो सकता है।

महाबीर बिक्रम बजरंगी।
कुमति निवार सुमति के संगी।।

जो वज्रांग होगा; जिसका हाथ कोई दुरित में कभी गया न हो; जिसके पैर ने अशुभ के प्रति गति न की हो। जिसकी आंखों ने कभी किसी के प्रति कोई ऐसी दृष्टि से देखा न हो। हनुमानजी अहिंसक है, सच में। हनुमानजी अचौर्यव्रती है। हनुमानजी को लंकिनी ने कहा, मेरा आहार ही चोर है। हनुमानजी ने कहा, मैं चोर? चोर तो सब से बड़ा है रावण, जिसकी तू सेवा करती है! वो मेरी माँ को चुरा कर ले आया है, मैं काहे का चोर हूं? हनुमानजी ने अचौर्य सिद्ध किया है। अकाम; निष्कामता तो कैसी! अखंड ब्रह्मचर्य की मूर्ति। शुद्ध संकल्प की प्रतिमा। इसकी निष्कामता देखो! लंका में नर, नाग, सुर, गंधर्व की अति रूपवती कन्यायें रात को घूम रही हैं; उसी समय हनुमानजी के मन में कहीं विकार का जन्म नहीं हुआ। ये अकाम हैं। अपरिग्रह; पूरा अपरिग्रही है हनुमान। वैराग्य का घनीभूत रूप है श्रीहनुमान। उनमें अप्रमाद है -

राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम।

ये अप्रमाद तत्त्व भी सिद्ध हो जाता है। तो हनुमानजी है अरिहंत।

नमो अरिहंताणं। नमो सिद्धाणं।

इतना सरल, शुद्ध और सिद्ध मंत्र कहां खोजोगे? और कुछ नहीं, बस, हम सिद्धों को नमन करते हैं। हम दुनिया में जो भी अरिहंत है उसको प्रणाम करते हैं। हम साधुओं को प्रणाम करते हैं। हम आचार्यों को प्रणाम करते हैं। और ये पंच नमस्कार प्राण है जैन धर्म का।

'मानस-महाबीर'की कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम कर रहे हैं। कुछ ओर सोचें। ये कोई उपदेश नहीं, प्रभु की कृपा और माँ के आशीर्वाद से बातें कर रहे हैं। खुल्ले कान से सुनना, दूसरे कान से निकाल देना ताकि नया आ सके। कल 'मानस' के आधार पर महावीर के अमृत वचन को आपके सामने रखा कि 'रामचरित मानस' बार-बार कहता है, सुनो, श्रवण करो, श्रवण करो। वो ही 'रामचरित मानस' कहता है, शरणागति, शरण ग्रहण करो, शरण ग्रहण करो। भगवान महावीर ने भी यही कहा कि अरिहंत के शरण का मैं स्वीकार करता हूं; मैं सिद्धों के शरण का स्वीकार करता हूं; मैं साधु के शरणों का स्वीकार करता हूं। तो मैं लिखकर लाया, सब बोलो। पावन सूत्र है, प्रभु की बानी-

अरिहंते शरणं प्रवज्जामि।
सिद्धे शरणं प्रवज्जामि।
साहू शरणं प्रवज्जामि।
केवलीपन्नत्तं धम्मं शरणं प्रवज्जामि।

ये चारों की शरण हम स्वीकार करते हैं। पांच हजार वर्ष पहले भगवान कृष्ण ने ये कहा, 'मामेकं शरणं व्रज।' हुक्म! मेरी शरण में आ जा! लोगों को लगता है, थोड़ी अहंकार की घोषणा है। लेकिन फिर पचीस सौ साल के बाद भगवान महावीर ने जो सूत्रपात किया उसमें हुक्म नहीं है, 'हम अरिहंत की शरण स्वीकार करते हैं।' वहां सिद्ध के द्वारा हुक्म, यहां साधकों द्वारा शरणागति। हम जा रहे हैं! बुद्ध में भी फ़र्क है, बुद्ध कहते हैं, 'बुद्धं शरणं गच्छामि।' मैं बुद्ध की शरण में जाता हूं। और यहां, मैं अरिहंत की शरण कुबूल करता हूं, उसमें फ़र्क है। जाता है वो लौट भी सकता है। जाने के बाद कुछ ऐसा-वैसा हुआ तो निकल भी सकते हैं! पर यहां तो सीधा स्वीकार है, हम अरिहंत की शरणागति स्वीकार करते हैं। तो ये ज्यादा प्रेक्टिकल लगता है। और 'रामचरित मानस' 'शरण में आ जा' वो भी कहता है और जानेवाले साधक भी कहता है कि मैं शरण में आऊं। ये दोनों का जुगपद निर्वाह 'मानस' में है।

तेउ सुनि सरन सामुहें आए।
सकृत प्रनामु किहें अपनाए।
श्रवन सुजसु सुनि आयऊँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर।।

●

मोरें सरन रामहि की पनही।
राम सुस्वामि दोसु सब जनही।।

शरणागति के सभी सूत्रों को तुलसीदासजी एक धागे में पीरो रहे हैं। यहां भगवान महावीर के दिव्य वचन, उसमें पहला वचन है -

अरिहंते शरणं प्रवज्जामि।

हम अरिहंत की शरणागति स्वीकार करते हैं। मेरे भाई-बहन, हमारे जैसे जंतुओं के लिए है, कोई अरिहंत मिल जाय तो उसकी शरण स्वीकारो। उसके आश्रय में जीओ, बस!

दूसरा, जो सिद्ध है उसकी शरण। और आप सालों से सुनते हैं, मैं सिद्ध के साथ हंमेशा शब्द जोड़ देता हूं 'शुद्ध।' कभी-कभी सिद्ध लोग शुद्ध न भी हो; हो सकता है। यहां 'सिद्ध' शब्द आता है, वो शुद्ध का पर्याय है; शुद्ध का सगोत्रीय है। जो परिपूर्ण है, आरपार है। तुलसी कहते हैं -

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही।
चितवहिं राम कृपा करि जेही।।

'साधु की शरण मैं स्वीकारता हूं।' 'साधु' शब्द बड़ा प्यारा है। मैं साधु की व्याख्या यही करता हूं कि सादुं जीवन, ऐनुं नाम साधु। व्यवहार सादा, वाणी सादी, भोजन सादा, लिबास सादा, वो साधु। जिसका जीवन साबून जैसा हो वो साधु। दूसरों के लिए घीस जाय, दूसरों के मेल को निकाल दे और धन्य कर दे वो साधु! जेनुं जीवन सामु, वो साधु। समाज के सामने जीवन हो, आरपार हो वो साधु। और मुझे बहुत रास आयी व्याख्या मैं जितना समझ पाउं, भगवान महावीर की कृपा से, माँ के आशीर्वाद से, करीब-करीब चौदह लक्षण बताये साधु के।

मेरा हनुमंत स्वयं अरिहंत है। अरिहंत उसको कहते हैं जो भीतर के शत्रुओं को मार दे। और हनुमानजी ने भीतर के शत्रु को मारे कि नहीं? आप लीला क्षेत्र देखेंगे तो युद्ध में हनुमानजी राक्षसों को मारते हैं। तुलसी ने स्वयं कहा है कि राक्षस दुर्गुण की शृंखला है। हनुमान ने लंका जलाई वो तो हिंसा का दृश्य दिखाई देता है, लेकिन लंका स्थूल रूप में एक ऐतिहासिक नगरी को छोड़ दो; ये आध्यात्मिक नगरी है। अत्यंत प्रवृत्ति का नाम लंका है और जो अत्यंत प्रवृत्ति को जलाकर निवृत्ति में चला जाय वो अरिहंत नहीं तो कौन?

साहू शरणं प्रवज्जामि।

साधु कौन? सही; सही का अर्थ है सिंह। साधु वो जिसमें सिंह जैसा पराक्रम हो। संघ से डरे ना। ट्रस्टी उसे दबाये ना। सिंह जैसा साधु पराक्रमी हो। कहते हैं, सिंह अकेला खाता नहीं। मैंने गीर में अपनी आंखों से देखा है। एक शेर ने मारण किया था, वो खाकर थोड़ा पीछे हट गया और वहां और पशु थे उसको मौका दिया, तुम भी खाओ, भंडारा चल रहा है! पराक्रमी है सिंह। तुम्हारी फरमाइश पर सिंह गर्जना न करे। साधु भी शेर की तरह कभी-कभी तो अकेला फिरता है! भीड़ तो भेडों की होती है। महावीर स्वामी अकेले-अकेले घूमे हैं! हम भी इतने तेरह-चौदह लक्षण कहीं भी देखें, शरण हो जाओ। देर क्यों करो? दूसरा, 'गय।' गय माने हाथी। हाथी जैसा जिसमें स्वाभिमान हो वो साधु। गज़ब का स्वाभिमान होता है हाथी को! हाथी को कभी सिद्ध नहीं करना पड़ता कि मैं हाथी हूं। साधु को सिद्ध करना नहीं पड़ता कि मैं साधु हूं। साधु अपनेआप में मस्त रहता हैं, अपने आप सिद्ध हो जाता है। आज भी कहते हैं, कुत्ते कितने भौंके, हाथी अपने स्वाभिमान में चलता रहता हैं। लोग निंदा करते रहे, गालियां बकते रहे, पीछे-पीछे दौड़ते रहे, नेटवर्क बनाये, कुछ भी करे, लेकिन साधु हाथी की चाल में चलता है। साधु वो है जो गय की तरह स्वाधीन है। राम साधु है, तुलसी ने लिखा। राम को हाथी भी कहा। राम ने राजाओं की आलोचना को हाथी की तरह अनसुनी कर दी।

तीसरा, बसह, बैल। हमारे शास्त्रों में बैल को भद्र कहा है। शंकर के सामने बैठा रहता है, ये प्राणी भद्र हैं। ये धर्म के अभिमुख रहता है। संसार में बैलों की भद्रता ऐसी मानी जाती है, ये सब मिलकर बल का प्रयोग करे तो मानवजात को बचना मुश्किल हो जाय, इतना उसका सामर्थ्य है। लेकिन उनकी भद्रता है। साधु को आत्मबल, साधना बल होता पर वो किसी को पीड़ित करने के लिए प्रयोग नहीं करता। चौथा, मृग। साधु मृग के समान सरल होता है। हिरन देखिएगा, उसकी आंखें देखिएगा; जिसमें मासुमियत होती है, वो ज्यादातर मातृशरीर में दिखता हैं, उसको मृगसावक नैन कहते हैं। जिसका बिलकुल निर्दोष चित्त, कुंआरा चित्त। साधुका एक लक्षण बताते हुए महावीर स्वामी कहते हैं जिसकी आंखें बिलकुल कुंआरी हो, विकारशून्य हो। नेत्र आक्रमणखोर भी होते हैं, नेत्र हिंसक भी होते हैं! जुबां और आंख इन्सान का परिचय दे देती है। जिसकी आंखें मृग के बालक जैसी सरल, निर्दोष हो वो साधु का लक्षण बताया है। पशुओं की तरह जो निरीह होता है। निरीह का एक अर्थ होता है इच्छामुक्त। पशुओं की कोई इच्छा नहीं होती। पशु जो मिलता है वो खा लेता है। साधु भी जो मिला, खा लिया भिक्षा के रूप में। ये 'भिक्षा' शब्द बहुत प्यारा है। अन्न पर जीवन है तो साधु भोजन तो करेगा ही लेकिन भिक्षाभाव से। जो वायु-सा नि:संग होता है वो साधु। पवन की तरह असंग हो। बगीचे से वायु गुजर जाय, खुश्बू मिली, ठहरा नहीं। बस, बहना असंग हो कर। कोई गंदगी पर से वायु गुज़रे तो वहां भी नहीं ठहरता; असंगता। सूर्य की तरह तेजस्वी हो वो साधु। सीधी-सी बात है, पीछले जो गुण बताये वो जिसमें होगा, वो तेजस्वी हो ही जाएगा। वो हमें प्रकाशित तो करे पर हमें सम्यक् दूरी पर रखें। सूरज के उजाले में हम जीवन पा लेते हैं; सूरज के पास नहीं जाते। एक नियत डिस्टन्स साधु बना रखता हैं।

साधु सागर-सा गंभीर होता है। भगवान महावीर साधु की बात करते हुए कहते हैं, जो समुद्र की तरह गंभीर रहता है; मेरु की तरह जो निश्चल रहता है। जैन धर्म में भी मेरु की प्रतिष्ठा है। साधु ऐसा है जो निश्चल है; मेरु की तरह स्थिर है। कोई भी घटना तिरस्कार-पुरस्कार, सुख-दु:ख, निंदा-स्तुति, जिसकी अवस्था को चलित न कर सके, वो साधु-लक्षण महावीर प्रभु ने बताया। जो चंद्र-सा शीतल हो। चंद्र का एक बहुत बड़ा लक्षण है, सबको आह्लादित करना, तरंगायित करना। चंद्र की पूर्णता को लेकर समुद्र ही तरंगायित होता है, उतना ही नहीं, मानवी का मन भी प्रसन्नता और आह्लाद से भर जाता है। साधु वो है जिसकी शीतलता के परिसर में आते ही आदमी का मन प्रसन्न हो जाता है। उसी को बुद्धपुरुष समझना, उसीका शरण स्वीकार करना, जहां जाने से हमारा मन प्रसन्न होने लगे। मणि के समान जिसमें कांति होती है। मणि की तरह एक आभा, एक प्रभा, एक तेजस्विता, मूल्यवान ओरा ये साधु की पहचान है। और पृथ्वी-सी सहिष्णुता; पृथ्वी के समान धैर्य, सहनशक्ति।

आखिर में साधु के दो लक्षण। सर्प-सा अनियत आश्रित। सर्प का कोई घर नहीं होता। सर्प घर बनाता नहीं। उनका निवास अनियत होता है। वैसे सर्प की तरह उसकी स्थिति होती है। वसीम बरेलवी का एक शे'र है -

वो जहां भी रहेगा, रोशनी लुटायेगा।
चरागों को अपना कोई मकां नहीं होता।

दीपक को अपना कोई स्थान नहीं होता। जहां भी रख दो उजाला कर देगा। साधु घूमता रहता है, अनिकेत; और आखिर में लिखा है, आकाश की तरह निरालंब हो वो साधु का लक्षण है। कोई खंभा नहीं है आकाश का। साधु किसी पर आधारित नहीं होता। साधु दो पर आधारित होता है, एक अपने गुरु की कृपा और दूसरा गुरुकृपा से की हुई साधना। इसीलिए महावीर प्रभु कहते हैं, हम साधु की शरण स्वीकार करते हैं। 'रामचरित मानस' में भी शरणागति आई है, विभीषण की शरणागति, पार्वती की, भरतजी की, आदि कितनी शरणागतियां है! तो बाप! 'मानस' से महावीर के सूत्र जुड़ता है तो ज्यादा बल मिलता है।

आईये, थोड़ा कथा का क्रम। कल की कथा के क्रम में तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में प्रभु के नाम की महिमा का बहुत वर्णन किया। और कलियुग का प्रधान साधन; सरल, सुलभ साधन है प्रभु का नाम। चाहे कोई भी नाम हो परमतत्त्व का। 'रामायण' के सर्जक वाल्मीकि हैं। वाल्मीकि को हम आदि कवि कहते हैं। लेकिन 'रामचरित मानस' के सर्जक शिव हैं और वो अनादि कवि हैं। कालांतर में शिव ने कथा कागभुशुंडि को दी। कागभुशुंडि महाराज ने गरुड को दी। फिर वो ही कथा धरती पर तीर्थराज प्रयाग में त्रिवेणी संगम के तट पर भरद्वाजऋषि का आश्रम, वहां याज्ञवल्क्य को मिली। उसने भरद्वाज प्रति गाया और तुलसी कहते हैं, इसी शृंखला में मैंने मेरे गुरु से वराह क्षेत्र में सूकर क्षेत्र में ये कथा सुनी। तुलसी ने अयोध्या जाकर संवत् १६३१ में रामनवमी के दिन यह चरित्र को प्रकाशित किया, सर्जन किया। तुलसी ने कहा, लिखी शिव ने, मैंने उसका प्रकाशन किया।

कथा को मानसरोवर की उपमा दी। इसके चार घाट-ज्ञानघाट, उपासनाघाट, कर्म का घाट और शरणागति का घाट। ज्ञानघाट पर शिव प्रवक्ता बनकर बैठे हैं और श्रोता के रूप में पार्वती बैठी है। ज्ञानपरक कथा शिव सुनाते हैं। कर्मघाट है तीरथराज प्रयाग। जहां याज्ञवल्क्य जैसे परमविवेकी महापुरुष ये कथा भरद्वाजजी को सुनाते हैं। तीसरा घाट है उपासना-साधना का घाट, जहां कागभुशुंडि नीलगिरि पर्वत पर गरुड को श्रोता बनाकर अन्य पक्षीओं को, हंसों को श्रोता बनाकर रामकथा सुनाते हैं। चौथा घाट प्रपत्ति का, शरणागति का, जहां बैठकर तुलसी अपने मन को रामकथा सुनाते हैं और कुछ संतगण सुनते हैं। तुलसीजी कथा का आरंभ करते हैं और हमको लिए चलते हैं तीरथराज प्रयाग में जहां कर्मघाट पर याज्ञवल्क्य कथा सुनाते हैं। शरणागति से कर्म के घाट की ओर ले चलते हैं। ये क्रम भी बड़ा प्यारा हैं। शरणागति का अर्थ ये नहीं कि प्रमादी हो जाय। वर्ना शरणागति के नाम पर आदमी प्रमादी हो सकता है।

प्रयाग में प्रतिवर्ष कुंभ लगता हैं। एक बार वहां कुंभ का मेला लगा। सब महात्मा कल्पवास करके बिदा लेने लगे। आखिर में याज्ञवल्क्य ने बिदा मांगी तब भरद्वाजजी ने चरण पकड़कर कहा कि महाराज, एक संशय है। ये रामतत्त्व क्या है जिसका नाम निरंतर शिव जपते हैं, उपनिषद जिसकी महिमा गाते रहते हैं? याज्ञवल्क्य महाराज ने भरद्वाज को श्रोता बनाकर कर्म के घाट पर रामकथा का आरंभ किया। पहला प्रसंग शिवचरित्र उठाया। भरद्वाजजी ने राम के बारे में पूछा और महाराज ने पहले शिवकथा सुनाई। रामचरित कहना है और पहले शिवचरित्र कहा, ये सेतुबंध है। जोड़ो सबको। क्या वैष्णव, क्या शैव, क्या शाक्त? और धर्म की यही परिभाषा होनी चाहिए कि जोड़े सो धरम, तोड़े सो धरम नहीं। वर्ना शैवो, वैष्णवों में मेल बैठता है? हरेक परंपरा में ये झंझट है! कोई जुड़ते ही नहीं! तुलसी ने सभी के बीच सेतु रचा और रामकथा के आरंभ में शिवकथा कही। शिव है द्वार राममंदिर में जाने का। शिव और सती एक बार कुंभज ऋषि के आश्रम में जाते हैं, कथा श्रवण करते हैं।

मानस-महाबीर : ४

श्रमण संस्कृति आसान है, ब्राह्मण संस्कृति ज्यादा आसान है, कठिन है स्मरण संस्कृति

'मानस-महाबीर', 'रामचरित मानस' को केन्द्र में रखते हुए बात कर रहे हैं। हनुमान मेरी दृष्टि में आदि-अनादि अरिहंत है। अरिहंतपद प्राप्त है, अप्रमादी है, अपरिग्रही है, अचौर्य है, अकाम है, अहिंसक है। 'खल बन पावक ग्यानघन' हनुमानजी के लिए लिखा है। यही तो उनका अरिहंतपद है। जो भीतर के दुश्मन है, जो भीतर के दुरित है, जो दुर्वृत्तिओं का जंगल हमारे अंदर भरा हुआ है उसको जलाने में जो ज्ञानाग्नि है। और फिर जो ज्ञान की वर्षा है और जिसके हृदय में परमतत्त्व रामरूप में विराजित है, ऐसे हनुमानजी के चरणों में गोस्वामीजी प्रणाम करते हैं। इसी अर्थ में हनुमानजी अरिहंतपद प्राप्त है। आदि अरिहंतपद, आदि अप्रमाद, आदि अपरिग्रह। माँ ने कल बहुत सुंदर कहा कि भगवान महावीर तो अपरिग्रह की व्याख्या वहां तक करते थे कि दिगंबरी हो और व्यक्ति को यदि एक चींथडे पर भी आसक्ति रही तो वह परिग्रही है। और सुवर्ण सिंहासन पर भी कोई जो जयजयकार के साथ आसीन हो, लेकिन उसमें कोई आसक्ति नहीं, कोई वासना नहीं, तो वो सिंहासन पर बैठे हुए भी अरिहंतपद प्राप्त है, अपरिग्रही है।

तो बाप! श्रीहनुमानजी ये सब कुछ है। आपके सामने ये नव दिन यही चर्चा रहेगी कुछ-कुछ संदर्भ लेकर। एक तो 'रामचरित मानस'; 'वाल्मीकि रामायण' को एक विशेष दृष्टि से समझना पड़ता है। वाल्मीकि के राम और तुलसी के भी राम ही है। सबके अपने-अपने राम होते हैं, होने चाहिए। तुलसी का राम हो। मोरारिबापू का राम हो। आपका राम हो। सबका राम होना चाहिए। ये सबको अधिकार है। लेकिन तत्त्वत: राम एक है। तो 'रामचरित मानस' में जो-जो सूत्र है, वही सूत्र भगवान महावीर स्वामी का दर्शन करता हूं तो इस निर्ग्रंथ तीर्थकर के जीवन में दिखते हैं। भगवान राम क्या है? तुलसी ने लिखा, चौपाई सुनियेगा -

आदि अंत कोउ जासु न पावा।
मति अनुमानि निगम अस गावा।।

ये परमतत्त्व, कोई उसको राम कहे, कोई कृष्ण कहे, कोई महावीर कहे, कोई बुद्ध कहे, कोई जिसस कहे। जिसको जो कहना है वो कहे। ये आदि-अनादि तत्त्व राम, उनका दर्शन कराते हुए तुलसी का 'रामचरित' जिन सूत्रों की चर्चा करता हैं वो निर्ग्रंथ भगवान महावीर में दिखते हैं। जो राम में है, वो महावीर में है। राम में शायद वो पीतांबरी में दिखते हैं, लेकिन महावीर में वो दिगंबरी में दिखते हैं। और तीसरे हनुमान। हनुमान में जो-जो सूत्र दिखते हैं वो पचीस सौ साल पहले विश्व को मिला वरदान भगवान तीर्थंकर महावीर प्रभु में दिखते हैं! आज मुझे ऐसे 'मानस' के राम के और हनुमान के खास करके 'मानस' में जो प्रतिपादन किया है, इन तीन सूत्रों की चर्चा संवादी सूर में करनी है।

एक, भगवान महावीर स्वामी कहते हैं; मैं लिखकर लाया हूं। उच्चारण भी मुझे तकलीफ़ देते हैं! लेकिन मैंने लिख लिया है। फिर भी भूलचूक हो तो माफ़ करना। भगवान महावीर स्वामी के शब्द है। आप भी बोलियेगा।

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसंति जस्स धम्मे सया मणो।।

भगवान महावीर प्रभु के ये अमृत वचन है। 'मानस' के आधार पर उसकी चर्चा आपके सामने करूं! वो धर्म परम मंगल है; वो धर्म परमश्रेष्ठ है। 'मंगल' शब्द आया तो मुझे 'रामचरित मानस' सीधा मेरे अंदर नर्तन करने लगता है! क्योंकि 'रामचरित मानस' ने 'मंगल' शब्द की वर्षा की है।

मंगल करनि कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।

कितनी बार 'मंगल' शब्द की वर्षा हुई है 'मानस' में! भगवान महावीर स्वामी कहते हैं, वो धर्म मंगलमय है, मंगलरूप है, सर्वश्रेष्ठ है, परम है। लेकिन कौन-सा धर्म? जो परममंगल है; परमश्रेष्ठ है। सब तो अपनी-अपनी बात करते हैं कि हमारा धर्म श्रेष्ठ है। एक धर्मवाले कहते हैं, हमारा श्रेष्ठ! दूसरा कहता है, हमारा श्रेष्ठ! ये सिद्ध करने में ये पृथ्वी लाशों से दबी हुई है! 'रामचरित मानस' में ही आप देखो तो धर्म की कितनी बिलग-बिलग परिभाषाएं है! स्मृति में आये इतनी बता दूं।

पर हित सरिस धर्म नहीं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।

गोस्वामीजी 'रामचरित मानस' में कहते हैं, दूसरों के हित करने के समान कोई धर्म नहीं। एक व्याख्या फिर तुलसी वही 'रामचरित मानस' में कहते हैं -

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना।
सेवाधरमु कठिन जगु जाना।।

आगम-निगम-पुरान सब ने बखाना है कि सेवा के समान कोई धर्म नहीं। दूसरी परिभाषा आई। फिर कहते हैं, सत्य के समान कोई धर्म नहीं, असत्य के समान कोई पाप नहीं। फिर एक जगह कहते हैं -

धर्म न दुजा सरिस हरि जाना।

हे गरुड, दया के समान कोई धर्म नहीं। लेकिन इन सबमें जब श्रेष्ठ धर्म जिसको भगवान महावीर कहते हैं -

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं।

जो श्रेष्ठतम मंगल धर्म की व्याख्या भगवान महावीर करते हैं। तो 'रामचरित मानस' में भी प्रमाण मिलता है। 'रामचरित मानस' ने श्रेष्ठतम धर्म का परिचय कराते हुए कहा है -

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।

'मानस' ने कहा, परम धर्म तो अहिंसा ही है। और भगवान महावीर अहिंसा को ही परमधर्म कहते हैं। ये साधार है। कोई मेरी जेब से निकली हुई बात नहीं! प्रस्तुति मोरारिबापू की हो सकती है। प्रागट्य तो ओलरेडी पहले से हुआ है। परम धर्म अहिंसा है। कौन श्रेष्ठ धर्म? तो तीन वस्तु भगवान महावीर कहते हैं। कौन परममंगल? तो बोले, अहिंसा। फिर दूसरा कहे, संजमो, संयम। और 'रामचरित मानस' में संयम की बहुत सटीक और सम्यक् व्याख्या है। और श्रेष्ठ धर्म का उद्घाटन करते हुए भगवान महावीर कहते हैं, 'तपो।' यानी तप श्रेष्ठ धर्म। और 'रामचरित मानस' ने तपरूपी धर्म की भूरीश: चर्चा की है। ये तोड़-जोड़ के बिठाना नहीं है। ये ओलरेडी है। तो भगवान महावीर स्वामी कहते हैं, श्रेष्ठ और मंगल धर्म दुनिया में है अहिंसा, संयम, तप।

देवा वि तं नमंसंति।

ऐसा धर्म जो संलग्न हो जाता है। ऐसे धर्म को अपने जीवन में रोमरोम में स्थापित कर देना है।

धारणात् धर्म्मम् इत्याहु।

हमारे यहां आया है सूत्र कि धर्म मानी क्या? जो सबको धारण करे वो धर्म। प्रश्न ये आता है कि धर्म सबको धारण करता है, लेकिन वो धर्म को कौन धारण करे? धर्म को भी तो कोई धारण करना चाहिए। तो 'रामचरित मानस' में तलगाजरडी आंखों से जब मैं दर्शन करता हूं, तो मुझे लगता है कि धर्म को धारण करते हैं भरतजी। कभी राम, कभी भरत। ऐसे संत, ऐसे पयगंबर, ऐसे महात्मा, ऐसे तीर्थंकर वो धर्म के धारक है। वो धर्म को धारण करते हैं। ऐसा धर्म, अहिंसा, तप और संयम और ऐसा धर्म जो जीवन में रखता है इसको देवता नमस्कार करते हैं। ये उनकी बाध्यता हो जाती है। सिर झूक जाता है। झूकेगा ही। तो तीनों धर्म की बातें 'रामचरित मानस' में कही। इसमें पहले भगवान महावीर 'अहिंसा परमोधर्म' कहते हैं। और तुलसी, 'परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।' 'उत्तरकांड' में गरुडजी ने प्रश्न पूछे भुशुंडिजी को। उसमें जो एक प्रश्न है कि परमधर्म क्या है? परमपुण्य क्या है? पाप क्या है? तब कहा कि परमधर्म अहिंसा है। अहिंसा की व्याख्या बहुत हुई है। होनी चाहिए। सूक्ष्म से सूक्ष्म अहिंसा की व्याख्या संतों ने, मनीषियों ने, महात्माओं ने और जैन परंपरा में तो कितनी अद्भुत व्याख्यायें प्राप्त होती है दर्शनों में। मुझे भी कुछ कहने की छूट दी जाय मेरी जिम्मेवारी के साथ। आप सुनकर अपने ढंग से सोचियेगा। और कहा गया, सत्य यदि आप का सत्य हो जाय तो फिर उस सत्य को किसी वक्ता ने रजिस्टर नहीं किया है। वो तुम्हारा है। किसी भी व्यक्ति की प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए, पैसा

प्राप्त करने के लिए, प्रसिद्धि प्राप्त करने के लिए की गई नकल हिंसा है। समक्षेत्र की बात कर रहा हूं। आप शाल लेकर घूमो तो बात ओर है! मैं देखता आया हूं पचास सालों में कि मूल में सबने नकल की है! ये है हिंसा। थोड़ी समझदारी आई तो रंग बदल दिये गये! बाकी मूल में सबने नकल की है! ये है हिंसा।

मेरी व्यासपीठ सोचती है, एक है श्रमण संस्कृति। जो बुद्ध और महावीर भगवान की श्रमण संस्कृति। पुरुषार्थ, परिश्रम, साधना, कठिन तपस्या, श्रमण। और एक ओर है पूरी ब्राह्मण संस्कृति। वेद-उपनिषद, पूरी ब्राह्मण संस्कृति। केवल वर्णवाचकता में मैं 'ब्राह्मण' शब्द का उपयोग नहीं कर रहा हूं। भगवान महावीर ने कहा है, जो ब्रह्मचर्य रखता है वही ब्राह्मण। एक है श्रमण संस्कृति और एक है ब्राह्मण संस्कृति। मुझे लगता है, इस श्रमण संस्कृति और ये ब्राह्मण संस्कृति के बीच में एक तीसरी होनी चाहिए स्मरण संस्कृति कि हमारी इन पूरी की पूरी परंपरा का हमें स्मरण रहे। स्मरण संस्कृति; जो दोनों को जोड़े कि बुद्ध को स्मर, महावीर को भी स्मर; राम को भी स्मर, कृष्ण को भी स्मर; महंमद को भी स्मर, ईसु को भी स्मर। सब को याद कर।

श्रमण संस्कृति आसान है, ब्राह्मण संस्कृति ज्यादा आसान है, कठिन है स्मरण संस्कृति। क्योंकि वो तो सात सौ श्लोक के बाद आती है। 'स्मृतिर्लब्धा'; 'गीता' के सात सौ श्लोक सुने अर्जुन ने तब कभी कहा, मेरी स्मृति आयी! ये स्मरण संस्कृति है। परमात्मा करे, हम बीच में आये और दोनों को जोड़े।

मेरी एक बात आपकी दुआ से मैं कहता हूं कि दुनिया में यदि भगवान महावीर को समझना है, राम को समझना है, हनुमंत को समझना है, अध्यात्म को समझना है तो सबसे एक प्रमाणित डिस्टन्स रखो। ये व्यासपीठ के नज़दीक जो दो युवक बैठे हैं वो तो मुझे देखते हैं, मैं भी उनको देखता हूं। वो व्यासपीठ के नीव में और बिलकुल निकट आ जायेंगे तो वो मुझे नहीं देख पायेंगे। मैं भी उन्हें नहीं देख पाउंगा। देखने के लिए दर्शन के लिए भी एक निश्चित डिस्टन्स आवश्यक है। साधु वो है सब के साथ एक प्रमाणित डिस्टन्स रखे। दुनिया तो विचित्र है साहब! ये मुखवटावाली दुनिया है! जोड़ है, लेकिन साधु वो है जो असंग है। भगवान महावीर ने साधु की व्याख्या की। पवन सा असंग; 'असंग शस्त्रेण दृढेन छित्वा।' असंग एक ऐसा शास्त्र है। मैं 'शस्त्र' नहीं बोलूंगा, भले 'शस्त्र' लिखा हुआ है। 'शस्त्र' शब्द से ही मुझे परेशानी है। परमात्मा करे, दुनिया में कहीं शस्त्र न हो। शस्त्रमुक्त जगत हो।

मुझे धनुष-बाणवाला राम रास नहीं। इसीलिए हमने मंदिर में वहां मूर्ति बिठाई थी, धनुष-बाणवाली निकाल दी। ओपरेशन कर के डोक्टर घर में आता है तो हाथ में छूरी, कांटा, चाकू लेकर नहीं आता! सब रख देता है। अब राम घर में बैठे है। और वहां राम घर में बैठे तब हथियार को ले बैठे तो आज इक्कीसवीं सदी को रास नहीं आते। कितने शस्त्र खरीदे जाते हैं! कितने शस्त्र के सौदे होते हैं मैत्री के नाम पर! जगतभर में पाखंड चल रहा है! सोचो, पचीस सौ साल पहले इस भूमि पर अभी भी जिसकी रज पडी है, अभी जिसके अणु-परमाणु हमें और आपको आह्लादित करते हैं! कैसे-कैसे घूमे होंगे भगवान महावीर! एक मात्र अहिंसा जिसका धर्म है। शस्त्र, शस्त्र, शस्त्र! और शस्त्र से अगर शांति आ जाये तो खूब लो! लेकिन आयी तो नहीं! शताब्दियां बीत गई! युगों से संघर्ष चल रहा है!

तो मुझे धनुष-बाणवाला रास नहीं आया। कोई मुंह पर नहीं कहते लेकिन कुछ धर्मावलंबियों अंदर-अंदर कहते हैं! ये मोरारिबापू क्या करते हैं? धनुष-बाण राम के हाथ से ले लिया! मैं कहता हूं, ये मेरा राम है। मेरे राम के साथ मैं कुछ भी कर सकता हूं! मेरा राम रखे हाथ में फूल, धनुष-बाण नहीं। और 'रामचरित मानस' में भी राम का जो धनुष-बाण है वो असली शस्त्र नहीं है। अब बिना 'रामायण' पढ़े कभी लोग कहते हैं, राम हिंसा करते थे! नासमझ लोग! अब कई विचारधारा को सौ-दो सौ साल हुए हैं! बच्चे हैं! पलने में है! अभी-अभी दूध पीते हैं! वो भी चर्चा करते हैं कि भगवान राम ने हथियार रखे हैं! अरे! आपने कभी 'रामचरित मानस' खोला है? 'मानस' में लिखा है कि राम के हाथ में, 'बर बिग्यान कठिन को दंडा।' तुलसी कहते हैं, धनुष कौन है? श्रेष्ठतम विज्ञान ही धनुष है। महात्मा गांधीजी ने कहा था, संवेदनाहीन विज्ञान सामाजिक पाप है। राम के हाथ में जो धनुष है, वो विज्ञान है। बर विज्ञान; श्रेष्ठ विज्ञान। श्रेष्ठ विज्ञान माने संवेदनायुक्त विज्ञान; जोड़नेवाला विज्ञान, तोड़नेवाला नहीं। और बाण क्या है? 'सम बस नियम सील'; जो भगवान महावीर दूसरा धर्म कहते हैं। राम के निषंग में जो बाण है वो संयम बाण है, ऐसा तुलसी ने लिखा है। राम के हाथ में धनुष-बाण हम को रास नहीं आया! मेरा राम खुश है बिना धनुष-बाण के। आलोचना तो होती है! धनुष-बाण अब अवतारों के हाथ में जरूर नहीं है। मैंने चोटीला में कथा की। वहां चामुंडा माँ बिराजमान है। और चामुंडा माँ को लोग बली चढ़ाते हैं! धर्म के नाम पर ये हिंसा खत्म होनी चाहिए। ये क्या नासमझी और मूढ़ता की परंपरा! तो हमारे यहां जो 'दुर्गा सप्तशती' में आता है-

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

विद्यारूपेण, कलारूणेण, तो उसमें आपकी शुभकामनाओं से, संतों से आशीर्वाद पाकर उसमें मैंने ये जोड़ा कि अब ये सूत्र आना चाहिए-

या देवी सर्वभूतेषु अहिंसारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

ये सूत्र पर गला फ़ाड़फ़ाड़कर गाया मैंने कि अब ऐसी देवी हमें चाहिए जो अहिंसारूपेण हो। दुनिया शस्त्र से मुक्त हो जाय। लेकिन हमारी वृत्ति गुण-दोष से सती हुई है! कभी हमारे में आसुरापन बढ़ जाता है; कभी सुरापन बढ़ जाता है। अनबेलेन्स्ड वृत्ति के कारण हिंसायें प्रकट होती है। उसको कोई सम करे प्रमाणित डिस्टन्स से। केशुभाई देसाई की एक कविता है -

अडधो हुं कागडो अने अडधो हुं हंस छुं.
अडधो हुं कानजी अने अडधो हुं कंस छुं.

यह जगत कभी सुरी वृत्ति, आसुरी वृत्ति के कारण ऐसा होता है। मैं आप से निवेदन करता हूं, अब शस्त्र की जरूरत नहीं ये यहां। परमात्मा करे, यूनो की बिल्डिंग से ये मेसेज निकले कि दस साल शस्त्र बिलकुल बंद। दस साल के बाद दुनिया में शांति न आये तो उठा लेना शस्त्र! हाथ मिलते हैं मैत्री के यही दोनों हाथ शस्त्र के सौदे करते हैं! कल्पना तो कीजिए, दुनिया की दशा क्या होगी! वैसे मिलते हैं हाथ -

फांसिले सदियों के एक लम्हें में तय हो जाते,
दिल मिला लेते अगर हाथ मिलानेवाले।

बशीर बद्र का शे'र है। अगर दिल मिला लेते, हृदय एक हो जाते, तो सदियों के फ़ांसले एक क्षण में खत्म हो जाते। हनुमानजी के पास जो गदा है वो गदा भी हमने हटा ली। हनुमान को कहा, अब तू गदा मत रख, तू शांति रख! गदा रहने दो, मैं तुझे अरहंत कहता हूं। मेरे शब्द की इज्जत रखना! आदि-अनादि अरहंत है तू। आदत तो लोगों को गदा की हो गई तो। हमने फिर शेईप गदा का रखा है। आप तलगाजरडा आकर देखिए। गदा नहीं है, वो सितार है। शास्त्रीय संगीत का अद्‌भुत वाद्य हमने हनुमानजी के पास रखा है कि अब तुम्हें मौज आये तो अकेला परदे में हो तब सितार उठाकर कोई राग बजा लेना! तो हिंसा मानी क्या? अहिंसा मानी क्या? प्रतिष्ठा के लिए, प्रसिद्धि के लिए, पैसों के लिए, प्रभाव डालने के लिए, समक्षेत्रीय जब कोई किसी की नकल करता है वो हिंसा है! अपने आप में निजता क्यों नहीं है? मैंने देखा, लोग वेश में भी नकल करते हैं! वृत्ति में भी नकल, कार्यक्रमों में भी नकल, यहां तक कि व्यासपीठ की नकल होने लगी है! प्रोग्राम भी नकल! दुनिया तो क्या साहब! सबको फोटे खिंचवाने है! कहीं भी दौड़ जाते हैं! कहीं जाने को मना नहीं है, लेकिन अंदर की वृत्ति को कथा सुनते-सुनते जरा समझने की कोशिश तो करो!

इसलिए कहता हूं, मौलिकता अहिंसा है, नकल हिंसा है। क्या जरूरत है? एक ही क्षेत्र के लोग नकल करे तो वो हिंसा है। पैसा, प्रसिद्धि और प्रभाव के लिए नकल करे तो वो हिंसा है। मौलिकता अहिंसा है।

अहिंसा श्रेष्ठ धर्म है, परम मंगल धर्म है, ऐसा भगवान महावीर कहते हैं; ऐसा कागभुशुंडि कहते हैं 'रामचरित मानस' में। कोई मुझे कल कहे कि बापू, ज्ञान से मोक्ष होता है। ये तो हमारे 'मानस' में भी लिखा है 'ग्यान मोक्ष प्रद बेद बखाना।' ज्ञान मुक्तिदाता है, लेकिन मुस्कुराहट भी मुक्ति है, ऐसा जब कहा तो माँ को अच्छा लगा। किसी के सामने देखकर मुस्कुरा देना मोक्ष नहीं तो क्या है? मेरे भाई-बहन, कोई मिले और आप उसके सामने मुस्कुराओ ही ना तो हिंसा है! मैं यहां कुछ बिलग ही देखता हूं माँ, इसीलिए मुझे बहुत आनंद आता है। जो छोटी व्यक्ति को गले लगाये वो अहिंसा है। मुस्कुराओ। मुस्कुराते रहो। गुनगुनाते रहो। याज्ञवल्क्य के सामने जब भरद्वाजजी ने रामकथा के बारे में पूछा तो याज्ञवल्क्य नाराज नहीं हुए। उसने क्या पहली प्रतिक्रिया की? पहले मुस्कुराये। राम के बारे में कहा जाता है, राम के सामने कोई आये तो पहले मुस्कुराहट आती थी। उसके बाद प्रभु के वचन निकलते थे। मुस्कुराना। कोई तुम्हें इतना आदर दे और तुम मुस्कुरा भी न सको तो हिंसा है!

तुम्हारे धर्मस्थान में अथवा तुम्हारे स्थान में अथवा तो तुम्हारे पास कोई आये और आप कहे कि नहीं, आप दूर रहो; आप छू नहीं सकते! तो ये हिंसा है। शताब्दीओं से, युगों से, इस देश की सभ्यता ने मार खाया है कुछ लोगों को दूर रखने के कारण! 'आप अंदर नहीं आ सकते! आप निकट नहीं आ सकते!' 'वीरायतन' ने किसी को अस्पृश्य नहीं समझा। इसीलिए मैं प्रणाम करता हूं। और लोगों की मानसिकता शताब्दी से ऐसी कर दी गई कि आखिरी समाज, जो दलित है, जो वंचित है, जो अभावग्रस्त है, जो दीन-हीन है, इसको कभी धर्म ने अथवा तथाकथित धर्माचार्यों ने दूर रखने की कोशिश की! वो लोग आज भी संकोच महसूस कर रहे हैं! मेरे गांव में जहां मैं अभी राममंदिर की बात कर रहा था, वहां सबको छूट दी गई है। आप अंदर जा कर भगवान के चरणस्पर्श कर सकते हैं। जब मैं तलगाजरडा में रहता हूं तो मेरे गांव के जो दलित लोग है, जो हरिजन भाई-बहन है, वो भी सीढ़ी पर खड़े रहकर प्रणाम करते हैं! मैंने कहा, क्यों आप अंदर नहीं जाते? मैं उनका हाथ पकड़कर कहता हूं, अंदर जाओ; जहां तक पूजारी जाता है, तू भी जा। बोले, नहीं, बापू, बस आपने इतना करने दिया! लोगों की मानसिकता ऐसी बन गई कि हम कैसे जा सके?

धर्म को बहुत संशोधन करना पड़ेगा। भगवान राम अछूत दीन-हीन दलित केवट के पास जाते हैं। जिसको कोई छू ले तो लोग तीन-तीन बार स्नान करते हैं, उसके सामने राम ने पैर रख लिया और कहा, धो ले पूरा का पूरा! भगवान राम ने बंदरों को अपनाया। भगवान राम ने कौल-किरात को अपनाया। भगवान राम ने समाज जिसको पतिता कहता था, ऐसी अहल्या के पास जाकर सामने से उसको जगाया कि अहल्या, जाग! तुझे कोई कुबूल न करे तो मैं तो हूं। समाज के पास विचारक बहुत है, उद्धारक भी है, स्वीकारक कोई नहीं है। विचारक तो बहुत है। विचारते हैं, सोचते हैं, उद्धार भी करते हैं। लेकिन स्वीकारने की बात आती है तब कठिन है! राम ने शबरी को स्वीकारा; अहल्या को स्वीकारा। आदमी स्वीकारक होना चाहिए। गांधी थे स्वीकारक; विनोबा थे स्वीकारक; जयप्रकाश थे स्वीकारक। स्वीकारो। मेरी व्यासपीठ किसी को सुधारने के लिए निकली ही नहीं; सबको स्वीकारने के लिए निकली है कि तुम जैसे हो, सुधारने का कोई मैंने ठेका थोड़ा लिया है? सुधारने गये वो सब मार खा गये! प्रेम करो; महोब्बत करो। दुनिया को प्यार करो, गुनगुनाते रहो, मुस्कुराते रहो। किसको सुधारे? स्वीकार करो। बुद्ध के पास कोई जाता था और कोई निकट का भिख्खु कह दे कि वो बड़ा पापी है! तो भगवान बुद्ध कहते थे, तूने तो अभी जाना, मैं पहले से जानता हूं! इतना बुरा होते भी मेरे पास आया है तो अब मेरा कर्तव्य है, मैं उसे स्वीकार करूं, में कुबूल करूं। सबको नहाना चाहिए। खेत में मजदूरी करता है। पानी की मुश्किल है। बीच में संदर्भ आया है तो कहूं, होली का त्यौहार आज से शुरू हुआ। पानी का बिगाड़ मत करना। ऐसे रंग-केमिकल दूसरों की आंखों में मत डालना ताकि बीमारी बढ़ जाये; किसी की आंखों को नुक्सान हो जाये; किसी को तकलीफ़ हो जाये। अस्वच्छता मत करना। होली जरूर खेलना। मुबारक हो होली।

मुझे आज चिठ्ठी आइ है, बापू, आप होली खेलोगे? मैं रोज यही धंधा करता हूं! ये मेरी रोज होली है। ये होली बूक है मेरी; 'रामचरित मानस' होली बूक है; पवित्र बूक है; पवित्र ग्रंथ है। ये प्रसंग आया तो पूरे देश को मैं कह दूं। पूरी दुनिया को कहूं, हम पर्यावरण का बहुत जतन करे और ऐसे खेले कि किसी को तकलीफ़ न हो। और होली के कारण कोई संघर्ष पैदा न हो और अकारण कोई गडबड़ न हो। तो, नहाना चाहिए। लेकिन कोई बेचारा यदि नहीं ना पाया तो वो हलका हो गया? मेरी तो व्याख्या इतनी है कि दूसरे को जो हलका समझे उसके समान कोई हलका है ही नहीं! सब अपने आप में एक शिखर है। सब एक ऊंचाई पकड़े हैं। उसको पता नहीं। भगवान महावीर को पता हो गया। इतना ही फ़र्क है, बाकी सब अपनेआप में महान है। कौन यहां तुच्छ है? जिसने जाना नहीं ऐसे धर्माचार्य अथवा तो कुछ इक्कीसवीं सदी में प्रासंगिक नहीं हो ऐसे धर्मग्रंथ यदि दूसरों को दूर रखे तो हिंसा है। सब स्वीकार करे वो अहिंसा है।

पांचवां और आखिरी सूत्र अहिंसा का व्यासपीठ का; एक की शरणागति लेने के बाद दूसरे की दाढी में हाथ रखना हिंसा है। एक शरणागति, एक ही शरणागति; जिस शरणागति की चर्चा भगवान महावीर ने भी की। अरिहंत की शरण मैं कबूल करता हूं; सिद्धों की शरण, साधुओं की शरण मैं कबूल करता हूं। भगवान कृष्ण जिसको व्यभिचारी बुद्धि कहते हैं; भटकती बुद्धि, कभी इधर, कभी उधर! कभी इधर, कभी उधर! और हम जीव है, हमारी ऐसी स्थित है क्योंकि हमारा भरोसा जड़ है! हम आशा से आबद्ध हैं। हमारी इच्छा के अनुकूल नहीं होता तो हमारा भरोसा हिलने लगता है! उसीको व्यासपीठ जड़ भरोसा कहती है। दृढ़ भरोसा हो, कुछ भी हो जाये। जिसकी शरण पकड़ी है, मर जाऊं तो मरूं, लेकिन भरोसे को नहीं मरने दूंगा। ये है दृढ़ भरोसा।

तो मेरे भाई-बहन, भगवान महावीर की अहिंसा की परिभाषा। उसकी बहुत सूक्ष्मतम व्याख्यायें हुई है। सीधा-सीधा किसी को मार देना वो ही हिंसा है? वो तो है ही। मारना नहीं चाहिए किसी को, लेकिन इतने से अहिंसा सिद्ध नहीं होनी चाहिए। इसीलिए भगवान महावीर स्वामी कहते हैं, अहिंसा श्रेष्ठ धर्म है। और चलते राह यह भी कह दूं कि अपने आपको निरंतर दीन-हीन समझना ये भी हिंसा है। क्यों अपने आपको दीन-हीन समझते हो? हम सब उसके हैं। भक्तिमार्ग में, शरणागति के मार्ग में जरूर हम कहें कि प्रभु, तुम समर्थ है। लेकिन सामाजिक व्यवस्था के तौर पर हम दीन है, हम पतित है ये बात छोड़ो। अहल्या को रघुपति मिल गये, परमात्मतत्त्व प्राप्त हुआ। तो दीन-हीनता छोड़िए। राम ने ये काम किया। दीन पर उपकार करना अच्छी बात है लेकिन दीनजनों की दीनता का भाव उनके हृदय से निकाल देना परम उपकार है। तो आज तक शताब्दियां बीत गई तो भी लोग मंदिर में जाने से संकोच महसूस करते हैं! हम हाथ पकड़कर कहते हैं कि जहां पूजारी है वहां तक तुम जाओ। नहीं जाते! मैंने निर्णय बदल लिया कि ये लोग जहां तक आकर प्रणाम करे राममंदिर में, मैं भी प्रणाम वहीं से करूं। मैं भी अंदर नहीं जाउंगा। मैं अंदर नहीं जाता निजगृह में। मेरा आखिरी आदमी जहां जा सके वहां मैं जाऊं। दूसरे को हीन समझना परहिंसा है, खुद को हीन समझना स्वहिंसा है। दोनों हिंसा से बाहर निकलना अहिंसा है। तुलसी कहते हैं, 'परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।' उसको महावीर प्रभु परम धर्म कहते हैं। महावीर के धर्म की आत्मा अहिंसा है।

दूसरा सूत्र भगवान महावीर कहते हैं संयम। जीवन में संयम होना चाहिए। यस, ये सम्यक्ता जरूरी है। विवेकपूर्ण संयम। संयम भी जड़ न हो जाय, विवेक

एक की शरणागति लेने के बाद दूसरे की दाढी में हाथ रखना हिंसा है। एक शरणागति, एक ही शरणागति; जिस शरणागति की चर्चा भगवान महावीर ने भी की। अरिहंत की शरण मैं कबूल करता हूं; सिद्धों की शरण, साधुओं की शरण मैं कबूल करता हूं। भगवान कृष्ण जिसको व्यभिचारी बुद्धि कहते हैं; भटकती बुद्धि, कभी इधर, कभी उधर! और हम जीव है, हमारी ऐसी स्थिति है क्योंकि हमारा भरोसा जड़ है! हमारी इच्छा के अनुकूल नहीं होता तो हमारा भरोसा हिलने लगता है! उसीको व्यासपीठ जड़ भरोसा कहती है। दृढ़ भरोसा हो, कुछ भी हो जाये। जिसकी शरण पकड़ी है, मर जाऊं तो मरूं, लेकिन भरोसे को नहीं मरने दूंगा। ये है दृढ़ भरोसा।

भी जड़ न हो जाय। कई लोगों का संयम अविवेकी जड़ होता है। मैं मौन रहना बहुत पसंद करता हूं। कथा के बाद मौन रहता हूं। शाम को संध्या पूजा के बाद फिर बोलूं। बाकी मेरा स्वभाव मौन है। मैं आप-से निवेदन करूं। आप यदि मौन रख सको तो अच्छी बात है। मौन रहना; जहां तक साधना करो तब मौन रहो। अब गाने का हो तो गाना ही लेकिन वो गाना भी मौन हो। मन की प्रसन्नता ही मौन है। लेकिन जहां तक भजन करो, चुप रहे। भोजन करते समय जहां तक संभव हो, मौन रखो। बदायुनी सा'ब की बड़ी प्यारी गज़ल है। शे'र सुनियेगा -

तुम्हें मोहतात होना चाहिए था।
बगैर अश्कों के रोना चाहिए था।

मोहतात यानी जागृत। तुम्हें सावधान रहना चाहिए था। हे साधु, बिना आंसू रो लेते। तेरे आंसू देखकर कितने रो पड़ेंगे! इसीलिए तुम्हें सावधान रहना चाहिए। साधु रोओगे तो पता नहीं चलेगा। अंगत वस्तु को बाजार में नहीं रख दी जाय। आंसू तो साधकों की संपदा है। मैं तो गुरुपूर्णिमा में जब प्रवचन देता था तब कहता था कि साधक को मेरी समझ में दो का आश्रय करना चाहिए। प्रेम मारग के साधक को अपने बुद्धपुरुष का आश्रय, दूसरा अपना खुद का अश्रु। अश्रु जैसी कोई संपदा नहीं। कुछ ओर शे'र पढ़ लूं। आप अपने बुद्धपुरुष, यदि महावीर, बुद्ध किसी के भी शरण में, या तो कोई वर्तमान महापुरुष के आप पूर्णत: आश्रित है तो आप ये शे'र उसके सामने मंत्र की तरह कह सकते हो। यदि कोई आपका बुद्धपुरुष, आपका सद्गुरु आपको मिले और पूछे, कैसे हो? तो आप ये शे'र उसको सुना दीजिए कि -

हमारा हाल तुम भी पूछते हो?
तुम्हें तो मालूम होना चाहिए था।

तू तो दाता है। तुझे तो हमारी खबर होनी चाहिए कि मेरे साधक की क्या दशा है? और गुरु को पता होता है। अश्रु और आश्रय दो ही ठिकाना है हम जैसों का। संयम में विवेक होना चाहिए। दूसरा, संयम में दंभ नहीं होना चाहिए। दुनिया घूमता हूं तो देखता हूं और संयमी का दंभ देखता हूं तो दु:ख नहीं होता है, उसकी दया आती है! दंभमुक्त संयम महावीर का धर्म है। हम लोग कैसे दांभिक हो गये हैं! कई बुद्धपुरुषों के पास जाते हैं और वो कहे कि ये प्रसाद लो, चाय लो, तो कहते हैं, हम बाहर का लेते ही नहीं! और बाहर जाके कोकोकोला पीते हैं! ये दांभिक संयम है! संयम दांभिक न हो; दिखावा न हो। दूसरों पर प्रभाव डालने के लिए न हो। संयम अपने को संतुष्ट रखे; अपने को संतोष दे; अपने को डकार दे। वो संयम महावीर का धर्म है। मंगलकारी सर्वश्रेष्ठ धर्म कौन? तो भगवान महावीर कहते हैं, संयम। और गोस्वामीजी 'उत्तरकांड' में लिखते हैं, 'संजम।' यह तुलसी की व्याख्या। संयम किसको कहते हैं? 'संजम यह न बिषय कै आसा।' विषय निर्मूल हो गया, विषयमुक्त जो हो गया, उसको तुलसी ने संयम कहा हैं।

सद्गुर बैद बचन बिस्वासा।
संजम यह न बिषय कै आसा।

'उत्तरकांड' में गोस्वामीजी ने मानसिक रोगों के इलाज के लिए कहा है कि मानसिक रोगों का वैद्य केवल सद्गुरु है। और उसके वचनों पर भरोसा करना यही एक मात्र उपाय है। जिन विषयों ने हमें खराब अनुभव करवाये हैं ऐसे विषयों की हम बार-बार इच्छा न करे। तुलसी उसको संयम कहते हैं।

भगवान महावीर कहते हैं, तीसरा परम मांगलिक धर्म है तप। तुलसी भी अपने शास्त्र में तप की महिमा का गायन करते हैं कि तप क्या है?

तप बल रचइ प्रपंचु बिधाता।
तप बल बिष्नु सकल जग त्राता।
तप बल संभु करहिं संघारा।
तपबल सेषु धरइ महिभारा।

गोस्वामीजी कहते हैं, तप के बल से ही बिधाता इस प्रपंच की रचना करते हैं। तप के प्रभाव से ही विष्णु परिपालन करते हैं। तप के प्रभाव से ही शंभु उसका संहार, निर्वाण करते हैं। और तप के आधार से ही धरती को शेष अपने सिर पे धारण करते हैं। तप की बड़ी महिमा है। भगवान महावीर कहते हैं, तप ये श्रेष्ठ मंगलधर्म है। तो जो 'मानस' ने गाया है पचीस सौ साल पहले; एक चलता-फिरता एक अद्भुत प्रभु इस भूमि पर साधना कर रहे थे और आपके जो अमृत वचन हैं। आज आपके चरणों में बैठकर हम गा रहे हैं। उसीको मेरी व्यासपीठ 'मानस-महाबीर' कहती है।

तप और त्याग का अहंकार न करे

'मानस-महाबीर' जिसकी संवादी चर्चा हो रही है। यहां कोई उपदेश का उपक्रम नहीं है; न कोई आदेश है। यहां केवल 'रामचरित मानस' के माध्यम से भगवान महावीर का जो संदेश है वे हम और आप ग्रहण करें, सुने कम से कम, ऐसा एक विनम्र प्रयासमात्र है। यहां केवल विशुद्ध आध्यात्मिक चर्चा है। प्रसंग के अनुकूल एक प्रश्न आया है, 'बापू, आपको याद दिलाना है, कल आपने हिंसा के प्रकार बताये। ऐसे ही कुछ कथाओं पहले आपने कहा था कि किसी शांत, छोटे और अप्रसिद्ध आश्रम या सेवा संस्थान के निकट अपना विशाल सुप्रसिद्ध आश्रम-संस्थान खोलना धर्मजगत में भी की गई सूक्ष्म हिंसा है।' हां, जरूर मेरी स्मृति में है कि मैंने ऐसा कभी कहा है कि कोई शांत वातावरण में अप्रसिद्धि के साथ केवल सेवा करने के लिए प्राकृतिक वातावरण में अपना सेवा संस्थान, आश्रम, साधनास्थली जो कुछ बनाकर बैठे हैं उसके बगल में जिसके पास धनबल है, जनबल है, थोड़ा स्पर्धात्मक भी बल है, ऐसे लोग छोटे सात्त्विक आश्रम को दबा देने के लिए विशाल तौर पर यदि कोई आश्रम या सेवासंस्था खड़ी करे तो ये धर्मजगत की मेरी दृष्टि में सूक्ष्म हिंसा है। ध्यान दो, मैं थोड़ा विस्तार करना चाहूंगा। अच्छा प्रश्न है। कहीं भी किसी संस्था के बगल में या उसी परिसर में कोई भी अपना आश्रम बना सकता है, सेवा संस्थान बना सकता है। समाज को जरूरत है। लेकिन इसके पीछे द्वेषयुक्त चित्त काम करता न हो और स्पर्धात्मक मानसिकता न हो तो करना चाहिए। लेकिन यदि स्पर्धा से हम करे, उसको दबा दिया जाय तो ये धार्मिक जगत की सूक्ष्म हिंसा है।

माँ, आपके बारे में कुछ कहूं तो आपको अच्छा भी नहीं लगेगा और मेरा स्वभाव भी नहीं है, लेकिन दो दिन से मेरे पास एक चिठ्ठी आ रही है कि माँ को देखते हैं तो मधर टेरेसा जैसी लगती है। बापू, आपकी राय क्या है? साफ-साफ कहूं, मेरी दृष्टि में ये अप्रसिद्ध मधर टेरेसा है। लेकिन वो मधर है, ये माँ है; भेद समझना। इतना ही पूरब-पश्चिम का भेद है। उसने बहुत बड़ा काम किया। मधर टेरेसा बड़ा नाम है। दुनियाभर में उसकी संस्था है। सेवा प्रकल्प, भारतरत्न, नोबेल प्राइज़ मिला। हम गौरव ले सकते हैं। उसकी सेवा है। लेकिन उसकी सेवा के सामने उंगलियां भी उठी है। सेवा के पीछे हेतु भी तो था अपने धर्म का प्रचार। ये हेतुहीन सेवा होगी न होगी अब मुझे उसमें जाना नहीं है। लेकिन उसके पीछे बहुत से आशय भी रहे होंगे। मैं जो मेरा स्पष्ट अभिप्राय देता हूं, अल्लाह करे मैं सच्चा रहूं, यहां मुझे कोई हेतु नहीं लग रहा है कि सेवा करके किसी को धर्म परिवर्तित कर दिया जाय; किसी को प्रलोभन दे करके अपना विस्तार बढ़ाया जाय। मैंने कल पूरा आश्रम देखा। यहां का चिकित्सालय, यहां का म्युज़ियम। ये माँ को अच्छा नहीं लगेगा, मैं समझता हूं। लेकिन ये बहुत बड़ी सेवा है। मधर टेरेसा ने बहुत बड़ा काम किया अवश्य। और हे मधर, आपको तो नामदार पोप फ्रांसिस संत की पदवी भी देनेवाले हैं चार सितम्बर को, ऐसा अखबार में पढ़ा। मुबारक हो एडवांस में, आपकी आत्मा जहां हो वहां मेरी व्यासपीठ से भूरी-भूरी बधाई हो। लेकिन कहीं-कहीं पता ही न हो, नोबेल न मिला हो, ग्लोबल काम हो रहा हो, इसका क्या? सेवा में छोटे-बड़े की बात नहीं होती है साहब! सेवा सेवा है। तो, तुलसी का 'विनयपत्रिका' का एक शब्द है-

हेतु रहित अनुराग राम पर।

हेतु रहित प्रेम, उसकी महिमा है। सब सेवा करते हैं, अच्छी बात है। लेकिन कहीं अपनी संस्था बढ़ाने के लिए तो सेवा नहीं है? किसी को मूल धारा से परिवर्तित करके तो सेवा नहीं हो रही है? ये सब खतरे हैं! सेवा सेवा के लिए हो तो मुझे तो अच्छा लगता है। मैंने मधर टेरेसा का दर्शन नहीं किया; योग नहीं बना और रुचि भी नहीं, खबर नहीं! लेकिन भारत में और दुनिया में कई ऐसी संस्थाएं होगी जो हम न देख पाये हो और ऐसे केवल सेवा के लिए सेवा करती होगी,

इनमें से एक जो मैंने नज़रों से देखा वो 'वीरायतन' है। ये 'वीरायतन' संस्था बड़ी सात्त्विक लग रही है। कोई अच्छे-बुरे की तुलना नहीं है यहां। मधर टेरेसा और आचार्य माँ की तुलना ही छोड़ दीजिए। सब अपनी-अपनी जगह है। तुलना में क्यों जाय? रूह से महसूस करो। ये महसूसी का प्रदेश है। और ईसाई धर्म में संतत्व मिलता है चमत्कार से; मेरे देश में संतत्व मिलता है साक्षात्कार से। चमत्कारों से संतत्व मिले उसकी भी महिमा है। हां, मैं पहला बधाई देनेवाला शायद हूंगा मधर टेरेसा को, जो सितम्बर में अभी होनेवाला है फंक्शन। तो हम स्वागत करते हैं। लेकिन तुलना न की जाय बस, प्लीज़! सेवा के पीछे भी कई हेतु काम करते होते हैं। मधर टेरेसा महान है। प्रणाम, बहुत-बहुत बधाई। लेकिन यहां भी कुछ है। यहां तो सेवा के लिए सेवा है। इसीलिए चेहरे पर भी शांति है, वर्ना तो साहब, भजन भुलवा दे संस्थाओं! साधना, बंदगी, स्वाध्याय, सब भुलवा दे! और मेरा एक स्पष्ट मानना है कि साधु को ऐसे सेवा प्रकल्प भी नहीं करने चाहिए जो अपनी साधना चुका दे। साधना बरकरार रखते हुए करने से ही फूल खिलेंगे। और ये सब हो रहा है। और ऐसे स्थानों में, ऐसे महान व्यक्तिओं के पास थोड़ी सांस लेना सीखो। ये ही है सत्संग। उसको मेरे तुलसी ने दुर्लभ कहा है।

मेरे पास लोग आते हैं, भगवान को इतने हाथ, इतने मुख! मैंने कहा, कथा में देखो, जो इतने हाथ है, इतने मुख है यही तो भगवान है। कौन भगवान? पढ़ा है शास्त्रो में? कभी देखा नहीं। चतुर्भुज को कभी देखा नहीं, लेकिन संसार में चतुर्भुजों को देखा कि दो हाथ से कमाते है और प्रसिद्धिमुक्त चार-चार हाथ से लुटाते हैं सेवा में ये सब चतुर्भुज है। मुझे किसान में ईश्वर दिखे। मुझे मेरे विद्यार्थी में ईश्वर दिखे। मुझे मेरे मज़दूर में ईश्वर दिखे। मुझे मेरे कोई बालक में ईश्वर दिखे। मैं तो स्पष्ट कहूं, चार हाथवाला आये तो हमको अनुकूल नहीं पड़ेगा। हज़ार हाथवाला तो मुझे चाहिए ही ना! कौन परमात्मा? रूप का वर्णन है जरूर; अच्छा है, वर्णन पढ़ते हैं। परमात्मा के इतने हाथ, इतने नेत्र ये तो उनका ऐश्वर्य है। पूरा अस्तित्व परमात्मा का परिचय है। हम जा ही नहीं पाते! हम कैसे-कैसे खोज रहे हैं? परमात्मा का परिचय था 'रामचरित मानस' में गीधराज जटायु को। हमने खाक जाना! गोस्वामीजी कहते हैं -

जो अगम सुगम सुभाव निर्मल असम समसीतल सदा।
पस्यंति जं जोगी जतन करि करत मन गो बस सदा।।
सो राम रमा निवास संतत दास बस त्रिभुवन धनी।
मम उर बसउ सो समन संसृति जासु कीरति पावनी।।

कौन है परमात्मा? प्रयत्न करो तो अगम है और भोला चित्त है तो वो सुगम से सुगम है। हम बौद्धिक, बुद्धि से सोचनेवालों को शायद परमात्मा कभी मिलेगा ही नहीं! और ये दीन-हीन जो भोले हृदय है, उसके लिए वो परमतत्त्व सुगम है, हम जैसों के लिए कठिन है। कौन परमात्मा? एक व्यक्ति ले लो; चलो, जो समर्थता का दावा करता हो उसके लिए वो अगम बन जाय और जो दीन-हीन और अभावग्रस्त है उसके लिए सुगम हो जाय। उसको ईश्वर समझना, चाहे व्यक्ति क्यों न हो? जो दावा करते हैं कि हम समर्थ हैं; हम कभी भी मिल लें; हम कभी भी बातचीत कर लें; हम कभी भी साथ में यात्रा कर लें, उसके लिए जो अगम बन जाय और दीन-हीन को हाथ पकड़कर साथ लिये चले, समझना परमतत्त्व इसमें छिपा है। मेरे देश का एक गीध जानता था। हम सिद्ध बन बैठे हैं! हम नहीं जान पाए! गीध ने जाना, सिद्ध ने नहीं जाना!

आगे का सूत्र, 'सुभाव निर्मल।' जटायु कहता है जिसका स्वभाव निर्मल हो, सरल हो, बच्चे जैसा हो। सुभाव निर्मल; जो समर्थता का दावा करे उसके लिए अगम, जो असमर्थता कुबूल कर ले उसके लिए सुगम। शबरी गई नहीं, उसको पता है कि मैं असमर्थ हूं। उसके लिए सुगम हुआ; राम गये। अहल्या को पता लग गया कि मेरा सामर्थ्य खत्म हो गया। अब मैं अयोध्या नहीं जा पाउंगी। लेकिन असमर्थता कुबूल कर ली तो अयोध्या के राम को नंगे पैर अहल्या के पास आना पड़ा! मेरे भाई-बहन, परमतत्त्व क्या है? हमारी चारों ओर जो है उसमें से खोजो। तो निर्मल जिसका सुभाव है; सरल स्वभाव है, सरल चित्त है। तुलसीदासजी की एक सुंदर चौपाई है। याद रखने जैसी चौपाई है -

सरल सुभाव न मन कुटिलाई।
जथा लाभ संतोष सदाई।।

कहीं भी कुटिलाई नहीं, मन में खेल नहीं, कोई गेम नहीं, कोई नेटवर्क नहीं, कोई षड्यंत्र नहीं। अहल्या समझ गई कि मेरा सामर्थ्य नहीं है तो नंगे पैर राम को आना पड़ा। शबरी समझ रही थी-

अधम ते अधम अधम अति नारी।

और माफ़ करियेगा। सनातन धर्म में भी जहां कहा गया था कि नारी को प्राप्ति नहीं होती! तुलसी ने बातें की अधम से अधम नारी क्यों न हो, वो राम के पास न जा सके तो राम को उसके पास जाना चाहिए। राम का दायित्व है। वो न जा सके, राम तो जा सकता है न! एक अंतिम व्यक्ति किसी संत के पास न जा सके, संत को तो चाहिए जाय। उसको कौन रोक रहा है? साधु मुक्त पक्षी होना चाहिए। आप सब जानते हैं कि मैं कहीं भी कथा में होता हूं, मैं शाम को चला जाता हूं झोंपडी में, किसी गरीबों कि कुटिया पर वहां रोटी गंगाजल देकर खा लेता हूं; चाय पी लेता हूं और कई जगह पर मैं जाता हूं। ये शरदपूनम का एवोर्ड देकर मैं गया। मुझे चाय पीनी थी तो एक झोंपडा मैंने देखा। दो बच्चें थे, एक बहन थी, एक उसका पति। हम गये। पहचान तो गये कि मोरारिबापू है। मेरे साथ दो-तीन भाई थे उसने खटिया खींची। हम बैठ गए और हमनें उसको बुलाया कि आप आओ; हमारे पास नहीं आ रहे थे! कहे कि बापू, हम आपके पास कैसे आए, हम पापी है! मैंने कहा, तू पापी होती तो मैं कैसे आता? हमने कहा, माँ, तू चाय बना। हमें चाय पीनी है और मेरी इच्छा है कि तू मेरी रोटी भी बना दे गंगाजल में। मैं तेरे घर मिर्ची ले के खा लूं। लोग इतने बेचारे संकोची हो चुके हैं कि विनोबाजी ने कहा था कि हमारे देशमें इतनी उंची व्यक्तियां आयी लेकिन वो कभी शिखर से नीचे न उतर पाई और गरीब आदमी उन तक पहुंच नहीं पाया। ये फांसला कायम रह गया। अब जरूरत है 'वीरायतनी' विचारधारा कि आखिरी व्यक्ति तक पहुंचा जाय। मैं एक शे'र कहा करता हूं-

जिस दीये में हो तेल खैरात का,
उस दीये को जलाना नहीं चाहिए।
जिस बुलंदी से इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।

-शहूद आलम आफ़ाकी

जिस ऊंचाई के बाद दीन-हीन हमको छोटा दिखे ऐसी ऊंचाई पे नहीं जाना चाहिए। और बुलंदी प्राप्त करने के बाद इन्सान छोटा दिखता है तो भूलना मत उसको भी हम छोटे दिखते हैं!

सरल चित्त, निर्मल चित्त वो परमात्मा। कहां आकाश में खोजेंगे परमात्मा को? अपने अगल-बगल में परमात्माओं की भीड़ लगी है। हाथ डालो और परमात्मा हमें हाथ आ सकता है। कोई निर्दोष चित्त बच्चा मिल जाय; कोई माँ; दीन-हीन, कोई भी। समर्थों का इन्कार नहीं, वो भी निर्दोष चित्त हो तो ईश्वर है। 'असम सम शीतल सदा।' उसका ऐश्वर्य देखके लगता है कि वो कितना दूर है, लेकिन निकट जाने के बाद लगता है कि ऐसी समता तो कहीं नहीं। निरंतर जो शीतल रहता है। अपने मनको और इन्द्रियों को वश में कर जिन परमतत्त्व को जानने के लिए योगी लोग देखते रहते हैं वो परमात्मा सुगम भी बनता है, सम भी बन जाता है।

सो राम रमा निवास संतत दास बस त्रिभुवन धनी।

ये राम जो रमा निवास जो आह्लादिनी शक्ति का पति है। ये समर्थों के वश नहीं है, स्वामीओं के वश में नहीं है, दासों के वश में है। और है कौन? त्रिभुवनधनी; त्रिभुवन का बादशाह लेकिन छोटे आदमी के वश में है, सेवक के वश में है। वो परमतत्त्व मेरे हृदय में रहो, जिसका सुमिरन करने से जनम-मरण सब शमन हो जाता है, संसार खत्म हो जाता है।

त्याग और तप का अहंकार जिसका छूट गया वो भिख्खु। त्याग का अहंकार मार देता है। तप का अहंकार मार देता है। बहुत मुश्किल है, तप का अभिमान न आये। कभी-कभी तप आदमी को चीड़-चीड़ कर देता है। बहुत तपस्वियों को मैंने देखा है। वो मुस्कुरा नहीं पाये हैं! तप में तो खुश्बू होती है साहब! तप तो सुगंधी होता है। तपस्वी तुम्हें और हमें छू दे न साहब, तो दबी हुई चेतना जाग जाती है। तप की महिमा है। तो त्याग का अभिमान न हो; अपने तप का अभिमान न हो। ये बड़ा मुश्किल काम है। भगवान महावीर कहते हैं, भिख्खु का लक्षण है कि वो तप और त्याग का अभिमान नहीं करता।

तो बाप! 'रामचरित मानस' के आधार पर हम 'मानस-महाबीर' की चर्चा कर रहे हैं। कुछ ओर सूत्रों के बारे में हम अपनी भीतरी अवस्था को जरा ओर विकसित और विश्रामदायी करने के लिए बातचीत करें। भगवान महावीर स्वामी ने बहुत से सूत्रों दिये। मैं इन सूत्रों को पढ़ता हूं फिर भाषांतर को भी पढ़ लेता हूं और फिर मैं आपसे बात करता हूं। उसमें कुछ सूत्र है, ब्राह्मणसूत्र। महावीर भगवान ब्राह्मण किसको कहे? लोकतत्त्व सूत्र है। एक सूत्र तो बहुत प्यारा मिला पूज्यसूत्र। दुनिया में पूज्य किसको कहे? कुछ सूत्र है मोक्षसूत्र। कुछ सूत्र है भिखुसूत्र, भिक्षुसूत्र, इनमें से एक सूत्र में लिखकर आया हूं। पहले हम उसका उच्चारण करेंगे, फिर उसके बारे में हम टोक करेंगे। 'टोक' शब्द कृष्णमूर्ति का है। टोक, बातचीत करेंगे। भगवान महावीर के सूत्र सुनिएगा। मैं बोलूं, आप भी बोलिएगा। ये भिखु सूत्र है, बड़ा प्यारा है, जीवन में उतर जाय मुझे और आपको तो हम संसार में रहकर भी हम भिखु बन जाते हैं। और वृत्ति के भिखु बनना श्रेष्ठतम घटना हो सकती है। आइए, सुनिए-

न परमं वसीज्ञासी अयं कुसीले जेणं।
चुक्कएज्ज न तं।
वयेज्ञा जाणीय पत्तेयं, पुण्णं पावं अत्ताणं।
न समुक्कसे जे स भिक्खु।

कुछ उच्चार में गडबड़ी हो तो क्षमा करिएगा, भाव सुनियेगा। भगवान महावीर के अमृत बचन है। कौन भिख्खु? जो दूसरे को कभी दुराचारी हो तो भी दुराचारी समझता नहीं। और जो कभी कटु वचन बोलकर दूसरे के चित्त को क्षुब्ध नहीं करता। जो भाव है पूरे मंत्र का और जो समझता है कि शुभाशुभ कर्म का फल है मैं उसकी निंदा क्यों करूं? मैं मेरे सुधार में क्यों न जल्दी लग जाऊं? और आखिर में त्याग और तप के अहंकार में कभी न हो जाय, ये भिख्खु है। एक अर्थ में देखो तो बहुत अगम सूत्र है हम जैसों के लिए। लेकिन यदि सरल चित्त से भगवान महावीर जितनी सरलता से बोले, बहुत कम लोग ऐसे बोले होंगे। महावीर की बानी सरल-तरल है। ज्यादा चर्चा करने को भी जी न करे, बस पी जाय; सुन लो बस! बहुत सरल-तरल सूत्र भगवान के हैं, जो दूसरों को कभी दुरात्मा नहीं समझता। दूसरा भी कोई है मेरे अतिरिक्त ये मूढ़ता के सिवा हो नहीं सकता। द्वैत से ही पूरा संसार खड़ा होता है। कहने का मतलब जो दूसरे को दुराचारी नहीं समझता। तुलसी की 'मानस' में भी यही बात आती है। तुलसी कहते हैं, ये राक्षस, ये रजनीचर, ये फलां, ये पापी, ये पुन्य, ये दुनिया में सब सटा हुआ है। लेकिन मुझे तो गुरु की कृपा से कोई दुरात्मा नहीं दिखता। मुझे तो लगता है-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

पूरा जगत ब्रह्ममय दिखता है। बहुत सीधी-सादी व्याख्या। दूसरा सूत्र आया, कटु वचन बोलकर दूसरें को क्षुब्ध नहीं करता। 'मानस' में लिखा है-

परुष बचन कबहुं नहीं बोलही।

कौन साधक? कौन भिख्खु? जो कभी कटु वाक्य न बोले। अरे, सत्य बोले तो भी कटु न बोले। 'सत्यम् ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्।' 'भगवद्गीता' में योगेश्वर कहते हैं, 'सत्यम् प्रियं हितं च यत्।' लोगों ने एक सूत्र बना लिया कि हम सच्चे हैं इसीलिए हम कडवे हैं! कडवे प्रवचन भी होते हैं। हम और आप सामान्य जीव है। मेरे भाई-बहन, हम तो इतना सीखें कि सत्य जितनी मात्रा में बोला जाय बोले, कटु न बोले। हितकारी, मितकारी, जो कटु वचन न बोले। जरूरत नहीं है। व्यसन छोड़ो प्लीझ, मैं प्रार्थना करूं कि शराब आदि-आदि न पीओ लेकिन मैं उस पर बल भी न दूं। आप न छोड़ो तो कोई बात नहीं लेकिन झूठ छोड़ो ये तो मैं खास कहूंगा। व्यसन छूटना चाहिए। व्यसन अच्छा नहीं है। लेकिन यदि कोई न छोड़ पाये लेकिन ईर्ष्या तो छोड़ो, द्वेष तो छोड़ो! क्या जरूर है? काम छोड़ने की बातें हो सकती है। जीवन में अनुभव करना मुश्किल है। ये प्रकृतिजन्य उर्जा है। भजन के बिना उसको रोकी नहीं जा सकती। वासना को जितनी दबाई जाती है इतनी ही वासना मौके पर हमको दबा देती है। लेकिन द्वेष की जरूरत नहीं है। क्यों करते हैं हम एक-दूसरे से द्वेष? क्यों एक-दूसरे की ईर्ष्या करते हैं? क्यों किसीको कटु वचन बोलते हैं? लेकिन आदमी की प्रकृति हो गई कटु बोलने की! तो भगवान महावीर कहते हैं, दूसरे के चित्त को जो कटु वाक्य से क्षुब्ध नहीं करता वो भिख्खु है। ईमानदारी से सोचे तो हम और आप सब कर

सकते हैं। सरल सूत्र है। हम कटु क्यों बोले? लेकिन लोगों को आदत-सी हो जाती है और दावा करते हैं, हम सच्चे हैं! सब अपने शुभाशुभ कर्म का फल भोगते हैं। तुलसी कहते हैं-

निज कृत कर्म भोग सब भ्राता।

बिलकुल मिलते-जुलते सूत्र आएंगे। 'सभी सयाने एक मत।' और ये जो दूसरों की निंदा करने में उर्जा खर्च जाती है। उसके बदले जो साधक इस ऊर्जा को खुद के सुधार के लिए उपयोग में लेता है वो भिखु है।

मोरे मन प्रबोध जेही होई।

तुलसी कहते हैं, मैं दूसरों को बोध देने के लिए नहीं, सुधारने के लिए, निंदा के लिए नहीं हूं; मैं इसीलिए हूं कि मेरी ऊर्जा से मुझे बोध हो, मेरी बानी पवित्र हो।

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा।

मुझे स्वान्तः सुख प्राप्त हो, खुद का सुधार हो। माँ कल मुझे कह रही थी कि लोग साधुओं को कहते हैं कि साधु को ऐसे रहना चाहिए लेकिन शिष्य को कैसे रहना चाहिए वो सुनना चाहते ही नहीं! गुरु को कैसे रहना चाहिए वो बहुत कहते हैं। मेरे पास पहले लोग बहुत आते थे। उस समय जब गुजरात में खास करके कथाजगत में 'भागवत' के क्षेत्र में पूज्यपाद ब्रह्मलीन डोंगरेबापा थे और कृष्णशंकरदादा थे। लेकिन मेदान में कथा लानेवाले तो डोंगरेबापा थे कि विशाल मेदान में उसकी कथा होती थी और प्रभु ने मुझे निमित्त बनाया रामकथा गाने के लिए। तो मैं रामकथा गाता था। लोग मुझे कहने आते थे, डोंगरेबापा छोटी-सी धोती पहनते थे। ऐसी तुम पहनो। सबका अपना-अपना स्वधर्म होता है। लेकिन लोगों को आदत होती है। हमारे करे वैसा ही तुम करो! नहीं, नही, नहीं, लकीर के फकीर मत बनो!

इशारा कोई क्यां समजी शक्युं संतो-फकीरो ना।
अहींना लोक तो छे लोक बस केवळ लकीरोना।

-जातुष जोशी

सब अपने शुभ और अशुभ कर्म के फल भोगते हैं। हम अपनी ऊर्जा उसमें डालकर क्यों निंद्य कर्म करें? बेहतर है कि उसी ऊर्जा को हम अपने सुधार में लगा दें; वो भिखु है। उसीको भगवान महावीर भिखु कहते हैं। और ये हम कर सकते हैं, प्रामाणिकता से चाहे तो कर सकते हैं। लोग सलाह तो देंगे कि आप ऐसा करो, वैसा करो! साधु अपनी निजता में रहे। तो उस समय मुझे भी बहुत कहा जाता था, आंखें बंद रखो, ये करो, ये करो! ये गाना-बजाना नहीं ठीक है! ये अपनी मस्ती है। एक वस्तु समझ लो, आज नहीं तो कल, एक जनम नहीं तो कोई भी जनम में मुक्ति तो मिलनेवाली है। मस्ती का प्रश्न है। मस्ती लेनी हो तो झुमकर गा लो; आनंद में रहो। कभी तो किनारा आयेगा न यार! जल्दी भी क्या है? एक जनम और लेंगे। और हमें तो जनम बार-बार लेना ही है, क्योंकि रामकथा गानी है। और आखिर में भगवान महावीर बोले; कितनी सरल जुबां है महावीर की! हमारे शरफ़साहब दिल्ली के शायर कहते हैं -

मोहब्बत का कानों में रस घोलते हैं।
ये ऊर्दू जूबां है, जो हम बोलते हैं।

मैं कहते रहता हूं-

मोहब्बत का कानों में रस घोलते हैं।
ये तुलसी जूबां है, जो हम बोलते हैं।

और कहना चाहिए -

अहिंसा का कानों में रस घोलते हैं।
ये महावीर की जूबां है, जो हम बोलते हैं।

सोचो, कितनी सरल-तरल बोली है! भिखुसूत्र का आखरी लक्षण; वैसे तो कई सूत्र है। अपने त्याग और तप का जिसने गर्व छोड़ दिया वो भिखु। सवाल अब यहां है, त्याग और तप का गर्व छूट जाय ये बहुत है।

मानादिक शत्रु महा, निज छंदे न मराय।
जाता सद्गुरु शरण में अल्प प्रयासे जाय।

- श्रीमद राजचंद्र

मान आदि जो दुश्मन है। अभिमान, मैं तपस्वी, मैं त्यागी! आखिरी जो सातवां किल्ला तोड़ना कठिन है। जैन धर्म में चार वस्तु की बात आती है-क्रोध, मान, माया, लोभ। क्रम जहां तक मैंने समझा है। श्रीमद् राजचंद्र क्रम तोड़ देते हैं। उसने क्रोध से शुरू नहीं किया, मान से शुरू किया। किसी ने पूछा होगा श्रीमद् कृपालु देव को कि आपने उसमें क्रम भेद क्यों किया? तो उसने कहा, क्रोध ये स्वभाव का भी लक्षण है। तुलसीदासजी कहे, क्रोध पित्त है और वात, पित्त, कफ शरीर के अंदर संतुलन हो

तो शरीर स्वस्थ रहता है। उसकी मात्रा वध-घट हो जाती है तो अस्वस्थता आती है। क्रोध होता है सबमें। निकल जाय वो तो सिद्ध है। ऐसे सिद्धों को नमस्कार हो। ऐसे आचार्यों को नमस्कार हो। पशु पक्षियों में भी क्रोध होता है। इसका मतलब कोई ऐसा मेसेज न ले कि क्रोध करना चाहिए, लेकिन समझना तो पड़ेगा कि क्रोध है। संतों के पास बैठकर धीरे-धीरे बोध प्राप्त करते-करते क्रोध को निवारा जा सकता है। क्रोध और बोध साथ में नहीं रह सकते। जहां बोध आया वहां क्रोध नहीं; जहां क्रोध आया वहां बोध नहीं। मान मानी अतिमान, महाशत्रु है। श्रीमद राजचंद्रजी कहते हैं, 'निज छंदे न मराय।' आपणी जाते एने न मारी शकाय। ये तो किसीकी शरण में जाने से होता है। 'मान' से लगे कुछ शब्द मैं बोला करता हूं। पहला, मान मानी अभिमान। दूसरा, सन्मान; सब के पीछे मान लगा है, खतरा है सब जगह पे! जहां मान लिखा है, दो जगह मान लिखा है वहां खतरा नहीं है, बाकी मान आया, खतरा है। तुलसीदासजी ने लिखा है -

सकल शोध दायक अभिमाना।

सकल शोक को देनेवाला अभिमान है। मान; मेरी बात मान वर्ना खतरा है। सन्मान ज्यादा मिले तो खतरा है। बहुमान, खतरा है। स्वमान होना चाहिए। आदमी का स्वमान होना चाहिए। एक खतरा है। सावधान रहना, जहां भी मान आया खतरा है। मेहमान; बहुत बड़ा खतरा है! कुछ मेहमान को संभालना अल्लाह बचाये! जिसमें शील का अभाव है वो मेहमान खतरा है। मान, सन्मान, अभिमान, बहुमान खतरा है। यजमान में मान है; महेमान में मान है, खतरा है। अनुमान भी खतरा है। तो सब जहां-जहां मान लगता है वहां खतरा है। लेकिन मेरे श्रावक भाई-बहनों, याद रखना, दो जगह मान लगा है, धन्य कर देगा। वो मान है, एक वर्धमान और दूसरा हनुमान। एक, वर्धमान महावीर। दूसरा, भगवान महावीर। वर्धमान, जो प्रतिक्षण वर्धमान है। दूसरा मेरा हनुमान। वहां मान हमारा उद्धारक है।

तो त्याग और तप का अहंकार जिसका छूट गया वो भिख्खु। क्योंकि ये आखिरी बंध बहुत मुश्किल है। त्याग का अहंकार मार देता है। तप का अहंकार मार देता है। बहुत मुश्किल है तप का अभिमान न आये। कभी-कभी तप आदमी को चीड़-चीड़ कर देता है। बहुत तपस्वियों को मैंने देखा है। वो मुस्कुरा नहीं पाये हैं! तप में तो खुश्बू होती है साहब! तप तो सुगंधी होता है। तपस्वी तुम्हें और हमें छू दे न साहब, तो दबी हुई चेतना जाग जाती है। तप की महिमा है। और जो तप नहीं

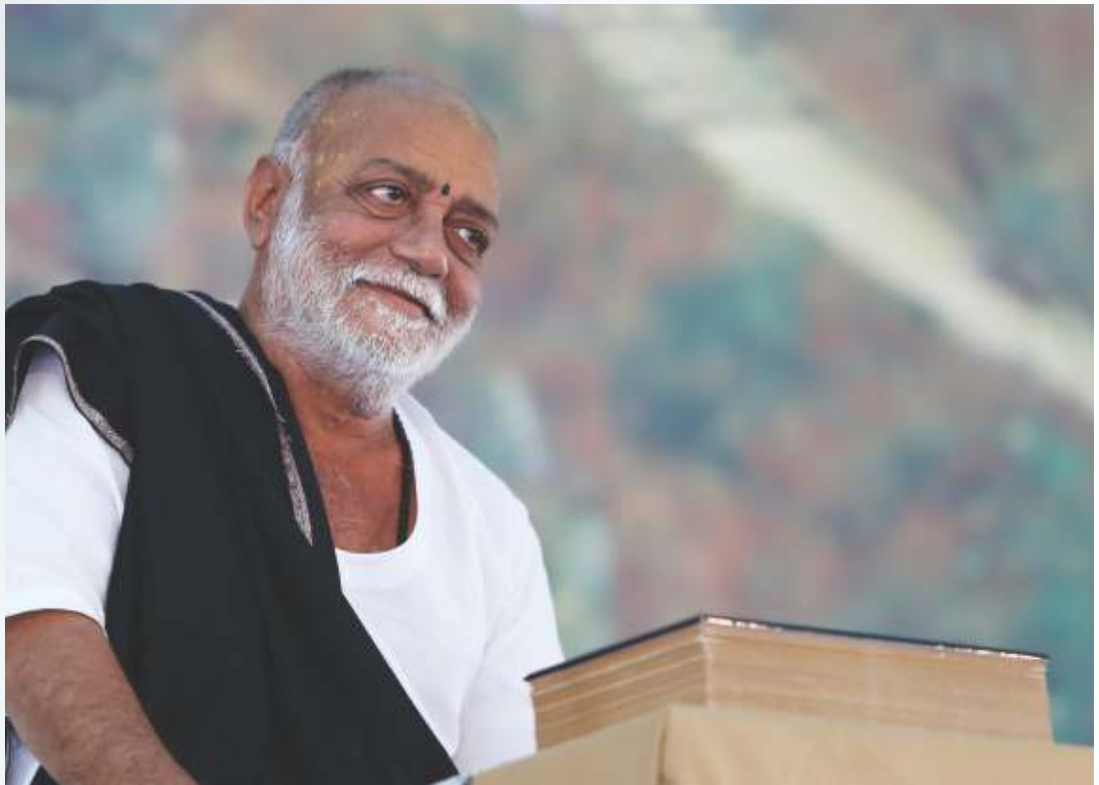

करता है उसको कृपया तुच्छ न समझे। मैं रामकथा गाता हूं तो लोगों की पक्की श्रद्धा होती है कि मोरारिबापू तो रामनवमी का उपवास करते हैं। मैं करता ही नहीं हूं! मैं उपवास करूं तभी ही मुझे भजिया याद आता है! तो वृत्ति भोजन में रहे उससे तो बेहतर है खा लो। शिवरात्रि करता हूं, जन्माष्टमी नहीं करता। इसका मतलब ये नहीं कि आप करते हो तो न करो। जरूर ये तप है। प्लीज़, करते रहिये। मेरे मन में उसकी इज्जत है। लेकिन तप का अहंकार न करे और त्याग का अहंकार न करे। बाकी उपनिषदकारों ने कहा है, एक मात्र त्याग ही अमृत तत्त्व प्रदान कर सकता है। तो त्याग का अभिमान न हो; अपने तप का अभिमान न हो। बड़ा मुश्किल काम है। भगवान महावीर कहते हैं, भिखु का लक्षण है कि वो तप और त्याग का अभिमान नहीं करता।

अब थोड़ा कथा का क्रम लूं। याज्ञवल्क्य महाराज भरद्वाज की जिज्ञासा पर रामकथा के लिए तैयार तो हुए लेकिन सुनानी थी रामकथा और प्रारंभ किया शिवकथा से। यही तो तुलसी का सेतुबंध था कि वैष्णव और शैव में भेद न रहे। कुंभज ऋषि बहुत राजी हुए कि जगत के माता-पिता मेरे घर अतिथि होकर आये। शिव और सती की पूजा की, आसन दिया तो सती ने गलत अर्थ कर दिया कि इस महापुरुष के पास कथा सुनने के लिए ले आये शिव और ये वक्ता होकर श्रोता की पूजा करने लग गया? ये खाक कथा सुनायेगा? दुनिया में कोई हमारी पूजा करे तो गलत अर्थ मत समझना। वो उनकी उदारता और उनकी खानदानी का शील है। हम अपना अधिकार मान लेते हैं कि हम पूज्य है! शिव ने सोचा कि ये वक्ता होकर श्रोता की पूजा करता है! शंकर ने बहुत भाव से सुना, सुख से सुना लेकिन सती ने सुना नहीं। कथा में अक्सर हम बैठते हैं; हो सकता है, सुनते न भी हो! शिव साक्षात् रामकथा के सर्जक और इतने आदर के साथ सुनते हैं। श्रेष्ठ वक्ता जिसको बनना होता है उसको पहले श्रेष्ठ श्रोता बनना होता है। जो श्रोता बनने राजी नहीं वो कभी प्रासादिक वक्ता बन नहीं पाता। शिव परम वक्ता है पर सुनते हैं।

दोनों दंडकारण्य से गुजर रहे हैं कैलास जाने के लिए और उसमें राम की लीला चालू थी। रावण आकर सीता का अपहरण कर गया था। जानकी के वियोग में राम-लक्ष्मण जा रहे हैं। रामजी पागल की तरह रो रहे हैं। उसी समय शिव और सती निकले। दूर से शिव ने प्रणाम किया, 'हे सच्चिदानंद, हे जगपावन, मैं प्रणाम करता हूं।' सती के मन में संदेह हुआ। शंकर अंतर्यामी जान गये, बोले, देवी, आपका नारी स्वभाव है। संशय न करो। जगत का बाप किसी का बेटा बना है। व्यापक व्यक्ति के रूप में आ गया है। शिव ने साफ़-साफ़ कहा लेकिन सती को बोध नहीं आया। कोरी बुद्धि को बोध नहीं होगा। भीगा हृदय चाहिए। शिवजी समझ गये। बौद्धिक व्यक्ति परीक्षा करके ही मानेंगे। सती को कहा, जाकर परीक्षा कर लो। अपनी बुद्धि से निर्णय कर लो कि ये ब्रह्म है कि सामान्य व्यक्ति है? सती तैयार हो गई परीक्षा के लिए। क्योंकि बौद्धिक लोग नापने के लिए तैयार हो जाते हैं, पाने के लिए तैयार नहीं होते! राम नापने की चीज़ नहीं है, पाने की चीज़ हैं। ईश्वर की परीक्षा नहीं हो सकती मेरे भाई-बहन! ईश्वर की प्रतीक्षा होती है। ये परीक्षा का प्रदेश नहीं है। सती परीक्षा में फंस जाती है; निष्फल होती है। सती को भूल समझ में आई। डरती हुई शिव के पास आई। सती झूठ बोली। शिव ने ध्यान में देखा कि सती ने क्या चरित्र किया? शिव को लगा, सीता तो मेरी माँ लगती है। राम मेरे ईष्ट है और अब संसार का संबंध सती से रखूं तो अपराध हो जाएगा। शिव ने संकल्प किया, सती से संबंध न रखूं।

सत्ताशी हजार साल बीत गए। शिव समाधि से जागृत हुए। सती डरती-डरती गई। शंभु ने सन्मुख आसन दिया। कभी-कभी शिष्य विमुख होता है तो गुरु सन्मुख कर देता है। और तुलसी के मुताबिक जीव सन्मुख होता है तो जनम-जनम के पाप नष्ट हो जाते हैं। शिवजी कृपालु है। रसप्रद कथा सुनाने लगे। उसी समय सती के पिता दक्ष ने यज्ञ का आरंभ किया। यज्ञ का हेतु था बदला लेना। यज्ञ में तो बलिदान होता है। देवों को निमंत्रण था; ब्रह्मा, विष्णु, महेश को न्योता नहीं था। देवों के विमान जा रहे थे। सती ने इसका कारण पूछा। शिव ने सब बात बताई। जिद्द करके सती गई। पिता द्वारा अपमान सहा न गया। यज्ञकुंड में जल गई। दूसरा जन्म हिमालय के घर पुत्री रूप में हुआ। बुद्धि खत्म हुई, श्रद्धा का जन्म हुआ। शिवविवाह की कथा मैं कल संक्षेप में कहूंगा।

कथा–दर्शन

सबसे बड़ा हमसफ़र सद्गुरु होता है।
तीव्र प्रतीक्षा होगी तो गुरु खोजना नहीं पड़ेगा; गुरु हमें खोज लेगा।
कभी–कभी शिष्य विमुख होता है तो गुरु सन्मुख कर देता है।
गुरु को भूल जाओ तो कोई चिंता नहीं, गुरुकृपा मत भूलना।
गुरुआज्ञा का अनादर न करना।
साधु वो है जो सब के साथ एक प्रमाणित डिस्टन्स रखे।
आंसू तो साधकों की संपदा है।
'हनुमानचालीसा' सांप्रदायिक नहीं है, सार्वभौम है।
शास्त्र रोज कुछ न कुछ नया देता है।
परंपरा प्रवाही होनी चाहिए, परिवर्तनशील होनी चाहिए।
संस्कार परिवर्तन करो पर धर्मपरिवर्तन नहीं।
प्रयास से कुछ नहीं होता, प्रसाद से बहुत कुछ होता है।
तप का अहंकार न करे और त्याग का अहंकार न करे।
क्रोध और बोध साथ में नहीं रह सकते।
मुस्कुराहट बहुत बड़ा दान है।
विश्वास जड़ नहीं होना चाहिए, दृढ़ होना चाहिए।
दूसरे को हीन समझना परहिंसा है, खुद को हीन समझना स्वहिंसा है।
समाज के पास विचारक बहुत है, उद्धारक भी है, स्वीकारक कोई नहीं है।
जुबां और आंख इन्सान का परिचय दे देती है।
सर्जक स्वतंत्र होना चाहिए। धर्मसत्ता भी उसको बांधे ना।
जिनको श्रेष्ठ वक्ता बनना है उनको पहले श्रेष्ठ श्रोता बनना होता है।

आचार क्षणभंगुर भी हो सकता है, विनय शाश्वत होता है

'मानस-महाबीर', जो इस नव दिवस के संवाद का केन्द्रबिंदु है, उसमें कुछ आगे बढ़ें। 'रामचरित मानस' और समग्र तुलसीदर्शन में एक गिनती के अनुसार करीब अठारह बार 'महाबीर' शब्द का प्रयोग हुआ है, ऐसा हमारे वडोदरावाले हरीशभाई ने खोज करके मुझे दिया। भूल-चूक हो सकती है। ये शास्त्र है, अनंत है लेकिन जहां तक संभव है, अठारह बार 'महाबीर' शब्द का प्रयोग हुआ है समग्र तुलसीदर्शन में। इसमें 'हनुमानचालीसा' भी आ जाय, 'मानस' भी आ जाय, 'विनय पत्रिका', 'कवितावली' आदि सब ग्रंथों। एक बार 'महावीर' नहीं है लेकिन 'वीरमहा' है। ये उन्नीसवां शब्द, 'महावीर' नहीं, 'वीरमहा' है। 'विनयपत्रिका' के एक पद में ऐसा लिखा है। बात तो महावीर की ही है। लेकिन पद का आरंभ 'महावीर' शब्द उच्चारण से नहीं, 'वीरमहा' उच्चारण से हुआ है। उस पर जरा ध्यान केन्द्रित करे।

वीरमहा अवराधिये साधे सिद्धि होये।
सकल काम पूरन करे, जाने सब कोई।

तो, समग्र तुलसीदर्शन में श्री हनुमानजी महाराज के लिए बहुत बार 'महाबीर' शब्द का प्रयोग हुआ है। इवन राक्षसों के लिए भी 'महाबीर' शब्द का प्रयोग हुआ है। उसका वीरपना बहिर् था। वो बहिर् दुश्मनों को मारनेवाले थे। ये उसी संदर्भ में उसको महावीर कहा है। भगवान राम को महावीर कहा है। तो कईयों को ध्यान में रखते हुए महावीर कहा। यहां 'विनयपत्रिका' के इस पद में लक्ष्मणजी को भी तुलसीदासजी ने महावीर कहा है। दोनों भाईयों को महावीर कहा है। यहां 'विनयपत्रिका' में गोस्वामीजी भगवान राम को महावीर कहते हैं। वीरमहा-राम रघुवीर तो है ही, लेकिन राम महावीर भी है। और गोस्वामीजी छोटे से पद में कहते हैं कि जिसकी साधना करने से सिद्धि मिलती है। अब जिस साधनातीर्थ में हम बैठे हैं, भगवान महावीर प्रभु की साधना की भूमि है ये, इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती कि इस महावीर प्रभु, उसकी भी जिन्होंने साधना की है वो सिद्ध हुए हैं। उस महावीर की साधना से भी सिद्धि प्राप्त होती है। और ये सिद्धि कई प्रकार की है। शास्त्रों में जो सिद्धिओं की गणना है। लेकिन वर्तमान में इक्कीसवीं सदी की सिद्धियां क्या? शरीर को सूक्ष्म कर देना, शरीर को बहुत विशाल कर देना। कभी ये करना, कभी वो करना। ये सब सिद्धियां तो है ही। और साधना से ये प्राप्त की जा सकती है। लेकिन जो युग में हम जी रहे हैं, उसमें बहुत संशोधन की जरूरत है। और महान व्यक्ति, जाग्रत व्यक्ति, जाग्रत विभूतियां, इस संशोधन को कबूल भी करती है।

पचीस सौ साल हो गये! फिर भी हम वही चीले से निकल नहीं पा रहे! पांच-पांच हजार साल हो गये कृष्ण को लेकिन कुछ हमने वो ढांचा पकड़ा है इसमें से हम निकल नहीं पाये! सालों हो गये, हम अभी यज्ञ में बलिदान, पशु काटना बंद नहीं कर रहे! सोचो, संशोधन होना चाहिए। ये यज्ञ की बातें आई। वेदों से लेकर उसमें संशोधन होना चाहिए। बलि चढ़ाना, काटना पशु को, नरवेध भी था! अश्वमेध भी होता था! ये क्या है? ये नादुरस्त समाज का परिचय है। ये कोई तंदुरस्त समाज का परिचय नहीं है। रुग्ण समाज की प्रतीति होती है। हिंसा करनी ठीक है क्या? कुछ परिवर्तन हुआ। लोग बलिदान में पशु नहीं काटते हैं। लेकिन यज्ञयाग में फिर वो कोळा-एक फल काटते हैं। उसमें थोड़ा गुलाल डाल देते हैं, ताकि लाल रंग का रस निकले। ये वृत्ति तो वही रही ना कि किसीको काटो और लहु निकले! वृत्ति तो यही रही! चाहे पशु काटो या फल काटो! काटना ही बंद कर दो! फल सीधा होम दो ना! सीधा फल ले के

'इदम् अग्नये न मम।' ये फल ही डाल दो ना! काटने की वृत्ति ही छोड़ो। ये बंद होना चाहिए।

मैं ये बात दिल से कहता रहता हूं। हमारे कई कर्मकांडी ब्राह्मण गुजरात के खास करके-युवान जो कर्मकांडी है वो मेरे पास चिठ्ठी लिखकर एकरार करते हैं, बापू, हम कर्मकांड में फल काटते थे। आपको सुनकर हमने फल काटना बंद कर दिया है। यजमान को यज्ञ कराना है तो कराये, नहीं कराये तो सीधा स्वर्ग चले जाए! लेकिन हमें ऐसे मार-काटवाले यज्ञ नहीं चाहिए। वृत्ति तो हिंसा की रही ना यार! ये नारियेल फ़ोड़ना भी मुझे रास नहीं आता। क्योंकि वो भी प्रहार की वृत्ति है। सीधा नारियेल दे दो ना! ये फ़ोड़ना प्रहार है, आघात पहुंचाना है। किसी की धर्मभावना को मैं ठेस पहुंचाना नहीं चाहता। हमारी अंदर की वृत्तियां प्रकट हो रही है! मारो, काटो, तोड़ो, फोड़ो! ये सब क्या है? ये रुग्ण समाज का परिचय है। इससे बाहर आना चाहिए।

मर्यादा सीखनी है तो राम के पास जाना ही पड़ेगा। यू मस्ट। और रस, रास और पूर्णता में डुबना है तो कृष्ण के पास जाना ही पड़ेगा। अहिंसा जीवन में नस-नस में उतारनी है तो महावीर भगवान के सिवा कोई चारा नहीं। जहां से जो मिले, ले लो। इसके लिए उदार दिल चाहिए। प्रति वर्ष हम तलगाजरडा में यज्ञ कराते हैं। मैंने ब्राह्मणों को कहा, तू काटना मत! पशु का तो सवाल ही नहीं उठता। मैंने कहा, फल भी मत काटना। हां, करवाना हो तो करो। वेद मंत्र बच जाय। यज्ञ का मूल विचार है वो बच जाय। यज्ञ का मूल विचार है वाह-वाह नहीं, स्वाहा-स्वाहा। बलिदान आपो; समर्पित करो। दुनिया का कोई ठिकाना नहीं! साहस करो।

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथतत् कवयो वदन्ति।।

ये साहस है। ये साध्वीजी कितना प्यारा गाती है! सब स्वीकार है यहां। भगवान महावीर की पुरानी परंपरा देखो तो बिलकुल नीरस लगती है। न मुस्कुराना, न किसीके सामने देखना, न कुछ, न कुछ! ये जरूरी है। एक अच्छा भोजन यदि हम एन्जोय कर सकते हैं तो भजन का एन्जोय करना कितना महत्त्व का है! माँ कल कह रही थी, राग का विस्तार ही वीतराग है। माँ, बहुत अच्छा लगता है इसीलिए आपके मुख पर बोलता हूं। माँ कहती थी, मैं साध्वी हो गई। अस्सी साल हो गये। मेरी माँ, मेरी माता, मेरा परिवार से मेरा राग है। लेकिन राग वहां सीमित नहीं हुआ; विस्तरता गया। ये भी मेरी माँ, ये भी मेरा बाप, ये भी मेरा भाई, ये बच्चा भी मेरा, ये गरीब, ये दीन-हीन, ये दुःखी, ये अभावग्रस्त, ये दलित, ये अंत्यज, ये सब मेरे। राग जब विस्तरित होता है तो वीतराग का स्वरूप धारण कर लेता है। ये 'समविस्तारक' जैन शब्द है, समविस्तारक मतलब विस्तरण होना, व्यापकता। तुम्हारे जीवन के लिए लोग तुम्हें प्रतिष्ठा दे और तुम्हारे जीवन में खाने का, पीने का, भोजन का, रहने का, सब कुछ समविस्तारक हो जाये; तुम्हारे लिए सब सुविधा हो जाय, फिर भी जितनी जरूरत हो उससे भी कम उपयोग करके आप जी लो, वही तो इस दुनिया में पूज्य है। महावीर का सूत्र; कौन पूज्य है? आज मुझे पूज्य का सूत्र कहना है आपको कि दुनिया में पूज्य कौन है? हाथ फैलाये सुख-सुविधाएं फिर भी जरूरत हो उससे भी कम में जो चला लेता है वही तो भिख्खु होगा; वही तो साधु होगा; वही तो पूज्य होगा। अब जिसने प्रेम ही नहीं किया तो खाक आंसू जाने! प्रेम ही नहीं किया! प्रेम को ही गालियां दी! मैं धरातलवाली बात नहीं करता हूं, जो आज-कल लड़का-लड़की बीभत्स प्रेम की बात करते हैं वो नहीं। ये प्रेम परमात्मा तरफ प्रेम की बात है।

कई लोग दिल को कहीं गिरवे रखकर बुद्धि ले आये हैं! डिग्रियां ले आये हैं! दिल को गिरवे रखकर डिग्रियां ले आये! बौद्धिकता ले आये और दिल को गिरवे रखा! कौन छुड़ायेगा? मेरे पास आओगे तो मैं छुड़वा दूंगा। कब तक दिमागी में रहोगे! ऊतरो थोड़ा नीचे, दिल में ऊतरो। कितनी करुणा होगी भगवान महावीर की आंखो में! कितना कम बोले हैं भगवान महावीर प्रभु! हमने अपने हिसाबों से क्या-क्या अर्थ कर लिया! सनातन धर्म देखो तो वहां भी यही दशा! हर जगह धर्म के नाम पर लड़ना, लड़ना, लड़ना! और धर्म में रहे लोग जब लड़ते हैं तब दया आती है! बहुत करुणा आती है! साधु को कोर्ट में देखता हूं तब मुझे बहुत दया आती है

कि कलियुग पूरा का पूरा भर गया! साधु तो हार्ट में होता है, कोर्ट में थोड़ा होता है? ये तो हार्ट का मामला है।

तो, साधना करने से सिद्धि प्राप्त होती है। कोई महावीर की साधना करे तो सिद्धि प्राप्त हो जाये। लेकिन सिद्धि माने क्या? मुझे कोई सिद्धि आ जाये कि मैं जो हूं इससे छोटा हो जाऊं तो फायदा क्या? मैं तो मानता ही नहीं कि ऐसा कुछ हो सकता है। होता भी हो सिद्धिवाला। हनुमानजी में सिद्धि है; अष्टसिद्धि। हनुमानजी छोटे भी बने हैं 'मानस' में, बड़े भी बने हैं। सिद्धि होगी सिद्धों के पास बाकी तो बातें ज्यादा होती है। बड़े-बड़े सिद्धों को भी मैंने देखा है। और मेरे पास अकेले में बैठकर सिद्ध के रूप में पहचानेवाले वो कहते हैं, बापू, हार्ट की बहुत पीड़ा है! क्या सिद्धि? अष्टसिद्धि मानी मेरी दृष्टि में आठ प्रकार की शुद्धि। वाणी की शुद्धि, सिद्धि; मन की शुद्धि, सिद्धि; नज़र की शुद्धि, सिद्धि; विचार की शुद्धि, सिद्धि; संकल्प की शुद्धि, सिद्धि है। वो सिद्धियां है, अवश्य; मैं मना नहीं करता। लेकिन ये भी सिद्धि। तुलसी का महावीर, इस महावीर का स्मरण करोगे, तुम्हारे काम पूरे हो जायेंगे। अथवा तो 'सकल काम पूरन करे' मीन्स तुम्हारी सभी इच्छा पूरी हो जाये ये भी अथवा तो आप पूर्णकाम हो जाओगे। आपको कोई विशेष कामना बचेगी नहीं। तो निष्काम हुआ जा सकता है या तो पूर्णकाम हुआ जा सकता है। बीच में रहना बड़ा मुश्किल है।

तो इस दुनिया में पूज्य कौन? कितना सुंदर सूत्र है? कौन पूज्य? किसको हम पूज्य कहे? परम पूज्य, सदा पूज्य, आदि-आदि जो हम कहते हैं लेकिन महावीर प्रभु कहते हैं कि पूज्य कौन? पूज्य की व्याख्या क्या? बड़ी सटीक प्यारी सरल-सीधी व्याख्या है। इसमें से मैं एक सूत्र लिखकर आया हूं कि पूज्य कौन? मैं बोलूं, आप भी बोलो। माँ, मेरे उच्चार में भूल हो तो मुझे माफ़ करे! क्योंकि ये भाषा वो है ना इसीलिए मैं बहुत सोचकर लिखता हूं।

तो भगवान महावीर ने जो बातें कही कि पूज्य के लक्षण क्या है? हमारे कल्याण के लिए पचीस सौ साल पहले निकले ये अमृत वचन। वो मैं लिखकर तो लाया हूं। लेकिन उच्चारभेद हो तो क्षमा करे। मैं बोलूं, आप बोले -

आचारभठ्ठा विनयम् पऊंजे-सुशुयाळो परिगेज्ञ,
रक्कम, जवो वै तं अभीकुंरव माळो गुरुं तू नासायही पूज्यो।

ये चार सूत्र है। जिसमें हो वो पूज्य। बिलकुल सरल। भगवान महावीर प्रभु कहते हैं, दुनिया हमें आचारवान कहे उस आचार को प्राप्त करने के लिए कौन सूत्र प्रयोग में लाये? तो कहते हैं, वो विनय का प्रयोग करता है। विनय सबसे बड़ा आचार है। हमारे यहां ये कहा गया कि कितनी ही विद्या न हो, विद्या विनय से ही शोभित रहती है। आचारवान आदमी ऐसे बैठता है, ऐसे उठता है, ऐसे बोलता है, ऐसे सोता है, ऐसे देखता है। ये सब आचारवान है, लेकिन उसकी चाबी तो विनय है। कभी बुद्धपुरुष के आचार ठीक न भी दिखाई दे। अवधूत के आचार बहुत समझ में नहीं आयेंगे। परम हंस के आचार समझ में नहीं आयेंगे। लेकिन विनय समझो तो आचार पकड़ा जाएगा।

महाकवि निरालाजी, 'राम की अग्नि परीक्षा' के महाकवि, उसके बारे में ऐसा कहा जाता था कि कोई भी उसको मिलने आये तो चेर पर बैठते थे, पैर लंबा करते थे! अब आचार देखो! बड़ा अविनय लगता है! कोई भी आये तो पैर लंबा! उसका मतलब है, पैर दबा! गजब है आदमी! अब उसको मिलनेवाले कोई छोटे-छोटे तो नहीं थे। कभी गवर्नर आया; कोई सी.एम. आया; कोई सांसद आया; कोई धनी आया; पैर लंबा करे! गजब के आदमी होते हैं! सर्जकों की दुनिया अद्‌भुत होती है। मैं प्रार्थना करता हूं, सत्ता को चाहिए, धर्म को चाहिए, पैसेवालों को चाहिए, जो सर्जक है उस पर कोई पाबंदी नहीं होनी चाहिए। वो मस्त फ़कीर है। उसको कोई बांधे ना, कृपया। छोटे-बड़े एवोर्ड देते हो कोई साहित्यकार को तो कोई मेहरबानी नहीं करते हो! ये तो गंगा में तुम एक रूपया डालते हो! मेरे देश का शब्दसेवी स्वतंत्र हो। पाकिस्तान के बहुत बड़े शायर, अब तो नहीं रहे। एक बार नाथद्वारा के मुशायरा में खुद शरीक थे अहमद फराज़साहब। जब एमरजन्सी लगी, सरमुखत्यारशाही लगी, तानाशाही लगी और उस समय उसने जो कविताएं लिखी तानाशाही के सामने! जेल में डाले दिये गये। लेकिन उसने कहा, कुछ भी करो, मैं शब्द का शायर हूं। कितना बड़ा दीर्घकाल लिखा था! सत्ता कांप जाय! हमारा परवाज़ सा'ब कहते हैं -

सब भर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का।

रात भर हमारे ख्याल में कोई फ़कीर की कुटिया रही। हम किसी संत के सुमिरन में रहे।

सब भर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का।
दिन भर सुनाऊंगा तुम्हें किस्सा फ़कीर का।

फिर मैं कोई फ़कीर की कथा सुनाऊंगा।

हिलने लगे हैं तख्त, उछलने लगे हैं ताज।
शाहों ने जब सुना कोई किस्सा फ़कीर का।

जब शहेनशाहों ने किसी फ़कीर का किस्सा सुना तो उसके तख्तोताज हिलने लगे! ये सर्जकों की स्वतंत्रता है। सर्जक स्वतंत्र होना चाहिए। धर्मसत्ता भी उसको बांधे ना! उसकी सेवा करे। शासन-सियासत भी उसकी सेवा करे। तो निरालाजी पैर लंबा करे! कितना अभद्र लगे यार! तो कभी-कभी बड़े लोग आचार में नहीं दिखते। महावीर कहते हैं, जो आचार को प्रस्थापित करने के लिए विनय का प्रयोग करते हैं।

तो, युवान भाई-बहन, अच्छा आचार रखो! लेकिन दांभिक आचार ये यहां काटना है। आदमी का हास्य कितना प्लास्टिकी हो गया है! मिलते हैं, हाय, हेल्लो, कैसे हो? बाकी अंदर से कुछ नहीं! आचार दांभिक हो सकता है; क्षणभंगुर भी हो सकता है; विनय शाश्वत होता है। तो भगवान महावीर प्रभु कहते हैं, जो विनय के द्वारा आचार को सिद्ध करता है, वो पूज्य है। ये पहला सूत्र।

दूसरा सूत्र, बहुत प्यारा सूत्र, 'सुसुमाळो परिगीज्ञ वक्कम्।' भगवान महावीर प्रभु कहते हैं। बिलकुल सरल है मेरे युवान भाई-बहन, महावीर सूत्र, महावीरवाणी, भक्तिपूर्वक, भावपूर्वक, जो अपने गुरु के वचन को सुनता है; अब इससे सरल सूत्र क्या हो सकता है? भक्तिपूर्वक, प्रेमपूर्वक, अपने गुरु के वचनों का श्रवण

करता है, वो पूज्य है। बस, जिसको आपने गुरु के रूप में जान लिया हो, पहचान लिया हो कि नहीं, ये गुरु है, उसके वचन को भक्तिभाव से सुनना। गंगासती का एक पद है, गुजरात की जागी हुई महिला, उसने गाया है -

वचन विवेकी जे नरनारी पानबाई!
तेने ब्रह्मादिक लागे पाय;
सद्गुरुना वचनमां थाव अधिकारी,
मेली द्यो अंतरनुं मान।

और हमारे 'रामचरित मानस' में लिखा है-

सद्गुर बैद बचन बिस्वासा।
संजम यह न विषय कै आसा।

मैं आप युवान भाई-बहनों को खास कहूं कि गुरु जल्दी मिल जाय ऐसी परिस्थिति में मत रहना। भले थोड़ी देर लगे। लेकिन एक बार कोई बुद्धपुरुष की प्राप्ति हो जाये तो फिर उसके वचन के अधिकारी होना। हो सकता है, वो कभी कटुवचन भी कहे; सुवाक्य भी कह दे। मैं तो यही समझता हूं, बुद्धपुरुष कभी नाराज नहीं हो सकता; खफ़ा नहीं होता लेकिन कभी तुम्हारा बुद्धपुरुष तुम पर नाराज हो जाय उस दिन उत्सव मनाना कि गुरु ने मुझे अपना समझा; अपना समझकर उसने डांटा! गुरु डांटे, सौभाग्य की घडी; लेकिन हम तो ऐसे सामान्य स्तर के आश्रित हैं कि थोड़ा भी गुरु का रुख ठीक नहीं तो हमारी श्रद्धा हिलने में देर नहीं लगती! गुरु के वचनों को जो बहुत आदर के साथ सुनता है। गुरुवचन पचाना ये आगे की बात है लेकिन सुनना ये बहुत बड़ी बात है! गुरुवचन सुनो।

तीसरा सूत्र, जो भगवान महावीर प्रभु ने कहा है, 'जवो वै तं अभीकुंरव माळो'; गुरु ने जो कहा वो स्वीकार कर के विवेकपूर्ण कर्म से उसको चरितार्थ कर दे ये जगत में पूज्य है। सुनना भी पूज्यता है लेकिन आगे की पूज्यता है गुरुवचन को चरितार्थ कर देना। कभी-कभी गुरुवचन में विश्वास हो तो हम चरितार्थ न करे तो परमात्मा हमारे गुरु के वचन को चरितार्थ कर देता है। शबरी के जीवन में ये घटना घटी है। गुरु के वचन की पूर्ति कभी शिष्य करता है सुनने के बाद। मानो शिष्य नहीं कर पाया तो विवेक से और अधिकारी के रूप में ये वचन गुरु का पकड़ा है तो कभी न कभी परमात्मा इसके गुरु के वचन पूरा कर देता है। बुद्धपुरुष वचन पूरा कर देता है। बहुत शिखर की बात है। भगवान महावीर बोलेंगे तो शिखर की ही बात बोलेंगे। बोले हैं तलेटी में ऊतरकर लेकिन बात तो शिखर की ही है। कहना था जो निकट पड़े लोग उनको तो आये होंगे नीचे। सब बुद्धपुरुष नीचे आये हैं। क्योंकि सोचा, ये लोग उपर नहीं आ पायेंगे, इसीलिए सब नीचे आये। क्या तपस्या की है लोगों ने! तप की महिमा तो है ही। लेकिन जिन्होंने इस रूप से तप किया है उनमें खुश्बू भी बहुत है, उनमें प्रकाश भी बहुत है। 'रामचरित मानस' में लिखा है, तप के बिना तेज नहीं हो सकता है।

'गुरुं तू नासायही पूज्यो।' जो व्यक्ति गुरु के आज्ञा का कभी अनादर नहीं करता वो पूज्य है। बहुत बढिया! मैं आपसे करबद्ध प्रार्थना करता हूं, जल्दी किसी को गुरु मानने की जिद्द मत करना और एक बार मन, वचन, कर्म से आश्रय ले लिया तो फिर कभी आज्ञा का अनादर मत करना। 'प्रभु आज्ञा अपेल सती...' परम की आज्ञा अपेल है। अकाट्य है! 'मानस' में लिखा है, 'साधु अवग्या तुरत भवानी।' बुद्धपुरुष की आज्ञा का अनादर करते हैं तो कभी-कभी हमारे हाथ में निर्वाण आ जाता है और हम निर्वाण से वंचित रह जाते हैं! गुरुआज्ञा का अनादर न करना; कुछ भी हो। गुरु को प्राप्त करने में थोडी देर लगे तो चिंता नहीं। तीव्र प्रतीक्षा होगी तो गुरु खोजना नहीं पड़ेगा; गुरु हमें खोज लेगा। हमारा वर कर लेगा; हमें पसंद कर लेगा जरूर, लेकिन आज्ञा को तोड़ना मत। बहुत कठिन है। श्रीमद् राजचंद्र का एक वचन याद है -

सेवे सद्गुरु चरणने त्यागी दइ निज पक्ष।

अपना पक्ष, अपना मत, अपनी जिद्द, अपना आग्रह छोड़कर जो अपने सद्गुरु के चरण की सेवा करता है वो परमार्थ को प्राप्त करता है। अपना कोई मत नहीं, अपना कोई विचार नहीं; मेरे गुरु का अंतिम, आखिर निर्णय। भरतजी 'रामचरित मानस' में कहते हैं -

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुना सागर कीजिअ सोई।

मेरे गुरु ने कह दिया, बात खतम! 'रामचरित मानस' में लिखा है, गुरु की ओर कोई सेवा नहीं हो सकती। हम और आप गुरु की क्या सेवा कर सकते हैं? ठीक है, अपने साधन को शुद्ध करने के लिए, अपने साधन को सफल करने के लिए, अपने पास जो भी हो उसको धन्य करने के लिए, गुरु हमारी सेवा कबूल कर ले वो उसकी महिमा, उसका औदार्य। बाकी हम सेवा क्या करे? तो फिर तुलसीदास को किसी ने पूछा, तो गुरु की सेवा करने का कोई हमारे पास उपाय? बोले, गुरु की सेवा हो ही नहीं सकती। तो बोले, कोई सेवा एक सूत्र के रूप में आप बता दो। तो तुलसी ने बताया 'आग्या सम न सुसाहिब सेवा।' उनकी आज्ञा के समान उनकी कोई सेवा नहीं। वो कहे कि ये कर, तो बात खतम!

मेरे भाई-बहन, आज्ञा के समान अपने साहिब की ओर कोई सेवा नहीं। उसने मुझे आज्ञा दी। तीन-चार वस्तु समझ ले, प्लीज़। एक तो गुरु हमें आज्ञा दे उस समय समझना कि हमारे लिए धन्य भाग्य है कि हमें आज्ञा दी कि ये कर लो। दूसरी वस्तु, गुरु कभी नाराज होकर थोड़ा डांट ले तो घर में उत्सव मनाना कि मुझे अपना समझकर डांटा। और तीसरी बात खास समझ लो, कभी कोई गुरु तुम्हारे पास कुछ मांगे कि बेटा, मुझे ये जरूरत है, इतना काम करो, उसी समय नाचना कि इश्वर से नहीं मांगनेवाला आदमी आज मुझे कहता है कि थोड़ी ये सेवा! इसी समय तो तुम्हारे पैर जमीन पर नहीं रहने चाहिए कि दाता ने मेरे से मांगा! गुरुपद अद्भुत है! कहने का मतलब चार वस्तु है। एक, विनय के द्वारा जो आचार सिद्ध करता है वो पूज्य है। दूसरा, सद्गुरु के वचन को जो भक्ति से सुनता है वो व्यक्ति पूज्य है। तीसरा, गुरु के वचन को किसी मात्रा में पूरा करता है वो पूज्य है। और गुरु के वचन की आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं करता, अवज्ञा नहीं करता वो पूज्य है। भगवान महावीर की ऐसी तो बहुत-सी बातें हैं।

चार प्रकार के गुरु होते हैं। एक होते हैं कुलगुरु। 'गुरु बसिष्ठ कुल पूज्य हमारे।' कुलगुरु वशिष्ठ पूज्य है 'मानस' में। एक कुलगुरु होते हैं, जो हमारे लिए पूज्य होते हैं। लेकिन ये कुल की मर्यादा में ही पूज्य होते हैं। बृहस्पति पूज्य है तो देवकुल के लिए। शुक्राचार्य पूज्य है तो असुर कुल के लिए। दूसरा है राष्ट्रगुरु,राज्यगुरु। गुजरात में राज्यगुरु सरनेइम भी है। अपभ्रंश होकर राजगोर हुआ। दूसरा गुरु राष्ट्रगुरु, राज्यगुरु। तीसरा गुरु, जो 'मानस' में लिखा है, 'तुम्ह त्रिभुवन गुरु बेद बखाना।' त्रिभुवन के गुरु, जो महादेव है। चौथा गुरु, 'सद्गुरु बैद बचन बिस्वासा।' सद्गुरु, परम गुरु, गुणातीत गुरु। मेरे भाई-बहन, कुलगुरु जो हो उसके पास आचार सिद्ध करने के लिए विनय रखना। हमारे कुल के गुरु है उसका आदर रखना। बूझर्गो को चाहिए अपने बच्चों को भी सिखाये, ये हमारे कुलगुरु है। उसके साथ विनय-आदर रखना, कोई प्रलोभन और भय नहीं।

युवानो को मैं खास कहूं, अपने से जो श्रेष्ठ है, आगे है, उसको रोज अभिवादन करना। स्मृतिकार मनु ने लिखा है, श्रेष्ठों को, माता-पिता को, गुरुजनों को, वडीलों को जो अभिवादन करता है उसकी चार वस्तु रोज बढ़ती है, 'आयुर्विद्यायशोबलम्।' उसकी उम्र बढ़ती है। अब उम्र तो कहते हैं निश्चित होती है। लेकिन उम्र बढ़ती है मतलब जो बची है उम्र उसमें आनंद बढ़ जाएगा। श्रेष्ठ को अभिवादन करने से आनंद बढ़ेगा। और

मेरे भाई–बहन, आज्ञा के समान अपने साहिब की ओर कोई सेवा नहीं। तीन–चार वस्तु समझ ले, प्लीज़। एक तो गुरु हमें आज्ञा दे उस समय समझना कि हमारे लिए धन्य भाग्य है कि हमें आज्ञा दी कि ये कर लो। दूसरी वस्तु, गुरु कभी नाराज होकर थोड़ा डांट ले तो घर में उत्सव मनाना कि मुझे अपना समझकर डांटा। और तीसरी बात खास समझ लो, कभी कोई गुरु तुम्हारे पास कुछ मांगे कि बेटा, मुझे ये जरूरत है, इतना काम करो, उसी समय नाचना कि इश्वर से नहीं मांगनेवाला आदमी आज मुझे कहता है कि थोड़ी ये सेवा! गुरुपद अद्भुत है!

आनंद बढ़े तो ही उम्र बढ़ी काम की ना! शीलवान को जो अभिवादन करता है उसकी विद्या बढ़ती है; मुक्तिदायक विद्या निरंतर वर्धमान होती है। यश; जो कुलगुरु को आदर देता है उसका यश बढ़ता है, कीर्ति बढ़ती है, प्रतिष्ठा बढ़ती है। और बल बढ़ता है। शरीर का बल बढ़े कि नहीं, मुझे खबर नहीं; आत्मबल बढ़ता है, मनोबल बढ़ता है, संकल्पबल बढ़ता है।

तो कुलगुरु के साथ मैं यह पहला सूत्र लगाना चाहूंगा। फिर उसके बाद राष्ट्रगुरु, राज्यगुरु। अपने राज्यगुरु जो होते हैं। हम जगद्गुरु भी कह सकते हैं। ये हमारे राष्ट्र के गुरु है। कोई लोग ये पद कबूल करे, ना करे। लेकिन कोई पूरे राष्ट्र का चिंतन करता हो। कोई महापुरुष, कोई ज्ञानवान, कोई बुद्धजन, अघोषित राष्ट्रगुरु, उसके वचनों को, ऐसे बुद्धजनों की बातों को सियासत को सुननी चाहिए; सत्ताओं को सुननी चाहिए। जो केवल राष्ट्र के लिए जीता हो, राष्ट्रमंगल ही जिसका जीवन हो उनकी जांच होनी चाहिए। जो सियासत नहीं करती इससे कई गुना सात्त्विक कार्य छोटे-बड़े स्थान कर रहे हैं, उसकी जांच सत्ता को करनी चाहिए और उनको सुनना चाहिए। लेकिन जब सियासत की चर्चा करता हूं तब मुझे जिगर मुरादाबादी साहब का शे'र याद आता है। बड़ा प्यारा शे'र वो कहते हैं -

उसका फ़र्ज क्या वो अहेले शियासत जाने।
मेरा पैगाम महोब्बत है जहां तक पहुंचे।

हमारा पैगाम तो सत्य, प्रेम, करुणा है; जहां तक पहुंचे। विनय का प्रयोग कुलगुरु के प्रति। वचन सुनना, गंभीरता से ये राज्यगुरु के प्रति। वचनों को पूरा करना ये त्रिभुवन गुरु के प्रति अथवा तो त्रिभुवन गुरु वो है जो वचन पूरा करे; दी हुई बात पूरी करे। भगवान शंकर ने 'रामचरित मानस' में भगवान नारायण को वचन दिया कि आपने कहा, शादी करो। चलो, मैं करूंगा। वचन पूरा कर दिया। ये त्रिभुवन गुरु है। और फिर होते हैं सद्गुरु। मेरे लिए बहुत प्यारा शब्द है; बहुत पवित्र शब्द है। उपनिषद में तो 'गुरु' ही शब्द आता है। 'सद्' लगाने की बात ही नहीं थी। ये 'सद्' शब्द गुरुजनों के साथ लगा, ये करीब-करीब मध्ययुग में आया शब्द है। क्योंकि असद्गुरु आ गये होंगे! इसीलिए 'सद्' लगाना जरूरी हुआ! और जिसके वचनों का मैं इस कथा में आश्रय कर रहा हूं वो सद्गुरु की बात कृपालु देव बहुत करते हैं। कबीर ने 'सद्गुरु' शब्द का बहुत प्रयोग किया। नानकदेव, कबीर, रईदास, तुलसी ये जो मध्यकालीन संत हुए, उसने 'सद्गुरु' शब्द का प्रयोग किया। बड़ा प्यारा शब्द है 'सद्गुरु।' सद्गुरु के वचन को सुनना। सद्गुरु के वचन को उसी मात्रा में पूरा करना। सद्गुरु की अवज्ञा न करना और आचारप्राप्ति के लिए विनय का सदुपयोग करना। भगवान महावीर कहते हैं, वो पूज्य है।

तो मेरे भाई-बहन, हम और आप सरलता से ये कर सकते हैं। और मुझे तो लगता है, कलियुग में किसी बुद्धपुरुष के शरण में रहना ये कृतार्थ है। हां साहब! हम साधन भी कितने कर सकते हैं! हम संसार के जंतु लोग कहां जप-तप कर सकते हैं! हम जैसों का कल्याण, हम जैसों की प्रसन्नता तो कोई पहुंचे हुए फ़कीर की शरण में रहना, कोई पहुंचे हुए बुद्धपुरुष का आश्रय करना। 'मानस' की दो पंक्तियां याद रखना, तुलसी लिखते हैं -

जे गुर चरन रेनु सिर धरहीं।
ते जनुसकल बिभव बस करही।

जो गुरु की चरणरज को सिर पर धारण करता है वो जगत की तमाम संपदाओं को मानो वश कर लेता है। दशरथजी कहते हैं, मेरे समान ये रज की महिमा को दूसरे ने अनुभव नहीं किया। आपकी पवित्र रज पूजने से मैंने सब पा लिया। फिर भी आश्रय करने के बाद शायद हम तरंगी है; हम विषयी है; हम संसार में लिप्त है; कषायों से भरे हुए है। थोड़ी बहुत चूक हो जाएगी तो दाता बड़े उदार होते हैं। वचन सुनना। मानो पूरा करे ना, कम से कम उसकी अवज्ञा न करे; उसकी मजाक न करे, उसकी हंसी न उड़ाये। भगवान महावीर का एक वचन है, किसी को कुछ ऐसा करने के लिए हंसी-मजाक करना भी हिंसा है। तो बाप! 'मानस-महाबीर' की सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करते हुए कुछ हमारे जीवन के विकास के लिए हम एक अर्थ में कहे तो ये प्रवचन भी है और स्वाध्याय भी है।

भगवान महावीर के रूप में मूर्तिमंत तप अवतरित हुआ है

'मानस-महाबीर', जो इस नव दिवसीय रामकथा के प्रेमयज्ञ का केन्द्रबिंदु है। उसकी हम परिकम्मा कर रहे हैं। कुछ ओर बातें प्रसन्नता से सुने। एक दो समान प्रश्न है। कल बात हुई कि देश-काल के अनुसार मूल को पकड़कर नये-नये फूल खिलने चाहिए। संशोधन आवश्यक है। तो पूछा है कि, तुलसी-दर्शन में नये यज्ञ की बात आई, जहां 'महाबीर' शब्द का प्रयोग करके तुलसी ने नये यज्ञ की प्रस्थापना की। अब कैसा यज्ञ हो, कौन-सा घी हो, कौन-सा जल हो, कौन-से समिध हो, कौन-सी अग्नि हो?'

भगवान कृष्ण ने 'गीता' में कहा है, अर्जुन, कुछ भी हो, यज्ञ, दान और तप कभी छोड़ना मत क्योंकि यज्ञ, दान और तप तीनों बुद्धिमानों की बुद्धि को समय-समय पर विशुद्ध करता है। और वही कृष्ण ने कहा कि कलियुग आयेगा, गरीब और दीन-हीन, वंचित, उपेक्षित, आखिरी आदमी कहां यज्ञ कर पायेगा? इसीलिए पांच हजार साल पहले ही कृष्ण ने एक नये यज्ञ की स्थापना ओलरेडी कर दी। कहा, 'यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि।' 'दुनिया के समस्त वैदिक, पौराणिक कोई भी यज्ञ हो ये तमाम यज्ञ में जपयज्ञ मैं हूं।' आप 'महावीर, महावीर' जपे; आप 'जय जीनेन्द्र' बोले; आप 'राम, राम', 'कृष्ण, कृष्ण', 'अल्लाह', 'अकबर' बोले; 'बुद्धं शरणं गच्छामि' बोले; कोई भी जप यज्ञ है। यज्ञ तो पकड़ ही रखा। संशोधन कर दिया। और फिर इसी कालगणना में, तुलसी ने पांच सौ साल पहले फिर संशोधन कर दिया।

प्रेम बारि तरपन भलो धृत सहज सनेहु।
संसय समिध अगिनि छमा ममता बलि देहू।।

भगवान महावीर प्रभु भी एक यज्ञ की स्थापना करते हैं। भगवान महावीर ने कहा, वो पशु काटनेवाला यज्ञ नहीं। ये बेकार घी होमनेवाला यज्ञ नहीं। ये जड़ता के कारण समय, समझ, संपत्ति सबको व्यर्थ करनेवाला यज्ञ नहीं। भगवान महावीर ने भी यज्ञ, दान और तप पकड़ रखा। तीनों सूत्रों पकड़ रखा है। आज किसी जैन संघ के अध्यक्ष महोदय ने चिठ्ठी भी लिखी है कि सनातन धर्म और अन्य शाक्त, शैव, वैष्णव आदि में बहुत दूरी होने लगी थी तब जाके 'रामचरित मानस' उतरा और 'मानस' ने सबको जोड़ने की कोशिश की। क्या आज ऐसा नहीं हो सकता कि सबको जोड़ा जाय? देखो, मूल पुरुष तो कभी बिलग थे ही नहीं। उसके बाद पांच सौ-हजार साल के बाद ये सब विषमताएं पैदा हुई। महावीर और बुद्ध कभी किसी सिद्धांतों के लिए लड़े हैं? बाद में खबर नहीं, कितने वचन एड किये होंगे! कितने वचन निकाल दिये होंगे! कौन प्रमाणित करेगा? महावीर, राम, कृष्ण, शिव कोई भी हो, क्या फ़र्क हैं? लेकिन आज का जो माहौल, देश-काल है उसमें बहुत परिवर्तन आ रहा है। चिंता करने की जरूरत नहीं हैं, चिंतन करने की जरूरत है।

माँ कल कह रही थी कि पैतालीस साल से मैं हूं लेकिन ऐसा निर्दोष आनंद मैंने जिंदगी में नहीं देखा है। ये माँ का वक्तव्य हैं। ये मोरारिबापू के पक्ष में नहीं है, रामकथा के पक्ष में है। मोरारिबापू तो जंतु है। आनंद हमारा स्वभाव है। उससे हम वंचित क्यों रहे? कोई भी सिद्धांत के द्वारा किसी व्यक्ति को आनंद से रहित करना हिंसा है। आनंद पाना, प्रसन्न रहना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार हैं। आदि शंकर ने कहा है, 'प्रसन्न चित्ते परमात्मदर्शनम्।' तुम्हें परमात्मा का दर्शन करना है तो तुम प्रसन्न रहो। इससे ज्यादा सरल सिद्धांत क्या होगा? जीव प्रसन्न रहे और परमात्मा पाये। जो समझे हैं उनमें विरोध है ही नहीं। जिसको लड़ना है, वो घर में नहीं लड़ पाते तो आश्रम में लड़ते है! जिसकी प्रकृति ही लड़ने की है!

कल चिठ्ठी ये भी आई। पूछा कि इस देश में तीन महापुरुष हुए-परशुराम, एक काल में भगवान बुद्ध-महावीर और फिर गांधीजी। परशुराम ने इक्कीस बार पृथ्वी को नक्षत्री कर दी और जितने योद्धा थे मर गये और देश कमजोर हो गया और विदेशी सत्ता हम पर हावी होती रही। और हमको वो अहिंसा वाले वातावरण ने पराधीन किया और फिर महावीर प्रभु आये, बुद्ध आये उनकी तो अहिंसा प्राण थी। करुणा उनका श्वास था। अहिंसा की इतनी गहराई में स्थापना की। परिणाम जगत को क्या मिला? देश गुलाम होता रहा! फिर आये गांधीजी, उसने भी अहिंसा की बात की। क्या इस अहिंसा से दुनिया का कुछ भला हुआ? ऐसा मुझे पूछा गया। ये विचार है हमारे पूज्य सच्चिदानंदजी के। वहीं से उठाया है उसने! मैं इतना ही पूछुं मेरे देश को, मेरी दुनिया को कि यदि गांधी की अहिंसा ने, महावीर-बुद्ध की अहिंसा ने और परशुराम कालीन क्षात्रधर्म जब खत्म हो गया तब वो कायरता आई, उसके कारण सब गुलामी आई। अहिंसा के कारण ये सब हुआ, ऐसा यदि दोषारोपण होता है तो हिंसा से कौन समाधान मिला? युगों से हिंसा होती रही, परिणाम तो दिखाओ कि हिंसा का परिणाम क्या है? परिणाम जब भी लाएगी अहिंसा लाएगी। आज नहीं तो कल दुनिया को कुबूल करना पड़ेगा ही। जरूर इन विचारों से कई महापुरुषों को तकलीफ़ है, मैं जानता हूं। क्योंकि कई महापुरुष शस्त्र विचारधारा को माननेवाले हैं। जब जगत को शांति मिलेगी, विश्राम मिलेगा, आदमी चैन से वृक्ष के नीचे या अपने महल में ध्यान कर सकेगा तो अहिंसा से ही कर सकेगा। हिंसा से परिणाम आना होता तो आ गया होता। बढ़ती जा रही है हिंसा!

मेरे भाई-बहन, सब एक ही है। निर्दोष आनंद पाना हमारा अधिकार है। हमारे आनंद को दबाया गया। हमारी प्रसन्नता को मारी गई। ये क्या हिंसा नहीं है? सूत्रों के द्वारा मार दो! सिद्धांतों के द्वारा मार दो! बहुत गहराई में हिंसा ही तो है! सभी अवतारों में कहीं मतभेद नहीं है। मैं मेरा पक्का करने के लिए ग्रंथों को देखता हूं तब पता लगता हैं, बाद में आये कोई कहते हैं, पांच सौ साल पहले आये हैं विचार! बड़ा गुनाह ये है मूल पुरुष के विचारों में मिलावट कर देना! मूल धारा को हम बिगाड़ देते हैं! भगवान महावीर ने यज्ञ पकड़ रखा लेकिन संशोधन किया। भगवान महावीर ने दान नहीं किया? सबसे बड़ा महावीर प्रभु का दान है, क्षमादान। 'मिच्छामि दुक्कडम्।' जैसा कौन दान है? और भगवान महावीर तप का तो विग्रह है। भगवान महावीर के रूप में मूर्तिमंत तप अवतरित हुआ है।

तो, भगवान ने यज्ञ को छोड़ने की मना की है, जो बुद्धि को विशुद्ध करता है। वो ही कृष्ण ने सामान्य जन के लिए जप करना, प्रभु का नाम लेना यज्ञ है ऐसा कहा। उसी यज्ञ के लिए तुलसी ने संशोधन किया जो कल मैंने आपके सामने रखा। और भगवान महावीर स्वामी ने भी एक यज्ञ की चर्चा अपने सूत्रों में की है। यज्ञ को हटाया नहीं, यज्ञ को देश-काल के अनुसार प्रस्थापित किया। और महावीर किस यज्ञ को प्रधानता देते हैं वो सुनिए। भाषा वो है तो चूक हो तो क्षमा कीजिएगा। वेदमंत्र मैं बुलवाता हूं। चौपाई गवाता हूं। मेरे हर्ष में जरा भी कमी नहीं जब मैं 'महावीर' बोलता हूं। सब समान है। इतनी पवित्र वाणी है। पचीस सौ साल पहले बोली गई वाणी आज हमको अभ्यंतर स्नान करा रही है; भीतरी स्नान से हमें तरोताजा कर रही है। सुनिए महावीर प्रभु जो यज्ञ की बात करते हैं -

तपो जोई जीवो जोईठाणं
जोगा सुयातं शरीरं करिसंग।
कम्मेहा संजम जोग सन्निहोम
हुणामि इसीणं पसत्थं।।

महावीर प्रभु कहते हैं, मैं रोज यज्ञ करता हूं जो ऋषिमुनियों ने श्रेष्ठ माना है। वैदिक यज्ञ, लक्षचंडी, शतचंडी, सब यज्ञ की महिमा है। रुद्र यज्ञ, वरुण यज्ञ सबका स्वागत है। लेकिन ये सब नहीं कर पायेंगे। थोड़ा सद्गुरु की कृपा से पुरुषार्थ करें। ये हम सब कर सकते हैं। यद्यपि ये कठिन भी है।

महावीर प्रभु कहते हैं, कैसा यज्ञ? यज्ञ में ज्योति चाहिए, अग्निस्थापन की जगह चाहिए। तो वीर महाप्रभु कहते हैं, 'तपो जोई...' जिसमें तप की ज्योति हैं। तप की व्याख्या महावीर के जीवन में खोजे तो अद्भुत मिलती है। लेकिन हम जैसों को निकट पड़े ऐसा तप; निंदा सुनी मुस्कुरा दिया, प्रशंसा सुनी, मुस्कुरा

दिया, ये तप है। सहारा दिया या धक्का दिया, मुस्कुरा दिया, ये तप। गादी पर बिठाया, गादी से हटाया, प्रसन्नता से निकल गये, ये तप। त्याग और संग्रह बिना समझे नहीं करना चाहिए। भगवान महावीर प्रभु को रास आया, एक वृक्ष के नीचे बैठकर तपश्चर्या। महल और वृक्ष महत्त्व के नहीं थे। तप महत्त्व का था। महावीर तो कितना कठिन तप करते हैं! ये तप ज्योति है। मुझे नहीं लगता, धरती पर ऐसा तप किसीने किया हो। 'मानस' में मनु-शतरूपा ने तप किया है; माँ पार्वती ने किया है तप पर जिन शर्तों से महावीर प्रभु ने किया ऐसा तप किसीने नहीं किया विश्व इतिहास में शायद।

महावीर स्वामी तप करते थे तो शर्त के साथ कि मैं भिक्षा लेने जाऊं तो काले कपड़ेवाली स्त्री जिसकी एक ही आंख हो वो दे तो ही भिक्षा लूं। और जब ऐसी स्त्री न मिले तो महावीर स्वामी भूखे रहे महिनों तक! मेरी सांस मेरी नहीं है, वो चला रहा है तो भिक्षा भी वो देगा, मैं क्यों पुरुषार्थ करूं? व्हाई? साहब! भगवान सब चला रहे हैं, बोलना बनियापना है, जीवन में उतारना महावीरपना है। महावीर कहे, मेरी सांस मैं नहीं चलाता, मेरी रोटी का निर्णय करना उसके हाथ में नहीं है? मैं क्यों चुनाव करूं? इसीलिए उनके हाथ में है कि नहीं उसकी कसोटी करते हुए कहा, काले कपड़ेवाली एक आंखवाली स्त्री मुझे भिक्षा दे तो ही मैं लूं। ये बहुत कठिन था। हम नहीं कर सकते! और साहस भी नहीं करना। महावीर महावीर है, दूसरा हो नहीं सकता। एक बार तो महावीर स्वामी ने ऐसी भी शर्त रखी कि एक स्त्री जिसका एक पग बंधा हुआ हो, एक पग मुक्त हो, होठों पर मुस्कुराहट हो और आंख में आंसू भी हो वो मुझे भिक्षा दे तो मैं भिक्षा पाऊं। महिने निकल गये! अब ऐसी स्त्री कहां मिले? कहते हैं, कुछ समय के बाद महावीर स्वामी को ऐसी स्त्री मिली, वो भिक्षा के लिए तैयार हुई, एक पैर में ज़ंज़ीर थी, कारागार में थी, एक पैर बामुश्किल बाहर रख सकी थी, जैल में थी तो आंख में आंसू थे और महावीर मेरी भिक्षा ग्रहण कर रहे हैं इसीलिए मुस्कुराहट भी थी। और महावीर ने पारणा किया। है कोई माय का लाल ऐसी शर्त से तप करे? तप के तपते सूर्य है भगवान

महावीर। तप ही ज्योति है। दीपक जलाना है ना? महावीर स्वामी कहते हैं, एक नूतन यज्ञ सब कोई कर सके ऐसा यज्ञ, परिग्रह करने की जरूरत नहीं, न पुण्य, न दान की जरूरत, न वर्ण की जरूरत, न स्थापना की जरूरत, न यज्ञकुंड की जरूरत, न घी की जरूरत, न यजमान, न आचार्य, किसी की जरूरत नहीं।

तपो जोई, जीवो जोइठाणं।

तप अगर ज्योति है और हमारा जीव ही अग्नि स्थापन करने का स्थान है; कहां करोगे अग्नि का स्थापन? कौन वेदिका यज्ञ की? ये जीव ही वेदिका है। करो अंदर यज्ञ, रखो वहां ज्योति। और मन, वचन और कर्म ये तीनों को एक करके आहुति देने का साधन बनाये। वो साधन है - मन, वचन और कर्म। महावीर प्रभु कहते हैं, आहुति मन से देनी चाहिए, आहुति वचन से देनी चाहिए, आहुति कर्म से देनी चाहिए। हम तो वचन से देते हैं, 'इदं अग्नये न मम स्वाहा।' आहुति है समर्पण; आहुति है दे देना, खाली हो जाना। कल हमारे बदायुनीसाहब एक शे'र क्वोट कर रहे थे कि -

पहले घर को खाली कर।
फिर उसकी रखवाली कर।

भरे हुए घर की रखवाली करे ये कोई बड़ी बात नहीं। एम्प्टी हार्ट, रिक्त हृदय; जो बिलकुल शून्य, बुद्ध कहते हैं। तेरी अकिंचनता, तेरा खालीपन की रखवाली कर। हम संसारी है, तिजोरी की रक्षा जरूर करनी चाहिए, पर साधना क्या कहती हैं, हमारा भीतर जो खालीपना है वो कहीं कषायों से भर न जाय! कहीं बुराईयों से भर न जाय! तेरा चौकीदार तू बन। 'अप्प दीपो भव।' यहां दूसरा गार्ड नहीं चलेगा। ये गार्ड ही मार देगा! पहले तू खाली कर। रखवाली करनेवाली चीज़ तो शून्यता है, निर्दोष चित्त है उसकी रखवाली कर; नि:संकल्प मन है उसकी रक्षा कर; अव्यभिचारिणी बुद्धि है उसकी तकेदारी रख। बड़ा प्यारा सूत्रपात किया बदायुनीसाहब, आपने। ओर एक शे'र -

दुकां पे अपनी बिकता कुछ भी नहीं।
वजह यही है कि सस्ता कुछ भी नहीं।

कारण तो यही है, कुछ मूल्यवान सूत्र है, ये नहीं बिकते साहब! सब तो वाह-वाह लेनेवाले हैं, स्वाहा लेनेवाले कितने होते हैं? तो मन, वचन और कर्म आहुति देने के उपकरण है। वचन तो बोलते हैं, मन से कितना बलिदान देते हैं और कर्म तो बड़ी दूर की बात रही! भगवान महावीर प्रभु कहते हैं, ऐसा यज्ञ कर जहां तप की ज्योति हो, तेरा जीव ही ज्योतिस्थान हो और मन, वचन, कर्म से तू आहुति देता हो। फिर कहते हैं, शरीर सूखे गोबर का कंडा है। शरीर ही हव्य वस्तु हैं। वस्तु का होम करना बहुत आसान है। अपने वपु का होम कर देना। इसका मतलब कूदकर हवन में गिरने की बात नहीं; इसका मतलब मेरी समझ में तेरा देहाभिमान का त्याग कर दे, तेरा देहाभिमान छोड़ दे। हमारा नरसिंह महेता कहता है -

हुं करुं, हुं करुं ए ज अज्ञानता
शकटनो भार जेम श्वान ताणे।

तेरा देहाभिमान, तेरा अहं, तेरे कंडे बन जाय। हवन में कंडे ही नहीं डाले जाते, समिध भी डाले जाते हैं। महावीर प्रभु कहते हैं, तेरे कर्म ही यज्ञ के इंधन है। सभी तेरे कर्म समिध है। 'भगवद्गीता' में कहा है, सभी कर्म भस्मसात् कर दे। ज्ञानदीप प्रसंग में तुलसी कहते हैं, तेरे शुभ और अशुभ कर्म ये सब इंधन है, समिध है। 'रामचरित मानस' के 'बालकांड' में सप्तसमिध की चर्चा आई है। रामकथा को मैं प्रेमयज्ञ कहता हूं, ज्ञानयज्ञ नहीं कहता। 'भागवत' को ज्ञानयज्ञ कहा जाता है। 'मानस' भी ज्ञानयज्ञ है। लेकिन मेरी हिंमत नहीं, इसको मैं ज्ञानयज्ञ कहूं। क्योंकि ज्ञान की हमारी औकात नहीं हैं! हम तो प्रेम करनेवाले आदमी हैं, निर्दोष चित्त से सबको गले लगओं। ज्ञान का मामला कठिन है, जो हम ही नहीं समझे वो दुनिया को समझाते रहते हैं! तो तप की अग्नि में, तप के तेज में कर्म को भस्मसात् करो। 'बालकांड' में सात प्रकार के समिध की चर्चा हैं! कौन से इंधन? एक नया यज्ञ।

कुपथ कुतर्क कुचाली कली कपट दंभ पाखंड।
दहन राम गुन ग्राम इंधन अनल प्रसंग।।

तुलसी कहते हैं, सात प्रकार के समिध डाल दो जीवन के अंतरंग यज्ञ के लिए। पहले समिध है कुपथ। खराब रस्ते पर हम चलते हो, छोड़ दो, तुमने एक समिध का हवन कर दिया। अब प्रश्न ये आयेगा कि कुपथ किसको कहे? कुपथ यानी मेरा सीधा-सादा जवाब है, जिस कर्म में आत्मा ग्लानि महसूस करे वो कुपथ है। जिस कर्म से, जिस वचन से, जिस विचार से आत्मा ग्लानि महसूस करे बस वो ही कुपथ हैं।

दूसरा, कुतर्क; हमारे वहां लोजिक एक बड़ा शास्त्र हैं। तुलसी कहते हैं खराब तर्क का समिध जला दो। तर्क छोड़ो, सतर्क रहो। हम तर्क के कारण दूसरों को पराजित करने में लगे हैं! तर्क से रूपया-पैसा मिलता है, हृदय नहीं मिलता। दिल से निकले वो ही मुहब्बत है, दिमाग से निकले वो तो मतलब है। कुतर्क त्यागना जीवनयज्ञ में समिध दे देना है। वेदव्यास का ब्रह्मसूत्र भी कहता है, कुतर्क से कुछ नहीं होता। और नारद के भक्ति सूत्र में भी गाया गया कि तर्क से कोई बात नहीं बनेगी; जब भी होगी दृढ विश्वास से होगी।

कुचाली; अशिष्ट चाल, अभद्र चाल। कुचाल मानी गैरवर्तन; दुनिया से विपरीत व्यवहार। जो अपने जीवन में कुचाली छोड़ देता है; आज की भाषा में कहूं तो गलत नेटवर्क छोड़ देता हैं; वो तीसरा समिध है। कलि; कलि के जितने-जितने दोष हैं, उसे छोड़ना। तुलसीदास ने 'उत्तरकांड' में कलि के कुप्रभाव का वर्णन किया है। काल के प्रभाव ने हमारे चित्त को दुरित किया हैं। इस काल प्रभाव को सत्संग के विवेक के द्वारा हटाना ये चौथा समिध है। कलि प्रभाव हटेगा सत्संग से। विवेक जगेगा सत्संग से।

कपट; व्यवहार में, धंधे में, कपट करते हैं लोग! और कहते हैं, करना पड़ता हैं! लेकिन आत्मशान्ति नहीं मिलती। रूपये मिल जाते हो। मैं तो कहता हूं, रूपिया कम कमाओ, धार्मिक काम भी कम करो, लेकिन कपट भी कम करो। दंभ; जो हम नहीं हैं वो दुनिया को दिखाने की बुद्धिपूर्वक की चेष्टा उसीका नाम दंभ है। जो तत्त्वत: हम नहीं है। हम दानी नहीं है, हम दानी होने का दावा-दिखावा करते हैं! हम धार्मिक नहीं है, दिखाते हैं! हम में बिलकुल सच्चाई नहीं है, फिर भी सत्यवादी का दावा दंभ हैं। भगवान महावीर दिगंबर रहे। वस्त्र छोड़े नहीं, निकल गये; जरूरत नहीं रही होगी, जो हो। लेकिन नग्नता का एक अर्थ है निर्दंभता। जैसे हैं वैसे, आरपार। बिलकुल ट्रान्सपरन्सी।

महावीर स्वामी ने यज्ञ में मन, वचन कर्म की आहुति डालने को कहा। सूखे गोबर, कंडा शरीर है। तप ज्योति है। जब यज्ञ होता हैं तो शान्तिपाठ होता हैं। प्रकृति के सब तत्त्व से शान्ति उद्घोषणा की गई। जल, वायु, औषधि, अन्न सभी से शान्ति हो, ऐसा आया हैं। हर मंत्र के पीछे, 'ॐ शान्ति शान्ति' उच्चारण करते हैं। लेकिन महावीर प्रभु ने अद्भुत बात कही। कहा कि तुम्हारे जीवनयज्ञ में संयम ही शान्तिपाठ है। ये महावीर प्रभु ही कह सकते हैं। हम पर संयम लादा गया इसीलिए अशान्ति पैदा हुई, असंतोष पैदा हुआ! आंख फ़ोड़ना नहीं है। अंदर से उभरे और लाख आंख बंद कर दो, अंदर का क्या होगा? संयम शांतिपाठ है। वेदांत कहता है, जगत दृश्य है, हम दृष्टा है। स्वामीजी, एक वेदांत पर कथा करनी है, 'मानस-वेदांत।' जरा गहन हो जाएगा। गहन तो मैं नहीं होने दूंगा, मेरा स्वभाव सरल करना हैं। अब जगत दृश्य है तो जगत का हिस्सा हम है और जगत में राग-द्वेष होते हैं। ये स्वाभाविक हैं। जब बच्चा पास हो या फेईल हो, माँ सो नहीं सकती; या तो खुशी के मारे या दु:ख को लेकर। तो परमात्मा की पूरी दुनिया में हर्ष-शोक कितना है! तो कैसे सो पाता होगा? लेकिन उसने कहा, मैं उदासीन हूं। मैं तो दृष्टा हूं।

निर्दोष आनंद पाना हमारा अधिकार है। हमारे आनंद को दबाया गया! हमारी प्रसन्नता को मारी गई! ये क्या हिंसा नहीं है? सूत्रों के द्वारा मार दो! सिद्धांतों के द्वारा मार दो! बहुत गहराई में हिंसा ही तो है! बाद में आये कोई कहते हैं, पांच सौ साल पहले आये हैं विचार! बड़ा गुनाह ये है मूल पुरुष के विचारों में मिलावट कर देना! मूल धारा को हम बिगाड़ देते हैं! भगवान महावीर ने यज्ञ पकड़ रखा लेकिन संशोधन किया। भगवान महावीर ने दान नहीं किया? सबसे बड़ा महावीर प्रभु का दान है, क्षमादान। 'मिच्छामि दुक्कडम्।' जैसा कौन दान है? और भगवान महावीर तप का तो विग्रह है। भगवान महावीर के रूप में मूर्तिमंत तप अवतरित हुआ है।

संयम का शान्तिपाठ। मुझे व्याख्या करने में रस आ रहा है। क्या महावीर प्रभु बोले हैं! इसका मतलब मैं यह करूंगा, जो शान्ति दे वो संयम, जो अशान्ति दे वो असंयम। आप मौन रखो, अनुष्ठान, उपवास करो और आप अशान्त हो जाओ तो ये संयम नहीं है, तप नहीं है। जैन धर्म में एक शब्द है, भोजन की जितनी सामग्री हो उससे एक-दो कंवड कम खाना ये तप है ही। महावीर प्रभु कहते हैं, इसी प्रकार ऋषियों ने जिसको श्रेष्ठ यज्ञ कहा वो यज्ञ मैं करता हूं। तो यज्ञ, दान और तप छोड़ना नहीं; महावीर प्रभु ने भी छोड़ा नहीं, संशोधन किया। जपयज्ञ कभी छोड़ना मत, दान कभी छोड़ना नहीं। एक सुविचार का दान करो, रूपया ही दान करना? ये तो एक आदत-सी हो गई है, बाकी रूपया न हो तो दान नहीं कर सकते? किसीके कंधे पर हाथ रखकर एक सूत्र सुना दो, ये दान है। क्षमा दान करो। कविता सुना दो, एक शे'र सुना दो, दान हैं। मूल बात मैं लेकर आया था, वो करनी थी। भगवान महावीर का सुंदर एक धर्मसूत्र-

जरा मरण वेगेणं वुज्झमाणाण पाण्णिणं
धम्मो दिवि पय्यठ्ठी ये गयि शरणमुत्तमम्।

बहुत सरल शब्द में अद्‌भुत सूत्रपात! मेरा निज अभिप्राय देना हो साहब, तो ये एक सूत्र समग्र महावीर दर्शन का निचोड़ है। जैसे, तमाम वेदों का निचोड़ उपनिष; उपनिषद का निचोड़ 'भगवद्‌गीता'; मेरी व्यासपीठ कहती है, पूरे 'रामचरित मानस' का निचोड़ 'सुन्दरकांड'; 'सुन्दरकांड' का निचोड़ 'भुशुंडि रामायण'; 'भुशुंडि रामायण' का निचोड़ 'हनुमानचालीसा' और 'हनुमानचालीसा' का निचोड़ हरिनाम। इतना हम समझ ले। हर एक सूत्र मूल्यवान है। वैसे तो आखिरी सूत्रों, महावीर के 'उत्तराध्यान।' निचोड़ तो उसी में है। लेकिन जितना समझ सके, वो भी बहुत है।

जरा; एक-एक क्षण हम जरा की ओर, मृत्यु की ओर जा रहे हैं। वयमेव याता, भर्तृहरि कहते हैं, काल हमारे पास नहीं आता, हम उसके पास जा रहे हैं। 'जरा मरण वेगेन...'; महावीर कहते हैं, हम बहुत तीव्र वेग से जरा-मरण की ओर जा रहे हैं। अब क्या करेंगे, बह जाएंगे, खतम हो जाएंगे! तब महावीर स्वामी चार सूत्र देते हैं। इसमें एक, धर्ममात्र तुम्हारे लिए द्वीप है, धर्म ही तुम्हारी प्रतिष्ठा है और धर्म ही तुम्हारा उत्तम शरण हैं। इससे अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। महावीर प्रभु के सर्वसूत्र सार्वभौम हैं, वैश्विक है, उसको केवल जैनिज़म मैं गिरफ़तार न किया जाय। जैन भाई-बहन जरूर गौरव ले सकते हैं। तो धर्म क्या है? धर्म द्वीप है। जैसे चारों ओर पानी है और बीच में कोई बेट मिल जाय। द्वीप मानी सहारा, आधार, सहयोग। और हमारे लिए द्वीप एक मात्र सद्‌गुरु है। बहे जा रहे हैं, कौन बचायेगा? कौन सहारा? श्रीमद् राजचंद्रजी के शब्द में लिखकर लाया हूं -

आत्मज्ञान समदर्शिता। विचरे उदय प्रयोग।
अपूर्व वाणी परमश्रुत। सद्‌गुरु लक्षण योग्य।

पांच लक्षण सद्‌गुरु के बतायें है। महाराजसाहब ने उसकी बड़ी व्याख्या की है 'आत्मसिद्धि' ग्रंथ में। सद्‌गुरु जो हमारा बेट है, द्वीप है, आधार है। द्वीप दूरदराज अकेला प्रतीक्षा करता है। कोई अधिकारी साधक आ जाय। कोई योग्य आश्रित आ जाय तो मैंने जो साधना की वो उडेल दूं उसमें। मैं उसमें पूरा का पूरा खुद को उडेल दूं।

'आत्मज्ञान समदर्शिता'; गुरु वो हैं जो आत्मज्ञान संपन्न हैं। देह ज्ञान से उपर उठ गया है। अंगज्ञान से उपर उठ गया है। जिसको अंगिका ज्ञान हो। 'समदर्शी'; कितना सीधा-सादा शब्द है! भाष्य में तो बहुत अभ्यास और अध्ययन पेश किया गया। जो समदर्शित है उसको सद्‌गुरु मानो। फिर 'गीता' कहती है, समोऽहं सर्वभूतेषु। महाराज साहब कहते हैं, सबमें समदर्शन कठिन है। विवेक से उसको पता है कि ये दूध है, ये पानी हैं। परतत्त्व दृष्टि से सम है। 'विचरे उदय प्रयोग'; बड़ी शास्त्रीय व्याख्या है। 'अपूर्व वाणी'; जिसकी वाणी अपूर्व होती है। सुनने से पता लगे कि ऐसा पहले कभी सुना नहीं था। ये कंवारा वक्तव्य हैं। 'परमश्रुत'; बहुत अर्थ है इसके।

मेरा इतना ही कहना है यहां कि धर्म ही हमारा द्वीप है और द्वीप का नाम है मेरी समझ में सद्‌गुरु। दूसरा धर्मसूत्र का सूत्र है कि हमारी प्रतिष्ठा, स्थापना, स्थिति, कोई हिला पाये, ऐसी हमारी स्थापना धर्म करेगा, अधर्म नहीं करेगा। तीसरी बात, गयि (गति)। धर्म की हमारी गति है। पांचवां और अंतिम, शरणमुत्तमम्। उत्तम की शरण। परम की शरण। जैसे 'गीता' में कहा है -

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

छोटे बड़े सभी धर्म छोड़ दे, कृष्ण कहता है, मैं परम धर्म, उत्तम धर्म हूं। 'मामेकं शरणं व्रज।'

अब मैं कुछ कथाप्रसंग को आगे बढ़ाऊं। सती दक्षयज्ञ में गई। शिव-अपमान सहा न गया और सती जल गई। दूसरे जन्म में पार्वती हिमालय की पुत्री बनी। घर में पहले कन्या का जन्म हो तो उत्सव मनाना। कन्या सात विभूति लेकर आती है। 'गीता' में कहा है, स्त्री में सात विभूति बैठी है। बेटी बड़ी होने लगी। दक्ष की कन्या के रूप में वो बुद्धि थी, हिमालय की कन्या के रूप में वो श्रद्धा हो गई। श्रद्धा रोज बढ़नी चाहिए। नारदजी आये, पुत्री पार्वती का महिमागान किया। नारदजी ने पार्वती के भविषय का कथन किया; पति कैसा मिलेगा वो कहा। माता-पिता दु:खी हुए कि ऐसा पति मिलेगा जिनके माँ-बाप नहीं; जो अगुन हो, अमान हो आदि। पर नारदजी ने उनका समाधान किया कि ये सब गुण भगवान शिव में है। लेकिन शिव को पाने के लिए आपकी बेटी को बहुत तप करना पड़ेगा। पार्वती तप करने गई। कठिन तप किया। आकाशवाणी से आशीर्वाद मिला। भगवान नारायण प्रकट होते हैं। शिव को कहा, 'आज मैं वरदान देने नहीं आया, मांगने आया हूं। जो सती का आपने त्याग किया, जो दक्षयज्ञ में देह विसर्जित किया वो हिमालय की कन्या बनी ही हैं। मैंने आकाशवाणी से आशीर्वाद दिया है। आप पार्वती का स्वीकार करे। आप शादी करे।' शिवजी के पास देवता आये। अपनी विपत्ति सुनाई। ब्याह के लिए प्रार्थना की। महादेव ने संमति दे दी। सब तैयारी होने लगी। शंकर की बारात हिमालय आई। संग भूत-प्रेत की जमात है। परिछन के लिए महारानी मैना आई। वो शंकर को देखकर बेहोश हो गई! नारद सप्तर्षि सब आये। पार्वती अनादि जगदंबा, शिवप्रिया है, ऐसा महिमागान करके सबको मन का समाधान किया। सबका भाव बदल गया। वेद और लोकरीति से ब्याह संपन्न हुआ।

शंकर-पार्वती कैलास आये। शंकर-पार्वती का नितनूतन विहार हुआ। कालान्तर में कार्तिकेय का जन्म हुआ। और कार्तिकेय ने तारकासुर नामक राक्षस को मार दिया। एक दिन शिव वटवृक्ष के नीचे बैठे हैं। योग्य अवसर जानकर पार्वती शरण में आई। विनीत होकर पार्वती ने अपने संदेह की बात कही। रामकथा के द्वारा समाधान मांगा कि राम ब्रह्म है कि मनुष्य? पार्वती को धन्यवाद देते हुए शंकर ने कथा की महिमा का वर्णन किया। राम के जन्म के पांच कारण बतायें। जय-विजय को शाप मिला इसीलिए भगवान को अवतार लेना पड़ा। दूसरा सतीवृंदा का शाप। तीसरा नारद का शाप। चौथा मनु और शतरूपा का आशीर्वाद मिला था इसी कारण भगवान का जन्म हुआ। पांचवा और अंतिम कारण ब्राह्मणों के द्वारा राजा प्रतापभानु को शाप मिला इस कारण भगवान को अवतार लेना पड़ा।

सूर्यवंश की कथा के पहले निशिचरवंश की कथा आई। रावण, विभीषण, कुंभकर्ण ने बहुत तप किया। दुर्गम और अगम वरदान प्राप्त किया। रावण वरदान के दुरुपयोग से पूरे संसार पर हावी हो गया। जगत में आतंक फैल गया। पृथ्वी अकुला गई। गाय का रूप लेकर ऋषिमुनियों के पास जाकर रो पड़ी। सब देवताओं के पास गए। फिर सब ब्रह्मा के पास गए। ब्रह्मा ने पृथ्वी को ढ़ाढ़स दी। सबने मिलकर परमतत्त्व को पुकारा। शिवजी ने सर्वत्र विराजीत परमात्मा को वहीं से हृदय से पुकारा जाय ऐसा सुझाव दिया। सबने मिलकर भगवान की भाव से स्तुति की। भगवान ने आकाशवाणी से सबको आश्वासन दिया। अब हमें तुलसीजी लिए चलते हैं अयोध्याधाम। त्रेतायुग, दशरथजी का वर्तनमान शासन। पुत्रसुख की कमी है। दशरथजी गुरुद्वार गए। आज राजद्वार गुरुद्वार जा रहा है। अपने दु:ख-सुख सुनाये। वशिष्ठजी ने धैर्य धारण करने को कहा। पुत्रकामेष्टि यज्ञ की सूचना दी। शृंगिऋषि को बुलाया गया। अग्निपुरुष ने प्रसाद की खीर दी। तीनों रानियों को आदरसहित यथायोग्य बांट दिया। प्रसाद पाकर सब रानियां समय बीतने पर गर्भ का अनुभव करने लगी। समय होते ही चतुर्भुज के रूप में प्रभु प्रकट हुए। माँ की बिनती से बालक के रूप में प्रभु माँ की गोद में आये। दशरथजी को समाचार दिया गया। दशरथजी ने अयोध्या में उत्सव करवाया। यह 'वीरायतन' की पवित्र भूमि से आप सबको समग्र संसार को रामजन्म की बधाई हो, बधाई हो, बधाई हो!

मानस-महाबीर : ८

दया ऊर्ध्वगमन करती है और करुणा का रूप धारण कर लेती है

'मानस-महाबीर', जो नव दिवसीय हमारी इस महावीरयात्रा का केन्द्रबिंदु है। कुछ आगे बढ़ें। कुछ जिज्ञासाएं भी है। एक बात ये पूछी गई है कि भगवान बुद्ध और भगवान महावीर समकालीन थे? कभी मिले थे कि नहीं? मैंने पढ़ा है, सुना है आचार्य भगवंतों से कि एक जगह दोनों रहे लेकिन मिले नहीं! क्योंकि मिलने की जरूरत नहीं। जो वो जानते थे वो ये जानते थे। ऐसे ही घटना कही जाती है कि एक बार फ़रीद और कबीर दोनों एक समय में विहार करते थे। कबीर के आश्रितों को लगा कि बाबा फ़रीद को मिला जाए। और फ़रीद के आश्रितों को भी लगा कि कबीर को मिला जाए। लेकिन जब फ़रीद से पूछा गया कि कबीर साहब को मिले? तो फ़रीद ने कहा, जरूरत नहीं। कबीर से पूछा गया कि फ़रीदबाबा को मिले? बोले, जरूरत नहीं। क्योंकि जो फ़रीद जानता है वो मैं जानता हूं, जो मैं जानता हूं वो फ़रीद जानता है। समय बरबाद करने की क्या जरूरत है? महान हस्तियां एक काल में, एक समय में हमारे बीच में रही यही हमारा परम सौभाग्य है। तो बिहार की इस पावन भूमि पर जहां इतने-इतने चरण विहार कर गए, विचरते रहे, ऐसी पावन धरती पर कुछ महावीर-वचनों का साक्षात्कार हम कर रहे हैं।

श्रीमद् राजचंद्रजी ने अपने ग्रंथ में कहा है, वहीं से शुरू करूं। कृपालुदेव ने सात वस्तु कही है कि ये सात वस्तु का ध्यान रखे। और ये सात मुझे 'रामचरित मानस' के सातों सोपान में दिखती है इसीलिए यहीं से शुरू करते हैं। समन्वय करने का नहीं हैं; समन्वय था। हमने बीच में अपने-अपने हितरक्षा और अपने स्वार्थ के कारण थोड़ा समन्वय तोड़ डाला! उसको पुनः जोड़ने की आवश्यकता है। माँ की दुआ से, आप सबकी शुभकामना से मेरी व्यासपीठ इसीमें लगी हुई है। और माँ तो ये करती ही है। साध्वी और गज़ल गाए! और एक साध्वी को गज़ल गाने की छूट दे, ये आचार्य माँ! ये कितनी बड़ी क्रांति है! इन बातों की दशाब्दीओं या तो शताब्दीओं के बाद यहां से नोंध ली जाएगी। और कल तो माँ ने हद कर दी कि रास भी किया! एक आचार्य रास ले! कई जगह हलचल मच जाएगी! मचती होगी! कभी दुष्यंतकुमार ने गाया था -

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए।
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

अभी-अभी पूजनीया साध्वीजी ने गाया, 'प्रेम की गंगा बहाते चलो'; ये मेसेज जाना चाहिए, जो यहां चरितार्थ हो रहा है। केवल संदेश नहीं है, यहां हुआ जा रहा है। मुझ पर फोन आते हैं कि आज-कल 'वीरायतन' में क्या हो रहा है? 'वीरायतन' में जैसा होना चाहिए वैसा हो रहा है! शायद शताब्दियों के बाद हो रहा है। जरूर कईयों के पारे चढ़ गए होंगे! उतर जाएंगे समय पर। देश की युवानी उतार देगी। अल्लाह खेर करे! एक मुस्लिम समाज माँ की सेवा में है। जिस तरह उसने चरण छुआ है! मैंने कहा, यही तो सच्चा पैगाम है।

कुदरत ने तो बक्षी थी हमें एक ही धरती।
हमने कहीं भारत, कहीं इरान बनाया।

●

तू अगर बस्ती में रहता है तो विराने में कौन?

तू अगर मंदिर में रहता है तो मस्जिद में कौन?

तो मेरे कहने का मतलब है कि मुस्लिम युवक भी पैर छुता है। साध्वी गज़ल गाती है। विशेषणमुक्त साधु होना चाहिए। परंपरावाले जो नाम दे वो मुबारक कि वैष्णव साधु, जैन साधु, बौद्ध साधु, ईसाई साधु, इस्लाम साधु। परंपरा में नाम दिया जाए ठीक है। परिचय और पहचान के लिए जरूरी भी है। लेकिन अंततोगत्वा भीतर से साधु विशेषणमुक्त होना चाहिए। यही तो यहां की रीत है। तो अच्छा लगता है। और मेरी २०१६ की इस यात्रा कुछ विशेष प्रकार की यात्रा शुरू हुई। मैं समाधि पर ही घूम रहा हूं! महात्मा गांधीबापू की जागृत समाधि पर नव दिन कथा गाई। उसके बाद सीधा मैं सौराष्ट्र में कमीजडा में भाणसाहब की समाधि पर गाने गया। उसके बाद मैंने जूनागढ (गिरनार) में रूखड की समाधि को याद किया। और फिर वहां से सीधा आया तो महावीर भगवान और कई गणधरों की इस पावन भूमि पर ये इस आध्यात्मिक यात्रा हो रही है। और आप सब हमारे संग चल रहे हैं। हम सब का भाग्य है। 'वीरायतन' से चल रही इस रामकथा के विशेष रूप में ये सब हो रहा है। एक आचार्य माँ रामजनम के अवसर पर रास ले रही हैं! पहले तो वो खड़ी होकर कीर्तन करे वो भी आश्चर्य था! पर कल तो रास ले रही थी! सलाम करता हूं। जैन साधु और मुशायरा सुने! क्या हो गया जमाने को! लेकिन माँ कितने प्यार से आदर दे रही थी! यही होना चाहिए। और यह व्यासपीठ को करना चाहिए। यह ज्ञानपीठ को करना चाहिए। राजपीठ को भी करना चाहिए। हम तो संकेत कर सकते हैं। ये सब करना चाहिए।

माँ, ये आप के सामने बात करने में आनंद आता है इसलिए बाकी तो अपनी बात करना कोई विशेष महत्त्व नहीं है। लेकिन आप आशीर्वाद दे तो और बात हो इसीलिए कहता हूं। माँ, मैं सूरत में कथा कर रहा था। एक प्रस्ताव आया शिक्षित भाई-बहनों का और समाजसुधारकों का कि सूरत में जो बहन-बेटियां अपना शरीर का उपयोग करके कमाती है, ऐसी बहन-बेटियां आप को मिलने आए तो बापू, व्यासपीठ पर बैठनेवाले आप मिलोगे? और उसने मुझे कहा, आप यदि उसको मिले तो आपको कुछ कठिनाई होगी? मैंने कहा, ये बेकार बातें छोड़ो! मिलना चाहे तो मेरा दरवाजा खुला है। उसको आने में तकलीफ़ होती हो ते मुझे कहो, मैं आऊं। और मैं तो वहां तक निमंत्रण दूं कि वो आए मेरी व्यासपीठ पर और मेरे 'रामायण' की आरती उतारे। लेकिन ये लोग दिन में बाहर नहीं निकलते हैं। उनका तो रात ही जीवन होता है। मज़बूरियां उसकी! लेकिन फ़िर बात बनी। मेरे निवास पर आने को तैयार हुए। जहां मैं फार्म हाउस में ठहरा था। मैंने यजमान को पूछा, आपको तो कोई तकलीफ़ नहीं है ना? तो उसने कहा, बापू, आप जो निर्णय करे। तो दो सौ बहन-बेटियां आई थी सिर झुकाए मेरे पास। हम बैठे। एक घंटे हमने बातचीत की। हमने खाना खिलाया। व्यासपीठों को सब को ये करना चाहिए। ये जरूरी है। उनकी आंखों के आंसू देखे! फ़िर तो उनकी कहानियां वो बोल रही थी कि बापू, हम चाहते हैं कि हमारे बच्चे इस मारग में न आए। फ़िर थोड़ा कार्य भी चला कि उसकी शिक्षा की व्यवस्था की जाए। उसको रोजगार मिले। उसको सिलाई मशीन दिया जाए।

तो ये अच्छा उपक्रम मेरी दृष्टि से चला। और वो सब जानते थे बापू के लिए ये कदम मुश्किल तो होगा ही। जिसस कहते हैं, बीमार के पास वैद को जाना चाहिए; जो रुग्ण है उसके पास जाना चाहिए। बुद्ध भी यही कहते हैं। महाबीर ने तो ये करके दिखाया। ये तो होना ही चाहिए। न हो तो आश्चर्य है। और अगले दिसंबर में हम पूरे भारत और पूरी दुनिया के किन्नरों के लिए कथा करने जा रहे हैं। जो किन्नर समाज है। मेरे पास आई लक्ष्मी, जिनकी आंतरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा है। उसको आश्चर्य हुआ! तलगाजरडा आई, 'बापू, आप और हमारी किन्नरों की कथा!' मैंने कहा, तुम बोलो, यजमान भी मैं ला दूंगा। तुमको एक पैसे का खर्च नहीं। देशभर के किन्नरों को इकठ्ठा करो। मैं किन्नर पर कथा गाऊं। ये सब करना चाहिए। ये स्वीकार का युग है। सुधारने की बात छोड़ो, स्वीकारने की बात करो। तो 'वीरायतन' में ये हो रहा है। यहां हिन्दु-मुस्लिम का कोई भेद नहीं। यहां बौद्ध-महावीर का भेद नहीं। यहां सनातन-जैनों का कोई भेद नहीं। तो ये बहुत बड़ा एक अच्छा मेसेज जाएगा;

जा रहा है। सब राजी है। मेरे पास कई पत्र आते हैं। कई जैन समाज के भी पत्र आते हैं, 'हम खुश है बापू, सुन रहे हैं और हमको लगता है कि ये बहुत अच्छी घटना घट रही है।'

तो 'कथा' शब्दब्रह्म से श्रीमद् राजचंद्र भगवान ने शुरूआत की है सात वस्तु की, जो सात वस्तु 'रामचरित मानस' के सात सोपान में मुझे दिखी गई है। यही है समन्वय, यही है मिलना। श्रीमद् राजचंद्र के शब्द -

दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य।
होय मुमुक्षु घट विषे एह सदाय सुजाग्य।

बस वो ही जाग गया है; वो ही पूर्ण जागा हुआ है, जिस मुमुक्षु के घट में ये सात हो। श्रीमद् राजचंद्रजी ने 'आत्मस्थिति' ग्रंथ लिखा। इनमें से करीब-करीब अंतिम सूत्रों में से ये दो पंक्ति है। तो श्रीमद् राजचंद्र कहते हैं, पहले दया। दया और करुणा भिन्न है। दया के बारे में बहुत से बड़े भाष्य होते हैं, होने चाहिए। कभी-कभी दया को धर्म का मूल कहा है। 'दया धर्म का मूल है।' 'रामचरित मानस' में लिखा है, 'धरम न दया सरिस हरि जाना।' हे गरुड, दया के समान कोई धर्म नहीं है। और धर्म के इस लक्षणों की चर्चा जब स्मृतिकारों ने की तब वहां भी एक चरण दया का है। और चतुष्पाद धर्म की बात आती है तो सत्य, शौच, दया, तप आदि के भी चरण बताए हैं। यहां श्रीमद् कृपालु भगवान 'दया' शब्द का प्रयोग करते हैं। तो कबीरसाहब की बोली में आया 'दया' बड़ा प्यारा शब्दब्रह्म है। करुणा और दया में थोड़ा मौलिक भेद भी हो सकता है। लेकिन दया अपनी जगह है, करुणा अपनी जगह है। दबी रहे तब तक दया है, फूटे तब करुणा है। मैं कोई भाष्यकार नहीं। मैं तो पढ़ता हूं, रात को देखता हूं अवसर मिले; अग्नि के पास जागता बैठा हूं तब जैसे हारमोनियम पर ये उंगली रखे और जिस सूर पर रखे वो बजने लगता है, सा रे ग म और फिर गुरु कृपा की उंगली दिमाग को छूती है और फिर जो अर्थ निकलता है वो सब के सामने बोलता हूं। और साहब, प्रयास से कुछ नहीं होता, प्रसाद से बहुत कुछ होता है। मेरी व्यासपीठ की यदि एक बात आपके दिल पर पहुंचे तो आप सोचिएगा। व्यासपीठ का मानना है, देहशत से कुछ नहीं होता, मेहनत से कुछ-कुछ होता है लेकिन रेहमत से सबकुछ होता है।

तो याद रखना मेरे युवान भाई-बहन, देहशत से कुछ नहीं होगा। मेहनत से कुछ-कुछ होगा, अवश्य होगा, लेकिन रेहमत से सबकुछ होगा। दबी रहे सो दया, फूट पड़े सो करुणा। दिल में संपदा के रूप में रहे वो दया और आंसू से टपक पड़े वो करुणा; मुझे इतना ही अंतर दिखता है। पानी का स्वभाव है उपर से नीचे आना। लेकिन दया और करुणा क्रांतिकारी युग्म है। शुरूआत दया से होती है। उसका उर्ध्वगमन होता है। और फिर आंखों में आंसू आते हैं। बड़ा मूल्यवान शब्दब्रह्म है 'दया।' कबीर भी यूझ करते हैं। तुलसी ने भी कहा -

दीनदयाल बिरिद संभारी।
हरहु नाथ मम संकट भारी।।

दया हमारा जन्मजात स्वभाव है। लेकिन कभी-कभी मान, क्रोध, लोभ, माया आदि कषायों के कारण दया की संपदा दबी हुई होती है। ये कषाय हटे बुद्धपुरुष की दृष्टि से, बुद्धपुरुष के स्पर्श से, बुद्धपुरुष के मौन से, बुद्धपुरुष के संकेत से, बुद्धपुरुष की किसी अदा से। तो दया ऊर्ध्वगमन करती है, आंख से बरसना शुरू करती है और करुणा का रूप धारण कर लेती है। दया बहुत महत्त्वपूर्ण है। और मैं प्रार्थना करूं कि दया गरीबों के झोंपडे में जाकर दिखाओ इतना ही नहीं, दुकान पर भी दिखाओ कि कोई ग्राहक को छलो ना। धंधे में दिखाओ, ओफ़िस में दिखाओ। बिना दया किसी की गर्दन काट देते हैं! और फिर जीवनपर्यंत शूल की तरह जीते हैं! ये कोई जिंदगी है! दया बहुत जरूरी है। और जिसके पास बहुत है वो यदि दया का उपयोग न करे और दमन शुरू करे तो ज्यादा टिकेगा नहीं। दया बड़ी मूल्यवान संपदा है। हमारे भावनगर का एक शायर मुस्लिम था, जिसका नाम था नाज़िर देखैया। और वो बेन्डबाजा बजाता था। इतना गरीब था आदमी लेकिन अच्छी शायरी लिखता था। तो गुजराती में उसने एक गज़ल लिखी थी। उसका एक शे'र -

जे दिलमां दयाने स्थान नथी,
त्यां वात न कर दिल खोलीने,
एवा पाणी विनाना सागरनी
आ नाज़िरने कशी जरूर नथी।

किसी भी बलिदान पर आदमी की दया न छूटनी चाहिए। आगे दया न बढ़े, करुणा का रूप न ले तो कोई बात नहीं, लेकिन दयाहीनता न आ जाए उसके लिए सत्संग का विवेक जरूरी है। सौराष्ट्र में अमरेली के पास लाठी गांव है। और लाठी का राजा सूरसिंहजी गोहिल। बहुत छोटी उम्र में देहांत हुआ। बड़े शायर थे। जिसका तखल्लुस था 'कलापी।' उसने 'ग्राम्यमाता' की कविता लिखी थी। एक महिला, गन्ने का खेत है और राजा जाता है और वो ग्राम्यमाता उसको रस का प्याला भर देती है। वो पीता है और पीते-पीते राजा के मन में विचार आया कि मेरे किसान तो बड़े संपन्न है! मुझे इससे ज्यादा टेक्स लेना चाहिए। ऐसा मन में विचार आया और फिर उसने प्याला आगे किया कि ओर दिया जाए और वो ग्राम्य नारी गन्ने काट रही थी तो गन्ने से रस निकलना बंद हो गया! खाली प्याला दिया! और राजा ने सोचा कि क्या हुआ? वो ग्राम्यमाता सोच रही है कि मैं गन्ने काट रही हूं, रस क्यों नहीं आता? तब एक पंक्ति आती है-

'रसहीन धरा थै छे; दयाहीन थयो नृप;
नहीं तो ना बने आवुं,' बोली माता फरी रडी।

दया है अमृत झरना। उसको फूटने दो, उर्ध्वगमन करने दो। वो आंखों तक आ जाए। तो सात बस्तु भगवान राजचन्द्र कहते हैं कृपालु देव, जिस मुमुक्षु के घर में हो वो जागा है; वो जागृत है। साहब, दया की चर्चा तुलसीदासजी ने परोक्ष-अपरोक्ष रूप में 'बालकांड' में बहुत की है। दया है 'बालकांड', 'रामचरित मानस' का प्रथम सोपान जहां से कथा शुरू। तुलसी को दया न आती तो रामकथा लिखते ही नहीं! पहले दया आई। 'बालकांड' शुरू हुआ। ये प्रथम सोपान है दया। नीचे से उपर कांड जा रहे हैं। करुणा का रूप लेने के लिए ये दबी हुई दया शीलता उपर-उपर जा रही है। राम का प्राकट्य भी दयाधीन है।

मेरी तलगाजरडी दृष्टि में 'बालकांड' दयाकांड है, दया का सोपान है। वहीं से अध्यात्म की चर्चा शुरू हो। कृपालु देव दूसरी बात कहते हैं शांति। शांति 'अयोध्याकांड' का सार है। अब आप कहेंगे कि 'अयोध्याकांड' में तो बहुत उत्पात हुआ! रामवनवास और पूरी अयोध्या रोई। ये सब शांति कैसे? लेकिन जगद्गुरु शंकराचार्य ने माँ जानकी को शांति कहा है। सीता मानी शांति। शांति अयोध्या की जनक की कन्या बन जाए वो ठीक नहीं। शांति सम्राटों के घर में बंदी हो जाए वो ठीक नहीं। शांति अयोध्या के आंगन में गिरफ्तार हो जाए वो ठीक नहीं। शांति को राम के पीछे-पीछे आखिरी व्यक्ति तक जाना चाहिए। इसलिए 'अयोध्याकांड' में जानकी का जो विचरण है वो शांति की यात्रा है। शांति बहनी चाहिए, विस्तरित होनी चाहिए। ये शांति तुलसी चाहते हैं कि जनकपुर में कन्या बनकर बैठी न रहे। ये शांति अवधपुर जाए। फिर सोचा, अवधपुर में बंदी न बन जाए। ये शांति बनयात्रा करे। छोटे-छोटे देहातीओं तक पहुंचे। इसलिए मैं 'अयोध्याकांड' को शांति का कांड कहता हूं। तो मेरे कहने का मतलब श्रीमद् राजचंद्रजी ने, कृपालु देव ने जो शांति की बात कही है, मेरी समझ में 'मानस' का दूसरा सोपान है। श्रीमद् राजचंद्रीय 'मानस' कृपालु देव के 'रामायण' का तीसरा सोपान समता। 'मानस' में तीसरा सोपान 'अरण्यकांड'; 'अरण्यकांड' में समता ही समता है। गीध और राम की समता। बाप-बेटे का संबंध एक गीध जटायु, शबरी और राम माँ-बेटे का संबंध। परमात्मा समता का नाम है। कितनी समता से बर्ते

करुणा और दया में थोड़ा मौलिक भेद भी हो सकता है। दया अपनी जगह है, करुणा अपनी जगह है। दबी रहे तब तक दया है, फूटे तब करुणा है। दिल में संपदा के रूप में रहे वो दया और आंसू से टपक पड़े वो करुणा; मुझे इतना ही अंतर दिखता है। पानी का स्वभाव है उपर से नीचे आना। लेकिन दया और करुणा क्रांतिकारी युग्म है। शुरूआत दया से होती है। उसका उर्ध्वगमन होता है। और फिर आंखों में आंसू आते हैं। दया ऊर्ध्वगमन करती है, आंख से बरसना शुरू करती है और करुणा का रूप धारण कर लेती है।

भगवान राम! कोल-किरात को मिलने जाए, ऋषिमुनियों को मिलने जाए, सब जगह समता, समता, समता! जाति-पांति, कुल, धर्म अस्पृश्यता ये सब का छेद तो 'रामायण' ने युगों पहले उड़ा दिया। समता ये तीसरा सोपान है।

चौथी बात है क्षमा। 'किष्किन्धाकांड' क्षमा का कांड है। बाली जैसे एक अन्यायी व्यक्ति को भी भगवान राम ने क्षमा कर दिया है। सुग्रीव जैसे विषयी आदमी को, भागते हुए आदमी को भगवान ने क्षमा प्रदान करके अपने मित्र का स्थान दे दिया। ये एक क्षमा है। पांचवां कांड 'सुन्दरकांड' सत्य है। रसजगत में सत्य जेसा सुंदर क्या है? मेरी समझ में, मेरी जिम्मेवारी से 'सुन्दरकांड' ये पांचवां सूत्र श्रीमद् राजचंद्रजी का वो सत्य हैं। छठ्ठा सोपान 'लंकाकांड' यहां कृपालु देव की बोली में आता है त्याग। 'लंकाकांड' में सबने प्राण त्याग किए हैं, प्रतिष्ठा त्याग किया है, संग्रह त्याग किया है। सब कुछ दे दिया है और निर्वाण को प्राप्त किया है, इसीलिए छठ्ठा कांड ये त्यागपरक कांड है। चीज-वस्तु देना हरि को ठीक है, लेकिन प्रभु को प्राण दे देना इससे बढ़िया त्याग कौन है? त्याग का कांड है 'लंकाकांड।' कृपालु देव कहते हैं, सातवां शब्द 'वैराग्य।' 'उत्तरकांड' वैराग्य का कांड है; ये विरति का कांड है। वहां वैराग्य की चर्चा है। एकदम कहीं दूर जाकर एकांत में साधना करने की बात वैराग्य की बात 'उत्तरकांड' कहता है। परमविश्राम की बात 'उत्तरकांड' करता है। और वैराग्य जब तक विश्राम न दे तब तक समझना वैराग्य अधूरा है। वैराग्य की फलश्रुति, वैराग्य का परमशिखर है विश्राम। और तुलसी का 'उत्तरकांड' कहता है-

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

और याद रखे, तुलसीदासजी वैरागी साधु है; वैराग्यप्रधान संत है। लेकिन 'उत्तरकांड' में कहते हैं, मेरे वैराग्य का चरम शिखर है 'पायो परम विश्राम।' और निष्कुळानंदजी का पद है, 'त्याग न टके वैराग्य विना।' त्याग वैराग्य बिना टिकता नहीं। मेरी छोटी-सी समझ में हाथ से जो छूटे वो त्याग है, हृदय से छूटे वो वैराग्य है।

तो कृपालुदेव ने कहा है कि दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य। होय मुमुक्षु घट विषे एह सदाय सुजाग्य।' जिस मोक्षार्थी के घर में ये सातों सूत्र है वो सदा जागा हुआ है। वो सदा-सदा सावधान है। ऐसी जैन परंपरा को अपने ढंग से ओढ करके दुनिया को मार्गदर्शन देनेवाले कृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजी के कुछ वचन है। भगवान महावीर प्रभु के चार सूत्रों की चर्चा करके मैं कथा का क्रम लूं। 'उत्तराध्ययन', जो भगवान महावीर के अंतिम सूत्र है, उसमें से मैंने ये सूत्र उठाया है। आपके सामने रख रहा हूं। मैं बोलूं, आप बोले।

णाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एयं मग्गमणुपत्ता, जीवा गच्छंति सुग्गइं।।

चार वस्तु भगवान महाबीर प्रभु कहते हैं। ये चार रास्ते हैं, जिस पर चलने से साधक सुगति को प्राप्त करने लगता है। 'णाणं' यानी ज्ञान; 'दंसणं' यानी दर्शन; 'चरित्तं' मानी चारित्र्य और 'तवो तहा' मानी तप। ये चार मारग महाबीर प्रभु इनको बताते हैं। जिस मारग पर चलने से साधक दिव्यगति को प्राप्त करता है; परम प्रसन्नता को प्राप्त करता है। परम आनंद को प्राप्त करता है; पहला शब्द है 'ज्ञान।' ज्ञान मारग है महाबीर स्वामी की दृष्टि में सुगति का। 'रामचरित मानस' पहले कह चुका, 'ग्यान मोक्ष पद बेद बखाना।' ज्ञान मुक्तिदाता है। ऐसा 'मानस' का सूत्र है। 'ग्यान ते विरति जोग ते ग्याना।' तो ज्ञान मारग है सुगति का, लेकिन तुलसी ने 'उत्तरकांड' में ये भी लिखा कि ज्ञान का मारग कृपान की धार है, तीक्ष्ण धार है। उस पर चढ़कर चलना बहुत कठिन है। दूसरा मारग, दर्शन। अब किसका दर्शन? शब्द का, शास्त्र का, सिद्धांतों का, श्लोकों का, सूत्रों का, किसका दर्शन? मूर्ति का, मंदिर का, जिसका दर्शन हमारे जीवन का मारग बने। ओर दर्शन का मुझे पता नहीं लेकिन जब

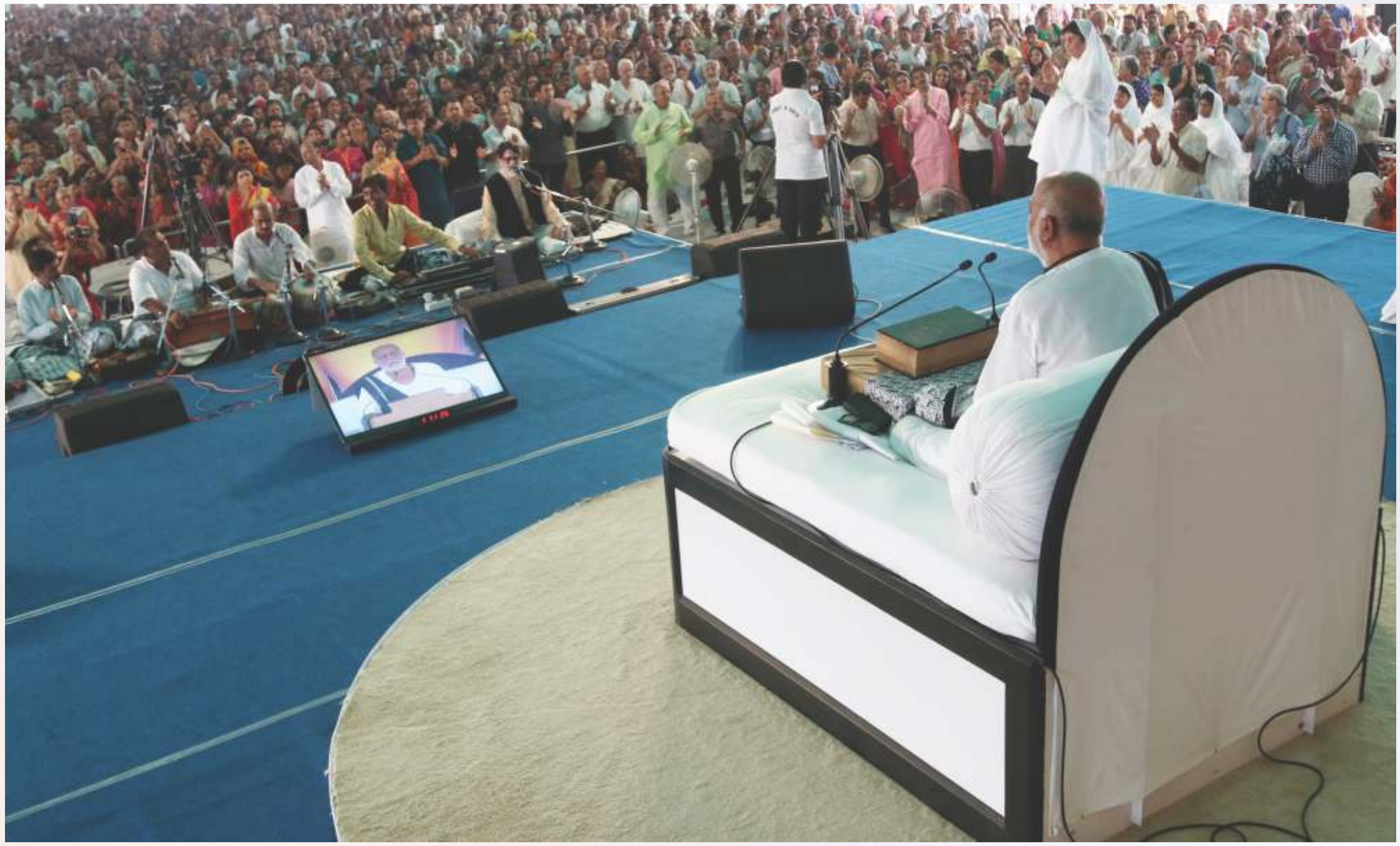

अवसर मिले अपने सद्गुरु का दर्शन हमारे जीवन की सुगति का मारग है। अपने बुद्धपुरुष का दर्शन बस! ऐसे आदमी का दर्शन करने जाओ कि दर्शन के लिए जबसे निकलो तब से आनंद बढ़ता जाए, मैं जाऊंगा, मैं दर्शन करूंगा, मेरे सामने मुस्कुराएंगे, हाल-चाल पूछेंगे; मैं चरण पकडूंगा, मैं रो पडूंगा, मेरे आंसू पोछेंगे! ये दर्शनशास्त्र की चर्चा नहीं, दर्शन साक्षात्कार की चर्चा है। शास्त्र बहुत महिमावंत है, लेकिन उलझ भी देते हैं! फिर एक बार पारसा जयपुरी का सुंदर शे'र सुनिए -

उलझनों में खूद ऊलझ कर रह गए वो बदनसीब,
जो तेरी ऊलझी हुई झुल्फों को सुलझाने गए।

हे परमात्मा, तू अगम है, तू अज्ञात है। खोजने गये हैं वो खो गये हैं! इसलिए दर्शन कर लो।

याद रखना मेरे भाई-बहन, मारग वो मेरी समझ में जिन मारग पर चलने से प्रसन्नता दिन गुना रात चौगुना बढ़े। जो प्रसन्नता को खंडित कर दे वो मारग नहीं। जो हमें भ्रमित कर दे वो मारग नहीं। उलझा देते हैं लोग, ये मारग, ये मारग! ये जैन समाज का परिवार इस कथा का आयोजन कर रहा है। मूल परंपरा तो उसकी जैन की है। लेकिन मैंने कभी इसको नहीं कहा कि राममंत्र जपो; आप माला लो; आप जो करते सो करो। लेकिन वो आज प्रसन्न है। मुझे बता रहा था कि बापू, कथा सुनने के बाद देरासरजी में जाने का आनंद आता है। तो माँ कह रही है कि दूसरी कथा! इसीलिए कि ये प्रसन्नता हो रही है। मुझे भी प्रसन्नता, आपको भी प्रसन्नता। राम तुम्हारे नवकार का बाधक नहीं बनेगा। राम यदि नवकार में बाधक बने तो मोरारिबापू का राम नहीं है; वो तुलसी का राम नहीं है; वो कोई सिकुडा हुआ राम है! वो छोटा राम है! नहीं, राम आदि-अनादि है। कई लोग मेरे पास आते हैं; कहते हैं, बापू दीक्षा देते हैं! अरे बाप! मैंने कहा, मैं दीक्षा नहीं देता, दिशा देता हूं। और दीक्षा देने में तो आनंद है ही, जो देते हैं! लेकिन दिशा देने में भी बहुत आनंद है। दिशा देने का भी एक आनंद है। दीक्षा देने का आनंद तो कितना होता है! लेकिन बलात् न दी जाए। जबरदस्ती दी न जाए! तो बाप, 'वीरायतन' में कुछ ऐसा घट रहा है, उसकी परम खुशी है।

तो, मेरे भाई-बहन, भगवान महावीर कहते हैं ये चार सूत्र। ज्ञान मारग है; दर्शन मारग है। तीसरा, चारित्र्य, शील, सभ्यता। अब 'रामायण' से सिद्ध करने की क्या जरूरत? इस शास्त्र का नाम ही 'रामचरित मानस' है। ये शास्त्र पूरा चरित्र है। तो चारित्र्य मानी शील। हमारी आत्मा के साथ भी भद्र व्यवहार और दूसरों के साथ भी भद्र व्यवहार, ये चारित्र्य। और बिलकुल सरलता से प्रेक्टिकल भूमि पर शीलवान कौन? चारित्र्यवान कौन? नखशिख विवेक से भरा हो। आंख में अमृत हो। आंख देखकर लगे कि आंख में कहीं कोई कषाय नहीं है। आंख में अमृत हो। वचन में सत्य हो और वो प्रिय सत्य हो। कर्मों में निरहंकारिता हो और आचरण में साधुता हो। बस, ये चारित्र्य। और चौथा, भगवान महाबीर प्रभु कहते हैं तप; तपस्या ये चौथा मार्ग है। मैं बार-बार कहता रहा इस कथा में, तुलसी ने तप की बड़ी महिमावंत व्याख्याएं रखी है। तपस्या जीवन को स्वादु बनाती है। लेकिन सम्यक् तपस्या; तपस्या का अतिरेक आदमी को भुंज देता है। तो भगवान महावीर प्रभु का मैं दर्शन कर रहा था तो उसने कुछ बाह्यांतर तप गिनाए और अभ्यंतर तप गिनाए। भगवान महाबीर ने कहा है कि अंदर के तप इतने हैं। हम से कोई भूल हो गई हो तो उसका प्रायश्चित्त कर लेना ये अभ्यंतर तप है। 'मिच्छामि दुक्कडम्।' साल भर में हमसे कुछ बोला गया, हम क्षमा मांगकर प्रायश्चित्त करे। अभी मैं कवि 'कलापी' का उल्लेख कर रहा था उनकी एक कविता है -

किस्मत करावे भूल ए भूलो करी नाखुं बधी,
छे आखरे तो एकली ने एक यादी आपनी।

मेरा प्रारब्ध मुझसे भूल करवाए, कर दूं। शास्त्र कहते हैं कि जनम-जनम के पाप का ढेर हो लेकिन एक बार प्रभु का नाम पुकारने से उसका नाश होता है। युवान भाई-बहन, भूल करे ना। इन्सान है हम, हो जाती है भूल; रोना-धोना क्यों? प्रायश्चित्त कर लो। और हमारी तकलीफ़ क्या है कि गुनाह इन्सान का करते हैं, माफ़ी मांगने भगवान के पास जाते हैं! ये मारग ही गलत चुनते हैं! जिसका गुनाह किया हो उसकी माफ़ी मांगनी चाहिए। हम कितनी छटकबारी खोज रहे हैं! हमारी दशा क्या है कि हम अपराध करते हैं घर में, माफ़ी मांगने जाते हैं हरिद्वार! ये कैसी बात! माँ का अपराध किया, बाप का अपराध किया, बच्चों का अपराध किया, वहीं माफ़ी मांगो। प्रायश्चित्त अभ्यंतर तप है। दूसरा, विनय। महाबीर प्रभु विनय को तप कहते हैं। विनय तपस्या है। स्वच्छंदी होकर घूमना आसान है, विवेकी होकर घूमना बहुत मुश्किल है। सेवा भीतर का तप है। पुष्टि मार्ग में कहा है, तनुजा सेवा, शरीर से सेवा; वित्तजा सेवा, धन से सेवा और मानसी सेवा। कुछ न हो तो सद्भावना से दूसरों का शुभ चिंतन। तीन प्रकार की सेवा वल्लभ परंपरा में है।

तो भगवान महाबीर प्रभु ने सेवा को अभ्यंतर तप माना है। स्वाध्याय; आप जिन सूत्र का स्वाध्याय करे। आगम का स्वाध्याय करे, 'भगवद्गीता' का स्वाध्याय करे, 'रामायण' का स्वाध्याय करे, उपनिषद का करे, कोई इस्लाम धर्म के हैं तो पवित्र 'कुर्रान' का स्वाध्याय करे, आयातें पढ़े, 'बाईबल' का स्वाध्याय करे। 'धम्मपद' का स्वाध्याय करे। स्वाध्याय का एक अर्थ वो भी है कि स्व का अध्याय, अपनी आत्मा का अध्याय, अपनी निजता का अध्याय, अपने स्वभाव का अध्याय, अपना चिंतन। निज का स्वाध्याय कि मैं कल इतनी बार झूठ बोला था। अगले दिन कम होता है कि ज्यादा उसका स्वाध्याय। और ज्यादा हो झूठ तो फिर कोशिश करे, कम हो। या तो आनंद व्यक्त करे, मैं आज कम झूठ बोला। मेरे दादा को मैं लिखकर देता था कि दादा, मैं तीन बार झूठ बोला। फिर कभी झूठ बोल गया, तो मैं लिख कर देता था। दादा मुस्कुरा देते थे! ये शास्त्र का स्वाध्याय तो है ही लेकिन सत्य का स्वाध्याय है। अपना खुद का अध्ययन। किताबें पढ़नी आसान है, कलेजा पढ़ना कठिन है। और उसको धीरे-धीरे पढ़े। खुद को पढ़े। तो ये स्वाध्याय एक बहुत बड़ा तप है।

देहोत्सर्ग-कायोत्सर्ग, उसको आंतरिक तप कहा। ये कठिन है। कुछ बहिर्तप महाबीर प्रभु ने जो बताए। अनशन, उपवास करना महावीर प्रभु कहते हैं, बहिर्तप है। ऐसे हम बहुत उपवास करते हैं, जैन परंपरा में तो कितने-कितने उपवास करते हैं! उसके अठ्ठाई आदि बहुत कठिन है सब! वैष्णव परंपरा में भी कोई रामनवमी का, कोई श्रावण मास का, कोई सोमवार का उपवास करता है, ये बहिर्तप है। अनशन अवश्य बहिर्तप है। महाबीर परंपरा में भिक्षाचर्या को बहिर्तप माना है। भिक्षा के रूप में चर्या करना; भिक्षा के भाव से भोजन। अपने पात्र में जो दिया जाए बस, वो खा लेना। ये भिक्षावृत्ति को भी बहिर्तप माना गया है। रसत्याग को तप कहा है। जरा कठिन है रस का परित्याग करना। परमरस चखा न हो तो साधना में रस परित्याग करने के लिए प्रपन्न करने पड़ेंगे। लेकिन जिन्हों ने परम रस चख लिया हो उसको सामान्य रस छोड़ना नहीं पड़ेगा, अपनेआप छूट जाएगा। परमरस परमात्मा, परमानंद परमात्मा, परमप्रसन्नता परमात्मा, उसी रस में जो डूब जाता है, तो सामान्य रस फ़ीके पड़ जाते हैं। संसार के रस बिलकुल फ़ीके लगने लगते हैं जिन्हों ने परमानंद का रस पाया है, परमरस को पा लिया है। छोड़ने में थोड़ा अहंकार भी है, अनादर भी है। छोड़ने में जरा आक्रमकता भी है। छूट जाने दो। जिसने महारस पा लिया उसको रसत्याग करना नहीं पडता, रस छूट जाता है। भगवान महावीर ऐसे रसत्याग, रसपरित्याग को भी एक बहिर्साधना मानते हैं, तप मानते हैं।

कायक्लेश; काया को क्लेश; शरीर को बहुत सुख न देना। जो आदमी शरीर को अत्यंत सुख देता है वो रोगी जल्दी बन जाता है; जो शरीर को अत्यंत भोग देता है। सम्यक् भोग जरूरी है। आपका इतना शरीर भोग, शरीर बढ़ जाए फिर आप मशीन पर साईकिल चलाओ, इधर जाओ! ये क्या है? पहले शरीर को संभालो। तो कायक्लेश का मतलब है थोड़ा श्रम शरीर का। श्रमयज्ञ कराते थे गांधी-विनोबाजी। श्रमदान कराते थे गांधी-विनोबाजी। ये बाहरी तप है। आखिर में लिखा है तल्लीनता। संपूर्ण रूप से ओतप्रोत हो जाना। पूर्ण रूप में इन्वोल्व हो जाना। जरा भी दूरी न रहे। तल्लीनता, संलग्नता, उसको भगवान महाबीर प्रभु ने बहिर्तप माना है। तो तप, सेवा, दर्शन और ज्ञान, महावीर प्रभु 'उत्तराध्यन' में कहते हैं, ये चार मारग है। लेकिन मेरे श्रोता भाई-बहन, इसी को मारग समझना जो मारग निरंतर प्रसन्नता बढ़ाए, निरंतर हमें आगे-आगे ले चले; आनंदवर्धन करे वो मारग है। फिर ज्ञानमारग हो, फिर वो शांति का मारग हो, सेवा का मारग हो, या तो तप का मारग हो। तो बाप! 'रामचरित मानस' से जोड़ते हुए कुछ महावीर प्रभु के बचनों का साक्षात्कार 'वीरायतन' की पवित्र भूमि पर हम कर रहे हैं।

धर्म में दीवार टूटनी चाहिए और द्वार ही होने चाहिए

'रामचरित मानस', जिसे मैं रामकथा कहता हूं, इस कथा का केन्द्रबिंदु रहा 'मानस-महाबीर।' मेरी तलगाजरडी आंखों से 'मानस' के आधार पर किस रूप में मैंने भगवान महावीर का दर्शन किया वो मैंने कहा। माँ ने बहुत आशीर्वाद दिया। आप सबने बहुत प्रेम-आदर दिया। 'वीरायतन' संस्था के ट्रस्टीगण; सबके प्रति मेरी प्रसन्नता दिल से व्यक्त करता हूं। आप खुश रहे।

खुश रहो हर खुशी है तुम्हारे लिए।
छोड़ दो आंसूओं को हमारे लिए।

मेरे बिहारवासी भाई-बहनों, मैं बहुत आनंदित हूं। छोटे बच्चे के लिए माँ आती है तो रोज नया लाती है। माँ रोज मेरे लिए कुछ न कुछ नया लाती थी। आपका और मेरा सेतु बना रहे। मैं भी आता रहूंगा। आप भी आते रहना। हमारे बीच में न कोई अर्थ का नाता है, काम का नाता नहीं, केवल और केवल हरिनाम का नाता है। फिर याद रहे न रहे।

सितारों को आंखों में महफूज रखना।
बहुत दूर तक रात ही रात होगी।
मुसाफ़िर है हम भी मुसाफ़िर हो तुम भी,
किसी मोड पर फ़िर मुलाकात होगी।

- बशीर बद्र

बाप! आगे बढ़ूं। कथा का विहंगावलोकन करूंगा। परसों रामजनम हुआ। दशरथ के घर में चारों राजकुमारों का नामकरण संस्कार हुआ। विद्याप्राप्त की। विश्वामित्र आये। साधु संपत्ति न मांगे, संतति मांगे। राम मानी सत्य, लक्ष्मण मानी त्याग। सत्य और त्याग न हो तो जीवनयज्ञ पूरा करना मुश्किल है। सत्य के पीछे-पीछे त्याग चलता है।

स्वामी रामतीर्थ लाहोर की बाज़ार में निकले। आंगन में बच्चा रो रहा था और माँ-बाप समझा रहे थे। बच्चा छाया पकड़ने की कोशिश करता है। उसकी माँ ने आकर बच्चे का दांया हाथ लेकर चोटी पकड़वायी और बच्चे ने छाया पकड़ ली! स्वामीजी ने डायरी में लिखा, छाया नहीं पकड़ी जाती, आदमी को खुद को पकड़ ले। जिन्होंने सत्य को पकड़ा वो सबकुछ पकड़ लेता है। सत्य और त्याग के द्वारा यज्ञ पूरा हुआ। विश्वामित्र के आग्रह पर जनकपुर में पदयात्रा करके धनुष्ययज्ञ में गये। राम ने पदयात्रा की। जैन धर्म के संतों, मुनिगण, श्रावकगण पदयात्रा करते हैं, उसका बहुत बड़ा महत्त्व है।

राह में आये जो दीन-दु:खी,
सबको गले से लगाते चलो।
प्रेम की गंगा बहाते चलो..

अहल्या तो एक प्रतीक है। अवतारों को चाहिए, वो नंगे पैर चले। अहल्या की भूल का पोष्टमोर्टम न करे। भूल

हुई और पत्थर की तरह स्थिर हो गई। गौतमनारी शापवश है, पापवश नहीं। कभी-कभी मजबूरियां पाप करवाती है। मुनिओं ने अहल्या का बचाव किया। राम के द्वारा नया जीवन मिला। भूल करनी नहीं चाहिए, पर हो जाये तो एक बार अहल्या की तरह प्रायश्चित्त करके बैठ जाये। मंदिर में जाना नहीं पड़ेगा। राम खुद चलते आके उद्धार करेंगे। रामनाम लेनेवाला, समाज के दीन-हीन आदमी को उत्साहित करे, उद्धार करे। राम को गंगा अवतरण की कथा की। मिथिला-जनकपुर गये। शाम को दोनों भाई ने नगर भ्रमण किया।

दूसरे दिन गौरी मंदिर सीता आई और राम का पुष्प वाटिका में मिलन हुआ। भवानी की मूर्ति के गले से फूलों की माला गिरी। मूर्ति मुस्कुराई, बोली। ये बात बुद्धि की पकड़ में नहीं आएगी, पर अंतर में अगर प्यार है, विनय है, प्रेम है, तो मूर्ति बोल सकती है। कई बार आंसू भी निकलते हैं। ऐसा अखबारो में हम पढ़ते भी है। हमारे लिए चाहे भले असंभव बात है। धनुष्ययज्ञ किया। राम ने जब धनुष्य घुमाया तो मानो पूरी पृथ्वी घूमने लगी! सागर, सरोवर, नदियां छलकने लगे! परमात्मा राम ने धनुष्य के दो टुकडे करके फ़ेंक दिया! बाद में परशुराम मनोमंथन। दशरथजी बारात लेकर आये। मिथिला में चारों भाईयों की शादी हो गई। जानकी-सीता राम से, लक्ष्मण ऊर्मिला से अपने भाई कुशध्वज की दो कन्या मांडवी भरत से और श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न से ब्याही गई।

'रामायण' में चार विवाह की कथा आती है। शिवविवाह सफल हुआ। दूसरा राम का विवाह सफल हुआ। तीसरा विवाह शूर्पणखा का, जो असफल और चौथा नारदजी का विश्वमोहिनी रूप धारण करके, जो नारायण ने होने नहीं दिया और असफल रहा। जनक मानी अष्टावक्र के साथ एक आसन पर बैठकर शास्त्रार्थ कर सकते थे। ऐसे राजर्षि जनक बेटी की विदाई से रो पड़े। उस समय ढीले हो गये। जानकी बिहार की है। भारतीय बेटी की अंदर की जूबां होती है। 'हमारे पिताजी का ध्यान रखना', सुनयना से कहती है। बेटी बाप का घर छोड़ती है तब वो बाप की ज्यादा चिंता करती है। भारत की कन्या की मानसिकता है। सब अवधपुर आये। विश्वामित्र ने विदाई मांगी। संत आपके घर आये और बिदा मांगे तो क्या मांगे? जो आज दशरथ ने मांगा -

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।
करब सदा लरिकन्ह पर छोहू।
दरसनु देत रहब मुनि मोहू।।

'मैं आपका सेवक हूं। तपस्या करते-करते कभी हमारी

याद आये तो हमें दर्शन देते रहना।' क्योंकि याद करके हम बार-बार रिचार्ज हो सके। साधु के भजन से, महापुरुषों की तपस्या से ये जगत चल रहा है। साधुओं के तप का भंग हो जाये ऐसा व्यवहार भी मत करना। साधुओं को ज्यादा सुविधा भी मत दो। उसको तप करने दो। यहां 'बालकांड' पूरा हुआ।

'अयोध्याकांड' में गोस्वामीजी जीवन के रहस्यों का उद्घाटन करते हैं। जीवन में ज्यादा निरंतर सुख ही सुख नहीं रहना चाहिए, दु:ख भी होना चाहिए। कैकेयी ने दो वरदान मांगे। कैकेयी महान स्त्री है। सोचो, भरत जैसे संत को जिसने जनम दिया, वो माँ कितनी महान होगी! युवान भाई-बहनों, जिनसे चित्त बिगड़े ऐसे लोगों का संग मत करना। 'मानस' में कहा, 'रहई न नीच मते चतुराई।' नीच के संग में रहने से चतुराई नहीं रहती। मूढ आदमी के हजार मत होते हैं। लेकिन हजार ज्ञानीओं का मत एक ही होता है। चाहे राम, महावीर, शंकराचार्य, बुद्ध हो। जिसका अनेक मत हो उसकी उपेक्षा भी नहीं पर प्रामाणिक डिस्टन्स रखना चाहिए।

राम-वनवास हुआ। दशरथ का प्राणत्याग। भरत का गादीत्याग। भरतजी ने कहा, मैं पद का आदमी नहीं हूं, मैं पादुका का आदमी हूं। मैं सत्ता का नहीं, सत् का आदमी हूं। हम सब चित्रकूट जाये फिर मेरे ठाकुर जो कहेंगे वो शिरोधार्य। सब जनकराजा के साथ भगवान राम से मिले और भरत ने कह दिया -

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न होई।

भरत की शरणागति। राम से एक क्षण भी अलग रह न सके, फिर भी वापस जाने का निर्णय हुआ। भरत की आंखों को देखकर राम को लगा, भरत को कुछ आधार चाहिए।

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

प्रभु ने अपनी चरण पादुका भरत को दी। पादुका चौदह साल तक अवध और भरत की रक्षक बनी। हमारे देश में पादुका की महिमा है। पादुका बोलती है; जवाब भी देती है; रोती-हंसती भी है। पादुका का ये देश है। गांधीजी को ट्रस्टीशीप का विचार जो आया वो पादुका से ही आया।

भरतजी नंदिग्राम-अयोध्या के बाहर वन में कुटिया बनाकर रहूं, ऐसा माँ कौशल्या को पूछते हैं। कौशल्या ने सोचा कि भरत इसकी इच्छा के बिना नहीं जीएगा तो वो चौदह साल जी नहीं पायेगा। कहा, नंदिग्राम-साधुवेश में रहना तुझे अच्छा लगता है तो जाओ भरत। और शत्रुघ्न को तीनों माता की जवाबदारी सोंपी है। राम अखंड सत्य है। लक्ष्मण अखंड जागृति। भरत अखंड शरणागति। शत्रुघ्न अखंड मौन। जानकी अखंड सहनशीलता। कौशल्या अखंड वात्सल्य। सुमित्रा न समझ पाए ऐसी चुपकी। भरत का हाथ पकड़कर माँ कौशल्या शत्रुघ्न के पास गई। बोली, 'शत्रुघ्न तुम्हें कुछ कहना है?' तब शत्रुघ्न ने पूछा, 'माँ, पिताजी स्वर्ग में, राम-लक्ष्मण-जानकी जंगल में, भरत नंदिग्राम में, बस, मुझे बताओ, मैं कहां जाऊं?' कोई नहीं उत्तर मिला! 'अयोध्याकांड' पूरा हुआ।

'अरण्यकांड' में चित्रकूट छोड़कर पंचवटी कुंभज ऋषि के आश्रम; गिरिराज जटायु से दोस्ती। प्रभु पंचवटी में निवास करते हैं। वहां लक्ष्मणजी राम को पांच प्रश्न पूछते हैं। राम ने जो उत्तर दिये वो 'रामगीता' कहलाती है। बाद में शूर्पणखा आई। कुछ नहीं हुआ। रावण के पास गई। उकसाया। फिर सीता का अपहरण हुआ। जटायु घायल हुआ। वो चाहता तो उसी समय रावण की आंख फोड़कर मार सकता था। पर उन दिनों युद्ध में भी धर्म था। आज धर्म में भी युद्ध आ गया! जटायु का निर्वाण। सीता को अशोकवाटिका में रखी गई। प्रभु शबरी आश्रम आये। शबरी को निमित्त बनाकर नवधा भक्ति हम सबको सिखाई। उसके बाद पंपा सरोवर गये। नारद मिले। 'अरण्यकांड' पूरा हुआ। वहां से सुग्रीव की मैत्री महावीर हनुमान से हुई।

ये तो रह गया न माँ? ये महावीर और वो महावीर में साम्य कितना था? दोनों पहाडप्रेमी थे। पहाडों पर रहते थे। यहां महावीर की माता को भी सपना आया, वहां हनुमान की माता को भी सपना आया। दोनों की खोज एक-सी, तपस्या एक-सी, दोनों की अकिंचनता, वीतरागता और दोनों का बौद्धिक स्तर एक-सा। एक ने शांतिरूपी सीता शोधी। महावीर ने अहिंसारूपी शांति-सीता देने का प्रयास किया। तथाकथित लोगों ने अपने-अपने ख्याल से दोनों को अलग खड़ा कर दिया है! धर्म में दीवार टूटे। धर्म में द्वार ही द्वार होना चाहिए। द्वार तो क्या? खुल्ला मैदान आकाश के नीचे होना चाहिए। और माँ 'वीरायतन' की भूमि में ऐसे धर्म के लिए इतनी उम्र में भी रत है, जिसका मुझे आनंद है। इसलिए मैं प्रणाम करता हूं। हनुमानजी-सुग्रीव से भेंट हुई। वाली का निर्वाण हुआ। सुग्रीव को राज। भगवान प्रवर्षण पर्वत पर चातुर्मास करते हैं। सीता की खोज की योजना बनी। हनुमानवाली टुकडी दक्षिण में गई। आखिर में सीताजी अशोकवाटिका में मिली। पर वहां जाये कौन? हनुमानजी तैयार हुए। युवानों को मेरी सलाह है, समाज के लिए, विश्व के लिए आगे बढ़ो। पर सब में जामवंत जैसे वडीलों की सलाह और अनुभव भी साथ रखे। 'किष्किन्धाकांड' पूरा हुआ।

'सुन्दरकांड' के प्रारंभ में हनुमानजी लंका गये। विभीषण को मिले। हनुमानजी जानकी तक पहुंच जाते हैं। बीच में रावण आता है। माँ से मुलाकात हुई। सीताजी ने हनुमानजी को आशीर्वाद दिया, 'तुझ पर राम बहुत प्रेम करेंगे।' हनुमानजी ने लंकादहन किया। सीताजी के पास आये। माँ ने चूडामणि दिया। हनुमानजी लौट आये। वानर-सुग्रीव से मिले। प्रभु को चूडामणि दिया। राम हृदय से लगाकर प्रसन्न हुए। समुद्र के किनारे सब लोग इकठ्ठे हुए। यहां रावण ने विभीषण का त्याग किया। विभीषण राम की शरण में आया। समुद्र के सामने तीन दिन इंतज़ार किया। फिर राम ने लक्ष्मण को कहा, 'धनुष-बाण ला।' क्या मतलब? राम चाहते हैं कि लक्ष्मण धनुष्य लेकर आये और राम ले, इतने समय में समुद्र मान जाये इतना समय दिया। सागर में जब ज्वाला हुई तब ब्राह्मण का रूप लेकर समुद्र प्रभु के शरण में आया। समुद्र पार जाने के लिए कहा, आपकी सेना में नल-नील है, जिसको बचपन में ऋषि का आशीर्वाद है। आप सेतू बनाये। 'सुन्दरकांड' समाप्त हुआ।

सेतुबंध बना। राम ने कहा, ये उत्तम भूमि है। प्रभु राम के हाथों से त्रिलोक की स्थापना हुई। ये शैव और वैष्णवों की एकता का सेतु था। ये नर और वानर, असुर सबके बीच का सेतु बना। समुद्र के पार सब गये। अंगद रावण के सामने संधि प्रस्ताव लेकर गये। संधि नाकाम। युद्ध अनिवार्य हुआ। युद्ध हुआ। वीरों का निर्वाण हुआ। आखिर में ईकत्तीस बाण से रावण का वध किया। बीस भुजा, दस मस्तक काटकर नाभि में रावण को तीर लगाया। आखिर रावण का तेज राम में समा गया। पुष्प की वृष्टि हुई। मंदोदरी आई। रावण का अग्निसंस्कार हुआ। विभीषण का राज्याभिषेक हुआ। आखिर में राम-जानकी का पुन:मिलन हुआ। प्रभु राम सब मित्रों-वानरों को साथ लेकर पुष्पक विमान में अयोध्या की तरफ लौटते हैं। 'लंकाकांड' पूरा हुआ।

'उत्तरकांड' के प्रारंभ में राम का पुन: आगमन। प्रेमराज्य की स्थापना। राम का राज्याभिषेक। अब थोड़े महावीर सूत्र, आज के लिए। 'उत्तरायतन', महावीर के अंतिम सूत्रों। मैं लिखकर लाया हूं। सबको बोलना है। पहले मैं बोलूंगा, बाद में आप लोग बोलिएगा।

ण वि मुण्डिएण समणो, ण ओंकारेण बंभणो।
ण मुणी रण्णवासेणं, कुसचीरेण ण तावसो।।

महावीर स्वामी प्रभु कहते हैं, केवल मुंडन करने से कोई श्रमण नहीं हो जाता। केवल 'ॐ ॐ' बोलने से ब्राह्मण नहीं बना जाता। वन में रहने से मुनि नहीं हुआ जाता

आदमी के जीवन में थोड़ा नियम भी होना चाहिए। तुम्हारा नियम बोलेगा। भजन बोलेगा। जताना नहीं पड़ेगा। नियम की खुश्बू बिखरने दो। नियम की अपनी खुश्बू है। और संयम का अपना रूप है। उसी का फल ज्ञान और ज्ञान का रस है परमात्मा के चरणों में प्रीति। ये तुलसी के चार प्रकार के फूल हैं। महावीर स्वामी का विग्रह बहुत सुकोमल है। महावीर प्रभु की आंखों में करुणा है। संयम की सुंदरता, नियम की खुश्बू भगवान महावीर प्रभु में दिखती और महसूस होती है।

और वल्कल आदि कपडों पहने से तापस नहीं हुआ जाता। तो क्या करे? कैसे हम मुनि बने? तपस्वी बने? उत्तर दिया-

समयाए समणो होइ, बंभचेरेण बंभणो।
णाणेण मुणी होइ, तवेण होइ तावसो।।

ये महावीर प्रभु के अंतिम सूत्र। समभाव से श्रमण, ब्रह्मचर्य से ब्राह्मण, ज्ञान से मुनि और तप से तपस्वी हो सकते हैं। तुलसी ने भी यही कहा है। हम पर करुणा कर कहते हैं, समता रखने से श्रमण हुआ जाता है। हिंदु, जैन, मुस्लिम सब में समता रखो, जो मैं 'वीरायतन' में देखता हूं। समता ही श्रमण बना है। महावीर स्वामी कृपण नहीं है। उनमें समता है। एक वस्तु याद रखना, कई सालों पर मूल जो होता है, वो कभी-कभी निकलता है। वो अभी आज 'वीरायतन' में निकला है। धर्मवीर समता रखे।

सुख दुःख सम कृत्वा लाभालाभो जयाजयो।

महावीर प्रभु ने, बुद्ध ने कहा है, यदि कोई गाली भी दे तो भी समता रखो। वो बेचारे पास जो है वही देगा! ब्रह्मचर्य से ब्राह्मण होता है। 'बंभचेरेण बंभणो।' ब्रह्मचर्य, जैसे भिक्षाचर्या, दीनचर्या; जैसे रात्रिचर्या; अच्छे राजा लोग रात्रि के समय नगर में निकलते थे। ब्रह्मचर्य मीन्स ब्रह्म की चर्या। ब्रह्म में उठना, बैठना, जीना। दुष्यंतकुमार ने कभी कहा था -

मैं जिसे ओढ़ता बिछाता हूं।
वो गज़ल आपको सुनाता हूं।

ब्रह्म में सोना, जागना; भोजन करो ब्रह्म के साथ, 'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।' उपनिषद कहता है, अन्न ब्रह्म है। संसार में रहकर भी ब्रह्ममय जीवन जो जीता है; उससे भी सरल करूं तो ॐ कार बोलने से नहीं, जो भ्रममय जीवन नहीं जीता वो ब्राह्मण। जो देहशत में नहीं जीता। फिर महावीर भगवान कहते हैं, णाणेण मुणी होइ', कोई वन में रहने से मुनि नहीं होता, ज्ञान से मुनि होते हैं। ज्ञान की उपलब्धि हो गई वो ही मुनि माना जाता है। 'तवेण होइ तावसो।' वल्कल पहनने

से कोई तपस्वी नहीं होता। तप से तपस्वी होता है। ये चार सूत्रों; अभी समय नहीं है पर इसी चार सूत्रों के संदर्भ में परोक्ष-अपरोक्ष चर्चा 'रामचरित मानस' में हुई है।

सोचिअ यति प्रपंच रति बिवेक बिलोक।

किसको यति, किसको मुनि कहोगे? ब्राह्मण कौन? वनवासी कौन? 'कानन बसई रेत।' तपस्वी कौन? जिसकी चर्चा हम कई बार कर चुके हैं। भगवान महावीर ने बड़ी उदारता से हम जैसे संसारी के लिए बहुत ही सरल सूत्र दिए हैं। तो ये आज के सूत्र। आखिर में श्रीमद् राजचंद्र।

आगळ ज्ञानी थइ गया, वर्तमानमां होय।
थाशे काल भविष्यमां, भागभेद नहीं कोई।

सूत्र दिया है। महावीर दर्शन के अखूट भंडार है। गुरुदेव महाराज ने भी स्थानन सूत्र से उठाया। ये मेरे फ्लावर्स, मेरे कोई फोलोअर्स तो है नहीं। चार प्रकार के फूल होते हैं। रूप भी हो, सुगंध भी हो। रूप हो लेकिन सुगंध न हो। सुगंध हो पर रूप न हो। रूप भी नहीं, सुगंध भी नहीं। उसी तरह स्थानन सूत्र कहता है, इन्सान भी चार प्रकार के हैं। पहला, रूप होता है, गंध बिलकुल नहीं, चरित्र की गंध नहीं। दूसरा, कई लोग रूप नहीं पर चरित्र की सुगंध बहुत होती है। जैसे अष्टावक्र; जनक भी उसके पास जाते हैं। तीसरा, रूप भी नहीं, गंध भी नहीं! कुछ नहीं! बैठा रहता है। चौथा, कई संत ऐसे होते हैं, रूप भी होता है और चरित्र की खुश्बू-सुगंध भी होती है। ऐसा कौन? 'मानस' में कहा -

समन नियम फूल फल ग्याना।
हरिपद रस रति बेद बखाना।।

संयम रूप है, नियम गंध है। बहुत सब याद आता है। किसे पेश करूं? ये अमीरात किसे पेश करूं? हम सब काल के आधीन है।

आचार्यचरण तीन शब्द देते हैं - 'अंतरात्मा', 'बहिर्आत्मा', 'परमात्मा।' परमात्मा से बहिर्आत्मा में जा सकते हैं। और बहिर्आत्मा से अंतरात्मा में जा सकते हैं। अंतरात्मा बहिर्आत्मा को ओवरटेईक करके धीरे-धीरे परमात्मा में भी जा सकता हैं। संयम से तेज आता है। जो दूसरों को तपाये नहीं, तेज देता है। 'मानस'कार का नियम गंध देता है। आदमी के जीवन में थोड़ा नियम भी होना चाहिए। तुम्हारा नियम बोलेगा। भजन बोलेगा। जताना नहीं पड़ेगा। नियम की खुश्बू बिखरने दो। नियम की अपनी खुश्बू है। और संयम का अपना रूप है। उसी का फल ज्ञान और ज्ञान का रस है परमात्मा के चरणों में प्रीति। ये तुलसी के चार प्रकार के फूल हैं। रूप है, गंध भी है। रूप हो, गंध न हो। रूप नहीं, गंध हो और रूप भी नहीं, गंध भी नहीं। और कटवा दिया बाल! हद हो गई! महावीर स्वामी का विग्रह बहुत सुकोमल है। महावीर प्रभु की आंखों में करुणा है। और जिस आंखों में करुणा होती है वो आंखें गहरी होती है। राज कौशिक का शे'र है -

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें और होती है।

थोड़े दिनो में महावीर प्रभु का जन्मदिन आता है। मैं तो 'वीरायतन' में बर्थ डे गिफ्ट देने आया हूं। एडवान्स में नब दिन की कथा ये बर्थ डे गिफ्ट है।

साया भी जो तेरा पड़ जाये, आबाद हो दिल का वीराना।
चंदन सा बदन चंदन शीतवन धीरे से तेरा ये मुसकाना ...

संयम की सुंदरता, नियम की खुश्बू भगवान महावीर प्रभु में दिखती और महसूस होती है। तो इन दिनों में भगवान महावीर प्रभु का स्मरण हम कर रहे थे; 'मानस' के साथ मिलते हुए कर रहे थे।

कथा के क्रम में आगे बढ़ें। पुष्पक विमान अयोध्या पर ऊतरा। प्रभु दौडे! प्रभु ने भूमि को प्रणाम किया। गुरु वशिष्ठजी को प्रणाम किया। प्रभु ने धनुष-बाण छोड़ दिये और दुनिया को संदेश दिया कि शस्त्र से रामराज्य नहीं आयेगा, शास्त्रवेत्ता गुरु से, ज्ञान से आयेगा। जानकी ने चरणस्पर्श किया। भरतजी को जब राम भेंटे तब कोई निर्णय नहीं कर पाया कि वनवास किसका था? चौदह साल से हजारों लोगों जो राम के लिए तड़पते थे, वो सबको साक्षात्कार कराने के लिए प्रभु ने ऐश्वर्य प्रकट किया। ब्रह्म का साक्षात्कार सबको हुआ। महल की ओर चलते सबसे पहले कैकेयी के भवन

प्रभु गये। माँ रो पडी! प्रभु बोले, माँ, मैं जनम-जनम का तेरा ऋणी हूं। तूने मुझे वन में न भेजा होता तो सत्य की ताकत, सीता का सत्य, हाथ की ताकत, सेवक कैसा होता है और भाई कैसा होता है वो मुझे कैसे पता चलता? आखिर में माँ कौशल्या को मिले। निर्णय किया गया कि ममता की रात बीच में आई तो रामराज्य चौदह साल धक्का लगकर पीछे रह गया! अब आज ही अभी ही राजतिलक हो जाये। चौदह साल पहले जो वस्त्र-अलंकार धारण करने थे वो आज शृंगार किया। राम के पास सिंहासन आया। सत्ता को सत्य के पास आना चाहिए। पृथ्वी को, सूर्य को, गुरु को, प्रजाजनों, ब्राह्मणों, माताओं को प्रणाम करते हुए परमात्मा गादी पर बिराजमान हुए। विश्व को रामराज्य-प्रेमराज्य देते हुए वशिष्ठजी ने राजतिलक किया-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

चारों वेद बंदीजन के रूप में रामदरबार में आये। प्रभु शंकर, त्रिभुवन देव अपने असली रूप में दरबार में आये। रामराज्य में रुचि तो केवल शंकर जैसे फकीर को-संतों को होती है। दिव्य रामराज्य की स्थापना हुई, जो गांधीबापू चाहते थे और हम भी चाहते हैं। छः महिनों के बाद मित्रों-वानरों को बिदाई दी। केवल हनुमानजी रहे। समयमर्यादा पूरी हुई। प्रभु की नरलीला बताते हुए जानकीजी ने दो पुत्रों लव-कुश को जनम दिया। रघुकुल के वारीसों का नाम देकर, रामकथा का विराम कर देते हैं। जानकी का दूसरी बार का वनवास, जिसमें दुर्वाद, अपवाद, विवाद है, तुलसी ने वो प्रसंग नहीं लिया है। तुलसी ने कहा, संवाद की जरूरत है। लोकहृदय में सीता-रामजी बैठ जाये फिर जुदा नहीं करते हैं।

'उत्तरकांड' में 'कागभुशुंडि रामायण' है और आखिर में गरुड को सात प्रश्न के सात उत्तर भुशुंडि देते हैं। जो सातों सोपान का निचोड है और भुशुंडि कथा को विराम देते हैं। इधर याज्ञवल्क्य ने भरद्वाजजी के सामने विराम दिया कि नहीं वो स्पष्ट नहीं है। मुझे लगता है, गंगा-जमुना-सरस्वती प्रयाग में जब तक बहती रहेगी ये रामकथा भी चलती रहेगी। तीसरा, कैलास की पीठ पर शिव ने पार्वती को पूछकर कथा को विराम दिया। पूज्यपाद तुलसीदासजी अपने मन को और संतगणों को कथा सुनाते हुए विराम देते हुए आखिर में बोले -

एहिं कलिकाल न साधन दूजा।
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।।

तीन सूत्र दिए। राम का सिमरन, सत्य को-राम को गाना बराबर प्रेम करना। जो प्रेम करेगा वो गायेगा। और सुनना; कथा करुणा के बिना सुनाई नहीं जाती। प्रभु की करुणा होती है। सत्य, प्रेम, करुणा ये तीन सूत्रों दिए। 'वीरायतन' की भूमि में भगवान महावीर की चेतना की कृपा पाकर माँ का वात्सल्यभरा आशीर्वाद लेकर मेरी व्यासपीठ नव दिन के लिए मुखर हुई थी। वो कथा को विराम की ओर ले चलते हैं तब बाप! मेरा हरवक्त का अनुभव है, नव दिनों में सबकुछ कर डाला लेकिन सबकुछ रह गया!

'मानस-महावीर' रामकथा मैं आप सब के सामने गा रहा था। इतना ही करना है नव दिन में। कोई सूत्र आपकी आत्मा को छू गई हो तो उसे ग्रहण कर पकड़ लीजिएगा। जीवन में कभी कोई समस्या पैदा होगी तो ये सूत्र आपका मार्गदर्शक बनेगा। और सबसे बड़ा हमसफर सद्गुरु होता है। कोई साथ नहीं रहेगा, लेकिन अनंत काल तक वो ही साथ देता है। आशीर्वाद तो माँ ने ओलरेडी दे दिए। भगवान महावीर के आशीर्वाद से सुंदर प्रेमयज्ञ निर्विघ्न पूरा हुआ। यजमान परिवार, 'वीरायतन' संस्था, स्वयंसेवक सभी ने अच्छी व्यवस्था की।

प्रभु की कृपा भये सब काजु।

सब कार्य पूर्ण होता है ये मानव के बसकी बात नहीं। कोई निमित्त बना देता है। प्रेमयज्ञ का पुण्य माँ के साथ संत, साध्वी और वडील आप सबके साथ आईये, भगवान महावीर प्रभु के चरणों में समर्पित करते हैं, प्रभु, ये तेरा साधना तीरथ है तो तेरी चेतना ने हमें जागृत किया है। दाता, हम आपको क्या दें? आपकी जन्मजयंती आ रही

मानस-मुशायरा

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए।
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।
– दुष्यंतकुमार

फ़ांसिले सदियों के एक लम्हें में तय हो जाते,
दिल मिला लेते अगर हाथ मिलानेवाले।
– बशीर बद्र

वो जहां भी रहेगा, रोशनी लुटायेगा।
चरागों को अपना कोई मकां नहीं होता।
– वसीम बरेलवी

उसका फ़र्ज क्या वो अहेले शियासत जाने।
मेरा पैगाम महोब्बत है जहां तक पहुंचे।
– जिगर मुरादाबादी

ज़रा मुहतात होना चाहिये था।
बगैर अश्कों के रोना चाहिये था।

●

हमारा हाल तुम भी पूछते हो?
तुम्हें मालूम होना चाहिए था।
– फ़ेहमी बदायूंनी

सब भर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का।
दिन भर सुनाऊंगा तुम्हें किस्सा फ़कीर का।
हिलने लगे हैं तख्त, उछलने लगे हैं ताज।
शाहों ने जब सुना कोई किस्सा फ़कीर का।
– विजेन्द्रसिंह 'परवाज़'

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें और होती है।
– राज कौशिक

क्वचिदन्यतोऽपि

शिक्षक में मुनि का मौन और ऋषि का वक्तव्य होना चाहिए

श्री महुवा तालुका प्राथमिक शिक्षक संघ के उपक्रम में आयोजित कार्यक्रम में मोरारिबापू का उद्‌बोधन

हनुमानजी की कृपा से, संतों के आशीर्वाद से, आपके सद्‌भाव से इस स्थान पर प्रति वर्ष आयोजित कार्यक्रम में निवृत्ति प्राप्त महुवा तालुका के शिक्षकों की हम वंदना करते हैं। सबको मेरे प्रणाम। जिन्होंने राज्यभर में शिक्षकरूप में कुछ विशेष किया है, ऐसे शिक्षकों को गुजरात राज्य प्राथमिक शिक्षक संघ के होद्देदारो ने विवेकबुद्धि से ग्यारह विशेष व्यक्तित्व को अंकित किए हैं। हमने उनकी वंदना की। उनको भी मेरे प्रणाम। कितना अच्छा कहा गया! मुझे यह पसंद है। इसमें से प्रेरणा लेकर अच्छा जीवन जीने की इच्छा हो पर समय का अभाव होता है। यहां सब वक्त पे होता है। मैं जहां जाउं शिक्षकगण कहते हैं, मोरारिबापू प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक थे। इसका हमें गौरव है। यह मेरे लिए बड़ा एवोर्ड है। नागरिक बेंकवाले ऐसा कहे कि मोरारिबापू ने हमारे यहां से एक बार सात सौ रूपये की लोन ली थी। पर एक साल बाद पास की थी यह तो कहा नहीं जा सकता! यह तो मैं आज बताता हूं! मैं कहता हूं भाई, अब मैं बेंक का सभ्य नहीं हूं। मेरा नाम निकाल दीजिए। वे नहीं निकालते! कहते हैं, यह हमारा गौरव है। तलगाजरडा ऐसा कहे कि मोरारिबापू यहां जन्में यह हमारा गौरव है। कई लोग कहे कि हमारे गांव में पहली कथा की इसका हमें गौरव है। यह सच नहीं। पर मुझे कब गौरव होगा? इसका अर्थ गौरव नहीं है, ऐसा नहीं। शिक्षक कहे, बापू हमारे शिक्षक; इसका मुझे आनंद है। साहब, मुझे गौरव तो है। पर विशेष गौरव तो तब ही होगा जब आप एक चित्त श्रवण करते हैं इसमें हम ज्यादा करे, चाहे सरकारी कार्यक्रम में हो या न हो पर अपनी चित्त की सरकार को आदेश मान कर कुछ अधिक कर दिखाए तो उस दिन मुझे विशेष गौरव हो। ऐसा मत माने कि आपको बापू नगण्य मानता है। गौरव तो है ही।

मुझे शिक्षक होने का गौरव है। शिक्षक होने के सिवा और कोई हैसियत भी नहीं थी। पी.टी.सी.पूरा कर सी.पी.टी.सी. भी हुआ। मुझे पहली नोकरी स्वामीनारायण स्कूल, महुवा में स्वामीनारायण का मंदिर है वहां मिली। नगरपालिका मकान किराये पे लेती थी। वह स्वामीनारायण स्कूल कहलाती थी। स्कूल नं.३ में नौकरी मिली। मुझे नौकरी करनी पड़ती थी क्योंकि परिस्थिति ऐसी थी। जिल्ला पंचायत ने ऑर्डर दिया था। उडास गांव था। अपडाउन करना था और साईकल की हैसियत नहीं थी! मैं नौकरी पे गया पर जीव किसी दूसरी दिशा को खोज रहा था। मैं स्कूल में ज्यादा रह न सकूं। मैं हृदय से कुबूल करता हूं कि मैं ध्यान नहीं दे पाता था। नौकरी करने की मजबूरी थी। मेरे आचार्य वालजीभाई देवजीभाई कूकडिया थे। वे संक्षेप में हस्ताक्षर करते थे वा.दे.कूकडिया। यह हमें याद है। हमारे गांव के समधी है! बेचर लाडवा, मेरा सहपाठी, जे.पी. में प्रोफेसर था। यह हमारे गांव के साथ संबंध था। में पगार में कटौती कर कथा में जाता था। उस वक्त केज्युअल का रिपोर्ट फ़ाड़ने का रिवाज नहीं था! मैं जनता का नमक खाता था। सो नमकहरामी नहीं करता था। यह मेरे खून में नहीं था। दिल मानता नहीं था। मेरे आचार्य मुझ पर गुस्सा करते थे। ये आचार्य का आसिस्टन्ट और ये मु.शि. और आसि.शि. मुख्य शिक्षक और आसिस्टन्ट शिक्षक! गुस्से के कारण मुझे कायमी नहीं किया! वालजीभाई का आभारी हूं कि मुझे कायमी नहीं किया इसलिए मैं दूसरी जगह कायमी हो गया! यह १९६६-१९६७ की बात है। उन्होंने मुझे गुस्से में एक बार कहा, 'आप काम नहीं करते! कथाओं में चले जाते हैं!' 'पर साहब, मैं पगार कटौती पर जाता हूं। मैं गलत नहीं करता। आप ही छुट्टी देते हैं।' 'वह तो ठीक है। आप सामने आते हैं तो मैं इन्कार नहीं कर सकता! मुझे एक बार कहे, 'मुझे आपकी क्लास एटेन्ड करनी है।' मैं प्रथम कक्षा में पढ़ाता था। उनके आगे मेरी हैसियत नहीं थी। हमें तो काम से काम।

करारविन्देन पदारविन्दं मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम्।
वटस्य पत्रस्य पुटेशयानं बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि।।

मुझे कहा, आप 'मानस' की कथा कहते हो? साल में दो-तीन बार होती थी। मुझे कहा, 'मानस' शब्द तो मानसशास्त्र के लिए भी है तो मनोवैज्ञानिक रीति से विद्यार्थियों को कुछ कहे। उस समय मैं भी क्लास में रहूंगा। मैंने कहा, ठीक। कुर्सी खाली कर दी। कुर्सी खाली कौन करे? कहा, साहब, बैठिए। प्रथम कक्षा के विद्यार्थी मुझे बहुत चाहते थे। ज्यों कमल का 'क', खटारे का 'ख', गणपति का 'ग', घडी का 'घ', चकली का 'च', छत्री का 'छ', जमरूख का 'ज', झबले का 'झ', टट्टु का 'ट', ठळिया का 'ठ', डगला का 'ड', ढगली का 'ढ', 'ण' किसीका नहीं, तलवार का 'त', थड का 'थ', दडा का 'द', धजा का 'ध', नगाडे का 'न', पतंग का 'प', फानस का 'फ', बकरे का 'ब', भमरडे का 'भ', मिर्ची का 'म', यति का 'य', रथ का 'र', लखोटे का 'ल।' मैंने लड़कों से कहा, 'प' किसका? लड़के ने कहा, साहब! ये मुझे 'साहब' कहते थे इसका आनंद था। ये जब 'साहब' कहे मुझे कबीरसाहब याद आए। लडके ने सच्चा जवाब दिया पतंग का 'प'; मैंने कहा, शाबाश! मैंने साहब के सामने देखना छोड़ दिया। क्योंकि वे अधिकारपूर्वक देख रहे थे! उनकी आंखों में तिरस्कार था! विनोबाजी ने एक सुंदर शब्द दिया कि संस्कृत वाङ्मय इतना समृद्ध है कि दुनिया में ऐसी समृद्धि किसी गिरा में नहीं है। एक वाणी की या भाषा की इतनी समृद्धि नहीं है। लेकिन उसमें कहीं 'अधिकार' शब्द नहीं है; 'कर्तव्य' शब्द है। शिक्षक के लिए महामंत्र होना चाहिए कि ये अधिकार पेश न करे। यहां शिक्षक कम विद्या सहायक ज्यादा आते हैं! उनको न्याय मिलना चाहिए। विलंब होता है। जो भी हो पर हम कर्तव्य निभाने आए हैं। उनका अधिकार के साथ मेरे प्रति ऐसा व्यवहार था कि मैं कुछ भी काम नहीं करता था! उन्हें था कि यह मेरे सामने क्या करेगा?

मैंने दूसरे लडके से पूछा 'प' माने? उसने कहा 'प' माने परिणाम। यह नया हुआ! मैंने 'शाबाश' कहा। फिर तीसरे को पूछा। उसने कहा, पायदान का 'प।'

'शाबाश!' चौथे ने कहा, पलंग का 'प।' पांचवें ने कहा, परमात्मा का 'प।' अधिकारी की आंखें थोडी सौम्य हुई। उन्हें भी इतना सारा पता नहीं था! मेरे सामने देख जरा हंसे। आप जरा हंस दे तो अमरिका के प्रेसिडन्ट बन जाय! फिर साहब की जिज्ञासा बढ़ी यह क्या 'प' 'प' कर रहे हैं? मैंने कहा, मैं 'मानस' गाता हूं। मानसिक अभ्यास करता हूं। पतंग का 'प' तो अपने यहां है पर इस लड़के की मानसिकता ने पतंग का 'प' ही पकड़े रखा। इसका अर्थ है कि अवसर मिलने पर मैं होमवर्क करूं, स्वाध्याय करूं। मेरे माता-पिता को परमात्मा ऐसी शक्ति दे कि मुझे उच्च शिक्षण के लिए भेजे। मैं आकाश में किसीकी भी पतंग काटे बिना उडान भरूं। पतंग की तरह उड़ने का उसका मनोरथ था। मैं विकसित बनूं, उडान भरूं पर किसीकी पतंग न काटूं। मैं समझ नहीं पाता कि लोग एक-दूसरे की पतंग क्यों काटते हैं? इतना बडा आकाश! आप जहां चाहे वहां उड़ाईये! पर उड़ाने की बजाय काटने में विशेष आनंद मिलता है! यह हवाई जहाज में ओक्सिजन लेने की बात नहीं है। परमात्मा का दिया इतना बड़ा प्राणवायु है। अपने फ़ेफ़ड़े में जितनी ताकत हो इतना लीजिए। दूसरों की पतंग मत काटिए। सब जानते हैं, कट जाने पर पतंग की हालत क्या होती है? 'कटी पतंग' का गीत है-

मेरी ज़िंदगी है क्या एक कटी पतंग है...

यार! ये सब पुराने संस्कार बाहर आ रहे हैं! पढ़ना था तब पढ़े नहीं, यार! थर्ड क्लास में फिल्में ही देखी! थर्ड क्लास में बैठने की दो पट्टियां थी। सेकन्ड क्लास में गद्दीथी, बेन्चीज थी। फर्स्ट क्लास में अच्छी सुविधा थी। पर वे तो हमारी ओर देखे भी नहीं! हम एकदम परदे के नजदीक बैठे! रूपया देकर दूर क्यों बैठे? इस तरह फिल्म देखने में रहे! 'आई मिलन की बेला' फिल्म आई थी। उसका गीत-

तुम्हें ओर क्या दूं मैं दिल के सिवा...

सायराबानु है ना? शिक्षकों तो पता होना चाहिए! आशा पारेख, राजेश खन्ना? पहले तय कीजिए! मुझे हर्ज नहीं। मेरे पास समय है। हेतुकथन निकालिए! राजकपूर की फिल्म थी। साम्यवादी विचार था। 'आई मिलन की बेला।' और राजकपूर बहुत प्रसिद्ध थे।

तुम्हें ओर क्या दूं मैं दिल के सिवा,
तुम को हमारी उमर लग जाय...

साहब! फर्स्टक्लासवाले इक अन्नी-दुअन्नी फेंके और थर्ड क्लासवाले उठाये! मैंने कभी नहीं लिया! यह सत्य है। मैं देखता था। वह उठानेवाले इन्टरवल में उस सिक्के से खारी सींग-चना लेते थे। हाँ, मैंने खाये थे! उसने दिए तो ना कैसे कहे? साधु ना तो नहीं कह सकता। अमरदासबापू कहते थे-

साधुजन को स्वाद न भावे,
छाश न होय तो दूधथी चलावे!

हमें ऐसा कुछ नहीं! मकानमालिक कहे, छाछ नहीं है। कोई बात नहीं, हम दूध पी ले! अरे! वाह रे कारीगर! सींग-चना खाए थे! 'कटी पतंग' का गीत था-

मेरी ज़िंदगी है क्या एक कटी पतंग है...

हम किसीकी पतंग काटे, कोई हमारी काटे! फिर वह बबूल में अटक फटती हैं, फैलती है! उसी तरह जिंदगी है। मैंने कई बार कहा है। मुझे समझ में नहीं आता, जो काटते हैं वो बगलवाले ही होते हैं! तलगाजरडा की पतंग भाद्रोडवाला काट ही न सके। तलगाजरडावाला ही काटे। समानधर्मी ही काटते हैं! मुझे लड़के की बात पसंद आई साहब! पतंग का 'प'; उसे उड़ान भरनी है, कुछ पाना है। मैंने साहब से कहा, मैं इसमें से इस लड़के से सीखा हूं। मैं कुछ पढ़ाता नहीं पर काम का सीखता हूं! दूसरे लडके ने परिणाम का 'प' कहा। उसे परिणाम में रस है। पास होना है। दूसरी, तीसरी कक्षा में जाना है अत: परिणाम को लक्ष्य रख उसकी मानसिकता चल रही थी। स्वाभाविक है कि आदमी को परिणाम पर ध्यान देना चाहिए। इस मार्ग पर कौन-सा लक्ष्यवेध करेंगे? उसने परिणाम का 'प' कहा। मैं भी सीखा। तीसरे ने कहा, पायदान का 'प।' एक के बाद एक स्टान्डर्ड में कदम रखने थे। उसे इसमें रस था। चौथे ने कहा, पलंग का 'प।' पसंद आया। होमवर्क की ऐसी की तैसी! दफ्तर फेंक पड़े पलंग में! उसे प्रमाद में रस था। मेरा उपनिषद कहता है-

स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।

शिक्षकों को प्रवचन में प्रमाद नहीं करना है। विद्यार्थियों को स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए। मेरी तलगाजरडी आंखों से शिक्षक का एक विज़न देखूं; यह अपेक्षा नहीं, मैं अपने विचार आप तक रखता हूं। एकहत्तरवां साल चल रहा है। एकहत्तर साल की आंख शिक्षक को जिस तरह देखती है। अब लेन्स चढाता हूं कथा में तो तो भी यूं-यूं दिखाई देता है! डोक्टर हंमेशा कहते हैं, चेक कराईए। आप माने न माने पर अति व्यस्तता के कारण चेक नहीं करा पाता! इसीलिए समारंभ में समयपालन के लिए खास कहता हूं। एक घंटें का हो तो उसीमें पूरा कीजिए। दो घंटा हो तो उसीमें पूरा करे। प्रत्येक वक्ता कहता है, हमें बापू को सुनना है! मैं भी उनको सुनने आया हूं! पर तू माईक दे तो मुझे सुने! यहां भगवत्कृपा से सब संतुलित है।

मेरे शिक्षक भाई-बहनों, मेरे परिवारजन, हम एक ऐसा शिक्षक देखना चाहते हैं। मैं निराशावादी नहीं हूं। मैं विश्वास पर जीता हूं। शायद यह विज़न, यह उम्र पूरी हो जाय वहां तक न दिखे तो चिंता नहीं। दूसरा जन्म तलगाजरडा में लूंगा। फिर से वही दर्शन शुरू करेंगे। जिस शिक्षक में चार लक्षण है ऐसे शिक्षक को देखना हैं। मेरे देश का शिक्षक, मेरी भाषा का शिक्षक, मेरे गुजरात का शिक्षक, मेरे राष्ट्र का शिक्षक; सीमा तोड दे ऐसा विश्वशिक्षक 'तुम्ह त्रिभुवन गुरु', भगवान शिव त्रिभुवन के गुरु; भगवान श्री कृष्ण 'कृष्णं वंदे जगद्गुरुम्'; मेरी आंखें ऐसा शिक्षक चाहती है। शिक्षक में मुनि का मौन होना चाहिए। चाहे वन में या भवन में रहे। पगार अच्छे हैं! आप उपर की मंज़िल ले। मैं शिक्षक के पगार जानना नहीं चाहता। जानूं तो लगे इस व्यवसाय में गए इससे अच्छा था शिक्षक रहना! यह तो मुफ्त में है! खैर! ज्यादा मिलना चाहिए। यह नींव का काम है। रजिस्टर में हाजिरी लिखाए उसे कम और रास्ते पर मजदूरी करे उसे ज्यादा मिलना चाहिए। यह अमरिकन पद्धति है। यहां उल्टा है! साईकल-मोटरसाईकल पर आकर झूठी हाजिरी दे जाय उसे ज्यादा मिले! यह सरकारी पद्धति बदलनी चाहिए। मोदीसाहब को बदलनी चाहिए। मुझे सबके साथ डिस्टन्स है। मैं गांधीनगर कोई काम लेकर नहीं गया हूं। शिक्षकसंघ के साथ गया हूं। प्रवचन देने गया हूं। सचिवालय से मेरा क्या लेना-देना? उन्हें कथा चाहिए तो आए तलगाजरडा! मैं गर्व से नहीं कहता पर उन्हें यहां आना अच्छा लगे इसलिए आमंत्रण देता हूं। मुझे अभिमान नहीं है। मैं कहीं नहीं जाता। मुझे ऐसा कोई काम नहीं है।

शिक्षक भले अच्छे भवन में रहे। मकान अच्छा होना चाहिए। क्यों न हो? उनके पास अच्छा मकान और गाडी हो ऐसा मेरा पक्ष रहा है। दिलीपबापू ने ठीक कहा, लडके दरवाजे खोलते हो और लगे साहब आए है! यह अच्छा है पर शिक्षक गाडी में आयेगा तो कैसे पढ़ायेगा यह एक सवाल है! खैर! उत्कर्ष होना चाहिए। जगत में शिक्षक डेवलप होना चाहिए। पर शिक्षक के पास मुनियों का मौन होना चाहिए और ऋषि का वक्तव्य होना चाहिए। वह बोले तब लगे पायजामा और बुशर्ट पहने एक ऋषि बोल रहा है! ऋषि-मुनि के गणवेश नहीं होते। उनके विचार युनिवर्सल होते हैं। हमारे यहां 'पालन-पोषण' शब्द है। शास्त्रीय शब्द 'योगक्षेम' है। पालन पिता और पोषण माता करती है। शिक्षक में पितृत्व-मातृत्व होना चाहिए जिसे बच्चों का पालन-पोषण हो। पालन, पोषण, मौन और ऋषि वक्तव्य ये चार स्तंभ है। इस मंडप के नीचे जो शिक्षक फेरा लगाता होगा; मैं तलगाजरडा के साधु के रूप में कहता हूं, उसके चारों ओर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष फेरे लगाते होंगे! ये चार-चार तत्त्व उनके आसपास फेरे लगाते हैं।

चौथे लड़के ने कहा कि साहब, पलंग का 'प।' वह प्रमादी था। यह उसकी मानसिकता थी। पांचवें ने कहा, 'परमात्मा' का 'प।' आखिर केन्द्र तो परमात्मा है। चाहे अल्लाह, ईश्वर, बुद्ध, महावीर हो, नामी-अनामी, आकारी-निराकारी हो; क्या फ़र्क पड़ता है? गिरनार में फकीर जैसा मुस्लिम है, दातारी है। वो शकीलसाहब की गज़ल गाता है-

तू निशाने बेनिशान है।
तुझे याद करना बंदगी है।

तू आकार है, निराकार है, क्या फ़र्क पड़ता है? कोई मूर्ति को पूजता है, कोई निराकार को पूजता है। पर कोई

ऐसा परमतत्त्व है जो परमात्मा का 'प' बनकर हमारे केन्द्र में रहता है। मैं ज्यादा प्रशंसा नहीं करता। पर मेरी यह बात निश्चित है कि भले हम उन्हें बराबर चरितार्थ नहीं कर सकते; उनके अपने कारण होंगे, परिस्थिति रही होगी। जो भी हो। हमें पृथ्थकरण नहीं करना है। लेकिन मैं शिक्षक को कभी विषयी नहीं मानता। शिक्षक सिद्ध हो ऐसी भी मेरी इच्छा नहीं है। शिक्षक आजीवन साधक रहना चाहिए। अपना कार्य साधक का है। सिद्ध होने के बाद पतन का भय है। विषयी खड्डे में पड़ा रहता है। साधक 'मध्ये महाभारतम्' है। मध्यम मार्ग है। शिक्षक कायमी साधक हो। 'प' परमात्मा का तत्त्व है। अभी यहां सर्वधर्म प्रार्थनासभा हुई। जो विनोबा परंपरा में गाई जाती है-

ॐ तत्सत् श्री नारायण तू, पुरुषोत्तम गुरु तू...

शिक्षकों को यह पढ़नी चाहिए। एक-एक शब्द की व्याख्या विनोबाजी ने की है। कभी पुस्तिका से पढ़ लेना। कितनी वैश्विक व्याख्या की है! सबके केन्द्र में परमात्मा का 'प' होना चाहिए। हम सबके बीच क्या परमात्मा का 'प' नहीं होना चाहिए? मैं पगार कटौती के साथ छुट्टी लेकर जाता हूं। मैं न पलंग का आदमी हूं न तो पतंग काटनेवाला आदमी हूं। मुझे किसी पायदान चढ़कर पद नहीं लेना है। मुझे कोई परिणाम नहीं चाहिए। मैं जो गा रहा हूं इसका फल, परिणाम क्या है, मुझे खबर नहीं! मेरे तो केन्द्र में परमात्मा का 'प' है। मेरे तलगाजरडा के राममंदिर में मेरा हरि है; मेरा 'प' है। हम सबमें परमतत्त्व का 'प' केन्द्र में रहे। फिर ऐसा कुछ करते रहेंगे तो मुझे ऐसा लगता है हमें डकार आयेगी, हमें तसल्ली मिलेगी; हमें 'कृतार्थोऽहं न संशय:।' ऐसी पुष्टिमार्गीय डकार आयेगी। मैं नेगेटिव नहीं सोचता, न आलोचना करता हूं। कई लोग मुझे कहते हैं, यह जैन समाज है; उनके भोजनालय में उसीकी जाति के लोग ही भोजन करे! ऐसी टीका होती है। मैं कहता हूं, यही भी अच्छा है। इतना तलगाजरडा पर कम बोझ रहे! ऐसा बटवारा है! आप नेगेटिव न बने। मेरी एक वस्तु आप तक पहूंचे। उपदेशक मत बनिए। कोई नहीं सुधरता। मेरा समाज जैसा भी है स्वीकार्य है।

सीताने घोर जंगलमां अमे पुत्रो जणाव्या छे।
अने कृष्णने भीलना बाणे अमे पोते हणाव्या छे।
आ कलम धूजे कथा लखता अमारी पापपोथीनी।

कैसे-कैसे अवतारी पुरुष हुए! उपदेश से क्या फ़र्क पडे? बुद्ध-महावीर ने स्वीकार किया। राम ने अहिल्या-शबरी सबका स्वीकार किया। कृष्ण ने सबका स्वीकार किया। स्वीकारक बनना पड़ेगा।

कल पुष्टिमार्गीय कार्यक्रम अमरेली में था। पुष्टिमार्ग के परमाचार्य बिराजमान थे। इन्दिरा बेटीजी महोदया अब हयात नहीं है; उनके स्मरण में एक प्रकाशपर्व का आयोजन था। मुझे बोलना था। कला-विद्या के प्रति जो मेरा स्वीकार है। वहां दो मदारी आए। मुझे देखकर मुरली ऊंची की! मैंने संकेत किया, परम पूज्य महाराजश्री बैठे हैं! नहीं तो तेरा यह खेल करा दूं! मुझे तो स्वीकारना है। दो-तीन बार खडा हुआ! मैंने कहा, रहने दे, यहां दूसरी मुरली बजे, अपनी मुरली बजने न दे! तू धीरज रख! पर फिर खडा हो जाय! उससे रहा न जाय! सब पूरा कर जा रहा था तब मैंने उसे इशारा किया, तू गाडी के पास आ जा! मैंने कहा, यहां नहीं! तू तलगाजरडा आ जा। अमरिकावाले बैठे होंगे तो उनको भी जाने के लिए कह दूंगा! लंदनवाले या कोई डेइट लेने आये होंगे तो सबको जाने के लिए कह दूंगा! तब तुम कला दिखाना। सबका स्वीकार करो। मुझे कई लोग कहते हैं, आपके पास आते हैं ये ऐसे-वैसे हैं! मैं कहता हूं, मेरा काम यही है। सबका स्वीकार करना। 'आनो भद्रा क्रतवो...' वेदऋषि कहते हैं, जहां से शुभ मिले, स्वीकार कीजिए। खिड़कियां खुली रखे। यह जगत विराट शास्त्र है। एक-एक पृष्ठ भरा हुआ है। हमें लेना चाहिए। हमें स्वीकारना है। बाप! आप सब साधक बनकर यह कर रहे हैं। करते रहिए। पैसे थोड़े कम मिले या मिले न मिले; जल्दी आपकी सब हूंडी स्वीकृत हो ऐसी श्याम गिरधारी से बिनती करता हूं।

('श्री महुवा तालुका प्राथमिक शिक्षक संघ' द्वारा तलगाजरडा (गुजरात) में आयोजित निवृत्त शिक्षकों का सन्मान तथा 'चित्रकूट एवोर्ड' समारोह अवसर पर प्रस्तुत वक्तव्य)

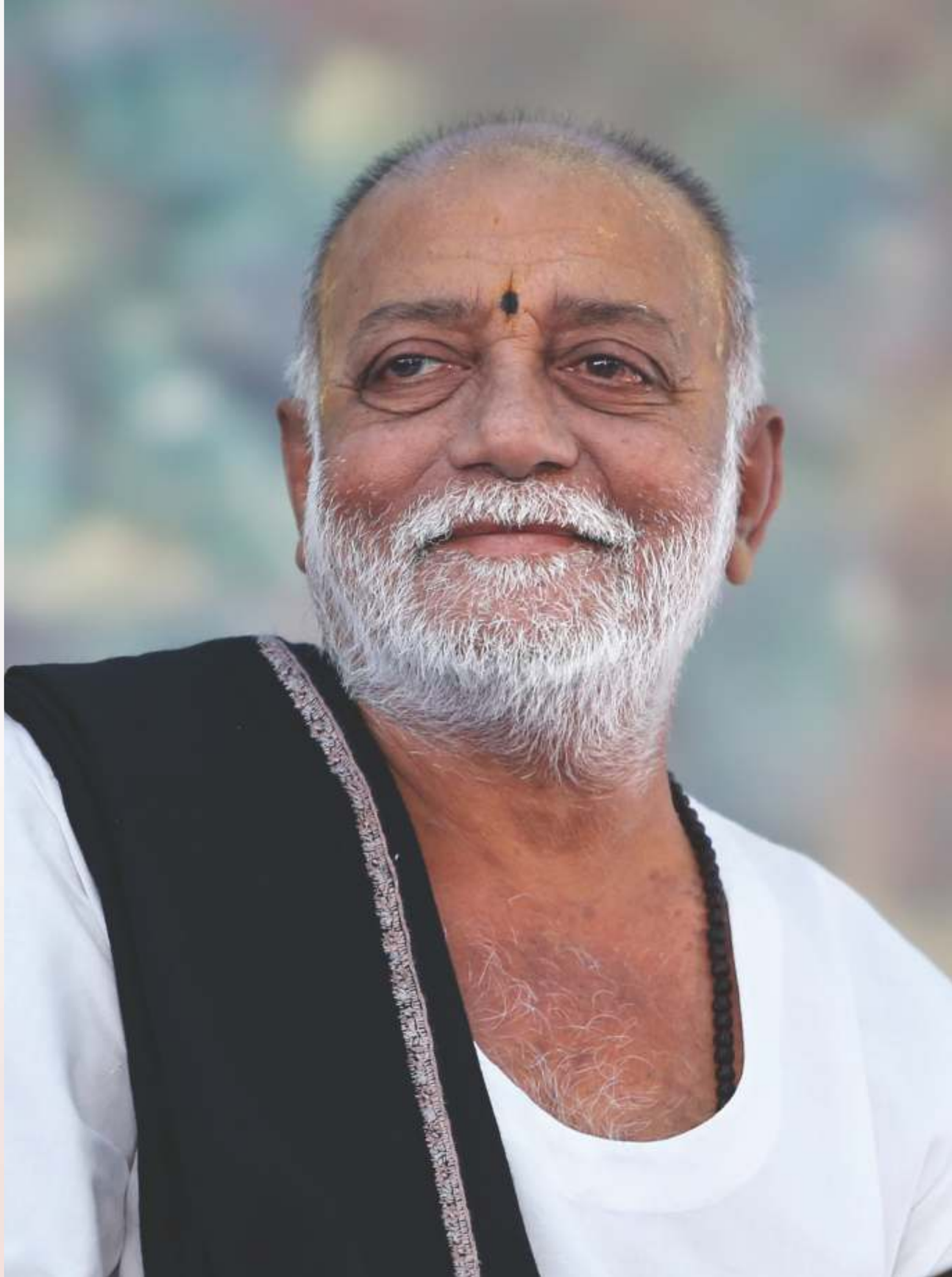

ॐ नमो अरिहंताणं ।
ॐ नमो सिद्धाणं ।
ॐ नमो आयरियाणं ।
ॐ नमो उवज्झायाणं ।
ॐ नमो लोए सव्व साहूणं ।
ऐसो पंच नमोक्कारो सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवई मंगलं ।

॥ जय सीयाराम ॥